Drishti IAS

एडिटोरियल

(संग्रह)

जुलाई 2023

Drishti, 641, First Floor,
Dr. Mukharjee Nagar,
Delhi-110009
Inquiry (English): 8010440440,
Inquiry (Hindi): 8750187501
Email: help@groupdrishti.in

अनुक्रम

- दिल्ली सेवा अध्यादेश पर खींचतान 3
- तरलता प्रबंधन दुविधा 6
- RBI का तरलता प्रबंधन: 8
- इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण की संभावनाओं को उजागर करना 9
- भारत एवं चीन की आर्थिक संवृद्धि की तुलना 12
- राज्यों की राजकोषीय स्थिति 14
- FRBM अधिनियम क्या है ? 16
- भारत के लिये जनसांख्यिकीय संरचना का लाभ उठाने का अवसर 19
- भारतीय रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण 22
- राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन (NRF) 25
- उत्तर भारत में बाढ़ 27
- भारत और यूरोप: रणनीतिक साझेदारी का एक नया युग 30
- वित्त आयोग 33
- विश्व भर में महत्त्वपूर्ण खनिजों की मांग 35
- संवैधानिक नैतिकता और व्यक्तिगत संबंध 38
- भारत में बाढ़ का कहर 40
- भारत में अप्रूवल वोटिंग का दायरा 43
- PACS-FPO एकीकरण के अवसरों का आकलन 46
- बहु-आयामी गरीबी उन्मूलन हेतु रोडमैप 49
- फ्रांँस : भारत का वास्तविक सहयोगी 51
- भारत की खनन क्षमता 53
- भारतीय रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण 56
- भारत में महिला आयोग 58
- भारत की चक्रीय क्रांति 61
- संतुलन की ओर कदम: अंतर्राज्यीय जल विवाद 64
- भारत में जाति आधारित हिंसा की निरंतरता तथा निहित चिंताएँ 67
- वन संरक्षण 69
- दृष्टि एडिटोरियल अभ्यास प्रश्न 72

दृष्टि The Vision

नोट :

दिल्ली सेवा अध्यादेश पर खींचतान

मई 2023 में राष्ट्रपति द्वारा दिल्ली में सेवाओं के प्रशासन के लिये एक व्यापक योजना प्रदान करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार (संशोधन) अध्यादेश, 2023 [Government of National Capital Territory of Delhi (Amendment) Ordinance, 2023] प्रख्यापित किया गया।

यह अध्यादेश तब लाया गया है जब सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिल्ली में पुलिस, लोक व्यवस्था और भूमि मामलों को छोड़कर सभी सेवाओं का नियंत्रण निर्वाचित सरकार को सौंपने का निर्णय दिया गया था। यह अध्यादेश राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में ग्रुप-A अधिकारियों के स्थानांतरण और उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई के लिये एक राष्ट्रीय राजधानी सिविल सेवा प्राधिकरण (National Capital Civil Service Authority- NCCSA) स्थापित करने का ध्येय रखता है।

अध्यादेश जारी होने से दिल्ली के उपराज्यपाल को सेवाओं पर नियंत्रण का अधिकार मिल गया है, जिसने अधिकारियों के स्थानांतरण और पदस्थापन के मामलों में निर्वाचित सरकार के अधिकार को चुनौती दी है। यह घटनाक्रम निर्वाचित सरकार और उपराज्यपाल के बीच शक्ति के नाजुक संतुलन के संबंध में महत्त्वपूर्ण संवैधानिक आशंकाएँ उत्पन्न करता है।

अध्यादेश से जुड़े मुद्दे

- **'जवाबदेही की तिहरी श्रृंखला' का मुद्दा:**
  - मई 2023 में सर्वोच्च न्यायालय ने 'जवाबदेही की तिहरी श्रृंखला' (Triple Chain of Accountability) की अवधारणा प्रतिपादित कर इसे स्पष्ट रूप से चिह्नित किया।
  - जवाबदेही की तिहरी श्रृंखला प्रतिनिधिक लोकतंत्र का अभिन्न अंग है और निम्नानुसार आगे बढ़ती है:
    - लोक सेवक मंत्रिमंडल के प्रति जवाबदेह होते हैं।
    - मंत्रिमंडल विधायिका या विधानसभा के प्रति जवाबदेह होता है।
    - विधानसभा (आवधिक रूप से) मतदाताओं के प्रति जवाबदेह होती है।
  - कोई भी कार्रवाई जो इस 'जवाबदेही की तिहरी श्रृंखला' को भंग करती है, मौलिक रूप से प्रतिनिधिक सरकार के मूल संवैधानिक सिद्धांत को कमज़ोर करती है, जो हमारे लोकतंत्र का आधार है।
- **शक्ति संघर्ष:**
  - इस अध्यादेश के कारण निर्वाचित सरकार और उपराज्यपाल के बीच एक शक्ति संघर्ष की स्थिति बनी है।
  - निर्वाचित सरकार का दावा है कि यह अध्यादेश उनकी अधिकारिता को कमज़ोर करता है और संविधान का उल्लंघन करता है।
  - उपराज्यपाल का तर्क है कि दिल्ली में उपयुक्त शासन व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिये यह अध्यादेश आवश्यक है।
- **अध्यादेश के प्रावधानों से संबंधित मुद्दे:**
  - अध्यादेश दिल्ली में प्रमुख नौकरशाही पदों पर नियुक्तियाँ करने की शक्ति उपराज्यपाल को सौंपता है।
  - यह उपराज्यपाल को अधिकारियों के स्थानांतरण और पदस्थापना की शक्ति भी देता है, जो पहले निर्वाचित सरकार की ज़िम्मेदारी थी।
  - अध्यादेश में यह भी कहा गया है कि उपराज्यपाल और निर्वाचित सरकार के बीच किसी भी तरह के मतभेद की स्थिति में उपराज्यपाल का मत अधिभावी होगा।
- **संवैधानिक मुद्दे:**
  - निर्वाचित सरकार का दावा है कि अध्यादेश संविधान का उल्लंघन करता है, जहाँ अधिकारियों की नियुक्ति और स्थानांतरण की शक्ति उन्हें सौंपी गई है।
  - उपराज्यपाल की शक्तियों में वृद्धि संघवाद के सिद्धांत (जो संविधान में निहित है) का उल्लंघन है।
- **शासन संबंधी मुद्दा:**
  - इस अध्यादेश ने दिल्ली सरकार के विभिन्न विभागों में कार्यरत सिविल सेवा अधिकारियों के बीच भ्रम एवं अनिश्चितता की स्थिति उत्पन्न कर दी है। इस अध्यादेश ने दिल्ली में सार्वजनिक सेवाओं और कल्याणकारी योजनाओं की आपूर्ति को भी प्रभावित किया है।

अध्यादेश के संभावित परिणाम

- इससे संवैधानिक संकट उत्पन्न हो सकता है और राष्ट्रीय राजधानी में नागरिक सेवाओं के नियंत्रण को लेकर केंद्र और दिल्ली सरकार के बीच शक्ति संघर्ष की स्थिति बन सकती है।
- यह दिल्ली सरकार की स्वायत्तता एवं लोकतांत्रिकता को और इसे निर्वाचित करने वाले लोगों की इच्छा की अवहेलना कर सकती है।

नोट :

- इससे दिल्ली के प्रभावी प्रशासन एवं शासन में बाधा उत्पन्न हो सकती है, क्योंकि सिविल सेवा अधिकारियों को अपनी भूमिकाओं एवं ज़िम्मेदारियों के संबंध में अनिश्चितता और भ्रम का सामना करना पड़ सकता है।
- यह अध्यादेश सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय और संविधान के अनुच्छेद 239AA का उल्लंघन प्रतीत होता है, इसलिये विधिक चुनौतियों और न्यायिक संवीक्षा को आमंत्रित कर सकता है।

अध्यादेश के संबंध में विभिन्न तर्क

- **दिल्ली सेवा अध्यादेश के पक्ष में तर्क:**
  - हितों का संतुलन:
    - भारत के राष्ट्रपति के माध्यम से प्रतिबिंबित पूरे देश की लोकतांत्रिक इच्छा के साथ दिल्ली के लोगों के स्थानीय हितों एवं राष्ट्रीय हितों को संतुलित करने के लिये यह अध्यादेश आवश्यक है।
    - अध्यादेश यह सुनिश्चित करता है कि राष्ट्रीय राजधानी में सेवाओं के प्रशासन में केंद्र की एक भूमिका हो, जो सार्वजनिक व्यवस्था, सुरक्षा और विकास को बनाए रखने के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।
    - अध्यादेश राष्ट्रीय राजधानी सिविल सेवा प्राधिकरण (NCCSA) में प्रतिनिधित्व देने के रूप में निर्वाचित दिल्ली सरकार की भूमिका का भी सम्मान करता है, जहाँ सेवा संबंधी मामलों में बहुमत से निर्णय लिया जाएगा।
  - संवैधानिक वैधता:
    - यह अध्यादेश संविधान के अनुच्छेद 239AA के अनुरूप है, जो दिल्ली को एक विधानसभा वाले केंद्रशासित प्रदेश के रूप में विशेष दर्जा देता है और संसद को उन मामलों पर (जैसे सेवाएँ) कानून बनाने की अनुमति देता है जो आम तौर पर राज्यों के विशेष अधिकार क्षेत्र में होते हैं।
    - यह अध्यादेश सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का उल्लंघन नहीं करता है, जिसमें केवल यह कहा गया था कि दिल्ली सरकार सेवाओं पर विधायी एवं कार्यकारी शक्तियाँ रखती हैं, लेकिन संसद को उसी विषय पर कानून बनाने से निषिद्ध नहीं किया गया।
    - यह अध्यादेश संविधान के अनुच्छेद 239AB के भी अनुरूप है, जो राष्ट्रपति को दिल्ली की शांति, प्रगति और सुशासन के लिये नियम बनाने का अधिकार देता है।
  - समीक्षा का दायरा:
    - अध्यादेश सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की समीक्षा के दायरे में है, जहाँ संभव है कि राष्ट्रीय राजधानी के रूप में दिल्ली की अद्वितीय संवैधानिक स्थिति और केंद्र के एजेंट के रूप में उपराज्यपाल की भूमिका के कुछ पहलुओं की न्यायालय ने अनदेखी की हो।
    - यह अध्यादेश दिल्ली में सेवाओं के प्रशासन की योजना को स्पष्ट एवं सुव्यवस्थित करने का प्रयास करता है, जो लंबे समय से संघर्ष एवं भ्रम का स्रोत रहा है।
    - अध्यादेश सर्वोच्च न्यायालय को अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने और किसी भी त्रुटि या विसंगति को दूर करने का एक अवसर भी प्रदान करता है।
- **दिल्ली सेवा अध्यादेश के विरुद्ध तर्क:**
  - लोकतंत्र को कमज़ोर करना:
    - यह अध्यादेश प्रतिनिधिक लोकतंत्र और ज़िम्मेदार शासन के सिद्धांतों को कमज़ोर करता है, जो भारत की संवैधानिक व्यवस्था के स्तंभ हैं।
    - अध्यादेश निर्वाचित दिल्ली सरकार से सेवाओं का नियंत्रण छीन लेता है, जिसके पास दिल्ली के लोगों की ओर से विधि निर्माण और प्रशासन का स्पष्ट जनादेश है।
    - यह अध्यादेश मुख्यमंत्री और मंत्रिपरिषद की भूमिका को भी 'रबर स्टांप' होने सीमित कर देता है, क्योंकि उन्हें NCCSA में दो नौकरशाहों की उपस्थिति से 'ओवररूल' या निष्प्रभावी किया जा सकता है, जो अंततः उपराज्यपाल और केंद्र के प्रति उत्तरदायी होंगे।
  - संवैधानिक उल्लंघन:
    - यह अध्यादेश सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का उल्लंघन करता है और उसे निरस्त कर देता है, जिसमें कहा गया था कि राष्ट्रीय राजधानी में दिल्ली सरकार के पास सार्वजनिक व्यवस्था, पुलिस और भूमि से संबंधित मामलों को छोड़कर अन्य सभी सेवाओं पर विधायी एवं कार्यकारी शक्तियाँ हैं।
    - यह अध्यादेश संविधान के अनुच्छेद 239AA का उल्लंघन भी करता है, जो दिल्ली को विधानसभा वाले केंद्रशासित प्रदेश के रूप में विशेष दर्जा देता है और केंद्र एवं दिल्ली सरकार के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंध की परिकल्पना करता है।

- यह अध्यादेश संघवाद के सिद्धांत का भी उल्लंघन करता है, जो संविधान की एक मूलभूत विशेषता है और यह राज्यों के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करता है।

दिल्ली के वर्तमान शासन मॉडल से संबद्ध समस्या

- **लोकतांत्रिक जनादेश का क्षरण:**
  - शासन संबंधी निर्णयों में अंतिम अधिकार उपराज्यपाल के पास है और वह उस विधानसभा के कानूनों या निर्देशों का सम्मान करने के लिये विवश नहीं है जो दिल्ली के लोगों की इच्छा का प्रतिनिधित्व करती है।
- **कार्यकारी उत्तरदायित्व का उल्लंघन:**
  - मुख्य कार्यकारी के रूप में उपराज्यपाल विधानसभा के प्रति उत्तरदायी नहीं है, जो कार्यकारी ज़िम्मेदारी के सिद्धांत के विरुद्ध है।
- **विधायी विशेषाधिकार का उल्लंघन:**
  - विधानसभा को अपने कार्यकरण के लिये स्वयं का नियम बनाने का अधिकार है, जो उसके विधायी विशेषाधिकार का अंग है।
- **निर्णय लेने में बाधा:**
  - विभिन्न विषयों पर उपराज्यपाल की सहमति की आवश्यकता के कारण निर्णय लेने में देरी हुई है, जिससे शहर के विकास और शासन पर असर पड़ा है।
- **जवाबदेही की अस्पष्टता:**
  - निर्वाचित सरकार और उपराज्यपाल के बीच कर्तव्यों के विभाजन ने कार्यों एवं निर्णयों के मामले में ज़िम्मेदारी सौंपने में समस्याएँ उत्पन्न की हैं।
- **सहकारी संघवाद का विरोधाभास:**
  - यह अधिनियम न केवल सहकारी संघवाद का विरोध करता है, बल्कि राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली बनाम भारत संघ मामले (2018) में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित मूलभूत सिद्धांतों को भी उलट देता है।

अध्यादेश के संबंध में महत्त्वपूर्ण निर्णय कौन-से हैं?

- **आर.सी. कूपर बनाम भारत संघ (1970):**
  - इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि अध्यादेश की आवश्यकता के संबंध में राष्ट्रपति का समाधान (President's satisfaction) न्यायिक समीक्षा से मुक्त नहीं है और इसे चुनौती दी जा सकती है।
  - न्यायालय ने यह भी माना कि एक अध्यादेश भी संसद के अधिनियम के समान ही संवैधानिक सीमाओं के अधीन है और किसी भी मूल अधिकार या संविधान के अन्य प्रावधानों का उल्लंघन नहीं कर सकता है।
- **ए.के. रॉय बनाम भारत संघ (1982):**
  - इस मामले में उस अध्यादेश को चुनौती दी गई थी जिसमें लोगों को बिना मुक़दमे के एक साल तक निवारक निरुद्ध किये जाने अनुमति दी गई थी।
  - सर्वोच्च न्यायालय ने इस अध्यादेश की वैधता बनाए रखी लेकिन इसके उपयोग के लिये कुछ नियम प्रदान किये, जैसे की एक बोर्ड द्वारा नियमित समीक्षा, व्यक्ति को निरुद्ध किये जाने के कारण से अवगत कराना और निरोध का विरोध करने का अवसर देना।
  - न्यायालय ने यह भी कहा कि अध्यादेश का उपयोग संसदीय विधान के विकल्प के रूप में नहीं किया जाना चाहिये और इसका सहारा केवल अत्यधिक तात्कालिकता या अप्रत्याशित आपात स्थिति के मामलों में ही लिया जाना चाहिये।
- **डी.सी. वाधवा बनाम बिहार राज्य (1987):**
  - इस मामले में वर्ष 1967 से 1981 तक बिहार के राज्यपाल द्वारा विभिन्न विषयों पर जारी किये गए कई अध्यादेशों को चुनौती दी गई थी, जिनमें से कुछ को राज्य विधानमंडल के समक्ष पेश किये बार-बार जारी किया गया था।
  - सर्वोच्च न्यायालय ने इन सभी अध्यादेशों को असंवैधानिक करार दिया और कहा कि अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन संविधान के साथ धोखाधड़ी और लोकतांत्रिक विधायी प्रक्रिया का ध्वंस है।
  - न्यायालय ने यह भी कहा कि यदि कोई अध्यादेश जारी किये जाने के छह सप्ताह के भीतर विधायिका द्वारा अनुमोदित नहीं किया जाता है तो वह स्वतः समाप्त हो जाएगा और उसे पुनः प्रख्यापन के माध्यम से जारी नहीं रखा जा सकता है।

आगे की राह

- **विशेषज्ञ समिति का गठन:**
  - मुद्दे को सुलझाने के लिये अनुशंसाएँ देने हेतु विधिक, संवैधानिक और प्रशासनिक विशेषज्ञों की एक विशेषज्ञ समिति बनाई जा सकती है।
  - इस समिति को विधिक एवं प्रशासनिक पहलुओं का गहन विश्लेषण करना चाहिये, पूर्व-दृष्टांतों की समीक्षा करनी चाहिये और ऐसे व्यावहारिक समाधान प्रस्तावित करना चाहिये

जो लोकतांत्रिक सिद्धांतों को कायम रखें तथा केंद्र सरकार एवं दिल्ली की निर्वाचित सरकार के बीच शक्ति का नाजुक संतुलन बनाए रखें।

- **संवाद और वार्ता:**
  - मुद्दे के समाधान के लिये केंद्र सरकार और दिल्ली सरकार का सार्थक संवाद एवं वार्ता में संलग्न होना अत्यंत आवश्यक है।
  - दोनों पक्षों को अपनी-अपनी चिंताओं और हितों पर चर्चा करने के लिये एक साथ आना चाहिये तथा ऐसे पारस्परिक रूप से सहमत समाधान की तलाश करनी चाहिये जो लोकतांत्रिक सिद्धांतों और राष्ट्रीय राजधानी के रूप में दिल्ली की अद्वितीय स्थिति का सम्मान करता हो।
- **संवैधानिक सिद्धांतों का सम्मान:**
  - संपूर्ण समाधान प्रक्रिया के दौरान, सभी हितधारकों के लिये लोकतांत्रिक शासन, शक्तियों के पृथक्करण और निर्वाचित प्रतिनिधियों के अधिकारों सहित संवैधानिक सिद्धांतों को बनाए रखने के लिये प्रतिबद्धता प्रदर्शित करना महत्त्वपूर्ण है।
  - संवैधानिक ढाँचे का सम्मान करने से मुद्दे को निष्पक्ष और पारदर्शी तरीके से हल करने के लिये एक ठोस आधार मिलेगा।

तरलता प्रबंधन दुविधा

भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) को कोविड-19 महामारी और उसके बाद के परिदृश्य के संदर्भ में मुद्रास्फीति को प्रबंधित करने और विकास का समर्थन करने की दोहरी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। RBI को अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक विकास को संतुलित करने के साथ ही मुद्रास्फीति लक्ष्य को पूरा करते हुए आर्थिक विकास सुनिश्चित करना है। हालाँकि, RBI के समक्ष मौद्रिक नीति के अपूर्ण प्रसार और मुद्रास्फीति लक्ष्यीकरण दृष्टिकोण की अंतर्निहित कमज़ोरी से संबंधित समस्याओं के रूप में कुछ चुनौतियाँ मौजूद हैं।

RBI का मौद्रिक नीति रुख (monetary policy stance) और तरलता प्रबंधन ढाँचा (liquidity management framework) इस चुनौती से निपटने के प्रमुख साधन हैं। मुद्रास्फीति-विकास की गतिशीलता को संतुलित करने के लिये तरलता का प्रबंधन और राजकोषीय घाटे का वित्तपोषण करना अत्यंत आवश्यक है।

तरलता प्रबंधन दुविधा (Liquidity Management Dilemma) भारतीय रिज़र्व बैंक के कार्य को जटिल बनाती है, जहाँ मुद्रास्फीति को प्रबंधित करते हुए विकास का समर्थन करने के लिये तरलता स्थितियों के बीच सावधानीपूर्वक आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

RBI की तरलता प्रबंधन दुविधा:

भारतीय रिज़र्व बैंक की तरलता प्रबंधन दुविधा अधिशेष तरलता की स्थिति और सरकार की उधार आवश्यकताओं से निपटने के दौरान मूल्य स्थिरता, विकास और वित्तीय स्थिरता के अपने उद्देश्यों को संतुलित बनाए रखने की चुनौती है। इस दुविधा के कुछ पहलू इस प्रकार हैं:

- **मुद्रास्फीति और विकास के बीच समझौता:**
  - RBI को आर्थिक रिकवरी और ऋण वृद्धि का समर्थन करने के लिये बैंकिंग प्रणाली में तरलता का उचित स्तर बनाए रखना होगा, साथ ही मुद्रास्फीति को अपने लक्ष्य सीमा के भीतर रखना होगा।
  - अर्थव्यवस्था में धन की लागत और उपलब्धता को प्रभावित करने के लिये RBI को अपने नीतिगत साधनों, जैसे रेपो दर, रिवर्स रेपो दर, सीमांत स्थायी सुविधा (MSF), नकद आरक्षित अनुपात (CRR) और वैधानिक तरलता अनुपात (SLR) का उपयोग करना होगा।
  - हालाँकि, इन साधनों का मुद्रास्फीति और विकास पर अलग-अलग प्रभाव पड़ सकता है, जो मौजूदा आर्थिक स्थितियों और अपेक्षाओं पर निर्भर करता है।
- **राजकोषीय नीति के साथ समन्वय:**
  - RBI को केंद्रीय बजट में प्रावधानित उच्च पूंजीगत व्यय (GDP का 3.32%) के संदर्भ में राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण का समर्थन करना है, जिसका उद्देश्य सार्वजनिक निवेश को बढ़ावा देना और आर्थिक रिकवरी का समर्थन करना है।
  - RBI को सरकार के ऋण और नकदी शेष (cash balances) का प्रबंधन करना है, खुला बाज़ार परिचालन (OMO) का संचालन करना है और सरकारी प्रतिभूतियों के लिये प्राथमिक एवं द्वितीयक बाज़ारों में भाग लेना है।
  - हालाँकि, इन गतिविधियों का तरलता प्रबंधन, मौद्रिक नीति संचरण, बाज़ार स्थिरता और केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता पर प्रभाव पड़ सकता है।
  - स्थिरता और प्रभावशीलता सुनिश्चित करने के लिये RBI और सरकार को अपनी-अपनी नीतियों और परिचालन पर समन्वय एवं सहयोग करने की आवश्यकता है।
- **वित्तीय बाज़ारों का विकास:**
  - RBI को बैंकिंग प्रणाली से अधिशेष तरलता को अवशोषित करने के लिये बाज़ार-उन्मुख साधनों, जैसे VRRR नीलामी

(variable rate reverse repo auctions), खुला बाज़ार बिक्री (open market sales) और केंद्रीय बैंक ऋण प्रतिभूतियों (central bank debt securities) का उपयोग करना होगा।
- इन साधनों के प्रभावी ढंग से कार्य करने के लिये एक सुविकसित और तरल वित्तीय बाज़ार की आवश्यकता होती है।
- हालाँकि, वित्तीय बाज़ार अविकसित, खंडित या अस्थिर हो सकते हैं, जो बाज़ार-उन्मुख साधनों के दायरे और प्रभावशीलता को सीमित कर सकते हैं।

RBI तरलता प्रबंधन दुविधा से कैसे उबर सकता है?

- **स्थायी जमा सुविधा का सक्रिय उपयोग करना:**
  - RBI बैंकिंग प्रणाली से अधिशेष तरलता को अवशोषित करने के लिये स्थायी जमा सुविधा (Standing Deposit Facility- SDF) का सक्रिय रूप से उपयोग कर सकता है।
  - ऐसा कर RBI अतिरिक्त धन आपूर्ति को रोक सकता है, जिससे अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति का दबाव बढ़ सकता है।
- **साधनों का उपयोग:**
  - RBI तरलता को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने के लिये विभिन्न साधनों का उपयोग कर सकता है जिसमें VRRR नीलामी, खुला बाज़ार बिक्री और स्थायी जमा सुविधा में समायोजन करना शामिल हैं।
  - इन साधनों को प्रणाली से अतिरिक्त तरलता को अवशोषित करने और मुद्रास्फीति एवं विकास उद्देश्यों के बीच संतुलन बनाए रखने के लिये नियोजित किया जा सकता है।
- **नकदी शेष की निगरानी:**
  - RBI को केंद्रीय बैंक के साथ सरकार के नकदी शेष (Cash Balances) की बारीकी से निगरानी करनी चाहिये।
  - इसमें सरकारी नकदी प्रवाह, जमा, निवेश और अर्थोपाय अग्रिम (ways and means advances-WMA) के उपयोग के पैटर्न का विश्लेषण करना शामिल है।
  - RBI इन कारकों की निगरानी कर किसी भी असंतुलन की पहचान कर सकता है और तरलता को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने के लिये उचित उपाय कर सकता है।
- **नकदी प्रबंधन को सुदृढ़ बनाना:**
  - सरकार को RBI के पास लंबे समय तक अधिशेष या घाटापूर्ण नकदी स्थिति से बचने के लिये अपनी नकदी प्रबंधन (Cash Management) अभ्यासों में सुधार करने की आवश्यकता है।
  - इसमें यह सुनिश्चित करना शामिल है कि WMA का उपयोग राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण के लिये संसाधन के रूप में करने के बजाय अस्थायी नकदी प्रवाह असंगति के लिये किया जाए।
  - नकदी प्रबंधन को सुदृढ़ कर सरकार RBI के तरलता प्रबंधन और समग्र मौद्रिक प्रबंधन पर प्रभाव को कम कर सकती है।

तरलता प्रबंधन के लिये बाज़ार-उन्मुख साधनों का उपयोग करने से संबद्ध चुनौतियाँ:

- **वित्तीय बाज़ारों की उपलब्धता और गहनता पर निर्भर:**
  - VRR/VRRR नीलामी, खुला बाज़ार बिक्री और केंद्रीय बैंक ऋण प्रतिभूतियों जैसे बाज़ार-उन्मुख साधनों के प्रभावी ढंग से कार्य करने के लिये एक सुविकसित और तरल वित्तीय बाज़ार की आवश्यकता होती है।
- **केंद्रीय बैंक और वित्तीय संस्थानों का बाज़ार जोखिमों के अधीन होना:**
  - बाज़ार-उन्मुख साधनों में वित्तीय परिसंपत्तियों के रूप में लेनदेन शामिल होते हैं जो बाज़ार की स्थितियों, जैसे ब्याज दरों, विनिमय दरों, क्रेडिट रेटिंग और बाज़ार भावनाओं में परिवर्तन के कारण मूल्य में उतार-चढ़ाव के अधीन होते हैं।
  - ये उतार-चढ़ाव परिसंपत्तियों के मूल्य एवं रिटर्न को प्रभावित कर सकते हैं और केंद्रीय बैंक एवं वित्तीय संस्थानों के लिये हानि या लाभ उत्पन्न कर सकते हैं।
- **एक मज़बूत नियामक और पर्यवेक्षी ढाँचे की आवश्यकता:**
  - बाज़ार-उन्मुख साधनों को पारदर्शिता, जवाबदेही, अनुपालन और जोखिम प्रबंधन सुनिश्चित करने के लिये एक स्पष्ट एवं सुसंगत नियामक और पर्यवेक्षी ढाँचे की आवश्यकता होती है।
  - केंद्रीय बैंक और वित्तीय संस्थानों को अपनी तरलता स्थिति और जोखिमों की निगरानी एवं प्रबंधन के लिये उपयुक्त नीतियों, प्रक्रियाओं, प्रणालियों और नियंत्रणों की आवश्यकता होगी।
  - नियमों और मानकों की निगरानी एवं कार्यान्वयन के लिये नियामकों और पर्यवेक्षकों के पास पर्याप्त शक्तियाँ, साधन एवं संसाधन होने चाहिये।

RBI का तरलता प्रबंधन:

- **परिचय:**
  - वित्तीय प्रणाली के सुचारू संचालन और मौद्रिक नीति के प्रभावी संचरण को सुनिश्चित करने के लिये तरलता प्रबंधन (Liquidity management) करना भारतीय रिज़र्व बैंक के प्रमुख कार्यों में से एक है।
  - तरलता प्रबंधन में तीन पहलू शामिल हैं: परिचालन ढाँचा, तरलता के चालक और तरलता का प्रबंधन।
- **परिचालन ढाँचा (Operating Framework):**
  - RBI द्वारा तरलता प्रबंधन का परिचालन ढाँचा तरलता समायोजन सुविधा (Liquidity Adjustment Facility- LAF) कॉरिडोर द्वारा निर्देशित होता है, जो नीतिगत साधनों का एक समूह है जो मुद्रा बाज़ार में ओवरनाइट इंटरेस्ट रेट (overnight interest rates) को प्रभावित करता है।
  - LAF कॉरिडोर में तीन दरें शामिल हैं:
    - पॉलिसी रेपो रेट (PRR), जो वह प्रमुख नीति दर है जिस पर RBI बैंकों को ऋण देता है;
    - सीमांत स्थायी सुविधा (MSF) दर, जो कि वह उच्चतम दर (ceiling rate) है जिस पर बैंक सरकारी प्रतिभूतियों के बदले RBI से उधार प्राप्त कर सकते हैं; और
    - स्थायी जमा सुविधा (SDF) दर, वह न्यूनतम दर (floor rate) है जिस पर बैंक बिना किसी संपार्श्विक के RBI के पास अपनी अतिरिक्त धनराशि जमा कर सकते हैं।
- **उद्देश्य:**
  - LAF कॉरिडोर का उद्देश्य भारित औसत कॉल दर (weighted average call rate- WACR)— जो RBI की मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है, को PRR के साथ समन्वित करना है।
  - WACR वह औसत ब्याज दर है जिस पर बैंक ओवरनाइट इंटरबैंक मार्केट में एक-दूसरे को उधार देते हैं और उधार लेते हैं।
  - PRR मौद्रिक नीति के रुख का संकेत देता है और अर्थव्यवस्था में धन की लागत एवं उपलब्धता को प्रभावित करता है।
- **तरलता के चालक:**
  - चलन में मौजूद मुद्रा (Currency in circulation):
    - इसका तात्पर्य बैंकों के बाहर आम लोगों द्वारा धारित नकदी की मात्रा से है। जब लोग बैंकों से नकदी निकालते हैं या कम नकदी खर्च करते हैं तो चलन में मौजूद मुद्रा की वृद्धि हो जाती है और बैंक जमा एवं भंडार में कमी आती है।
    - इससे बैंकिंग प्रणाली में तरलता की कमी उत्पन्न होती है।
    - जब लोग बैंकों में नकदी जमा करते हैं या अधिक नकदी खर्च करते हैं, तो चलन में मौजूद मुद्रा कम हो जाती है और बैंक जमा एवं भंडार की वृद्धि हो जाती है।
    - इससे बैंकिंग प्रणाली में तरलता अधिशेष उत्पन्न होता है।
  - RBI द्वारा शुद्ध विदेशी मुद्रा खरीद/बिक्री:
    - यह विदेशी मुद्रा की शुद्ध राशि को संदर्भित करता है जिसे RBI बाज़ार से खरीदता है या बेचता है।
    - जब RBI निर्यातकों या अन्य स्रोतों से विदेशी मुद्रा खरीदता है तो वह उन्हें रुपए में भुगतान करता है और बैंक भंडार एवं तरलता की वृद्धि हो जाती है।
    - जब RBI आयातकों या अन्य स्रोतों को विदेशी मुद्रा बेचता है तो उसे रुपए प्राप्त होते हैं और बैंक भंडार एवं तरलता की कमी हो जाती है।
  - RBI के पास सरकार का नकदी शेष:
    - यह उस धनराशि को संदर्भित करता है जो सरकार ने अपने व्यय और राजस्व उद्देश्यों के लिये RBI के पास जमा की है।
    - जब सरकार करों या अन्य प्राप्तियों में एकत्र की गई राशि से अधिक खर्च करती है तो वह RBI के पास अपने नकदी शेष को कम कर देती है और बैंकिंग प्रणाली में तरलता का प्रवेश कराती है।
    - जब सरकार अपने खर्च से अधिक एकत्र करती है तो वह RBI के पास अपनी नकदी शेष की वृद्धि करती है और बैंकिंग प्रणाली से तरलता को कम कर देती है।
  - RBI के पास रखा गया अतिरिक्त भंडार:
    - यह उस धनराशि को संदर्भित करता है जो बैंक द्वारा स्वेच्छा से नकद आरक्षित अनुपात (CRR) की वैधानिक आवश्यकता से अधिक मात्रा में RBI के पास रखा जाता है। CRR जमा का वह प्रतिशत है जिसे बैंकों

को विवेकपूर्ण उपाय के रूप में अनिवार्य रूप से RBI के पास रखना होता है।
- जब बैंक RBI के पास अधिक अतिरिक्त रिज़र्व रखते हैं तो उधार देने के लिये धन की उपलब्धता कम हो जाती है और बैंकिंग प्रणाली में तरलता की कमी उत्पन्न होती है।
- जब बैंक RBI के पास कम अतिरिक्त रिज़र्व रखते हैं तो उधार देने के लिये धन की उपलब्धता अधिक हो जाती है और बैंकिंग प्रणाली में तरलता अधिशेष की स्थिति बनती है।

आगे की राह:

- **तरलता स्थिति और राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण की निगरानी:**
  - RBI को दोतरफा परिचालन के माध्यम से तरलता के प्रबंधन में चुस्त एवं लचीला बने रहने की ज़रूरत है।
  - तरलता प्रबंधन और राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण पर कड़ी नजर रखने से मुद्रास्फीति और विकास उद्देश्यों के बीच संतुलन का निर्माण करने में मदद मिलेगी।
- **मौद्रिक-राजकोषीय इंटरफ़ेस को सशक्त बनाना:**
  - RBI द्वारा तरलता स्थिति और सरकार द्वारा राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण पैटर्न की सख्त निगरानी आवश्यक है।
  - अत्यधिक उधारी (over-borrowing) और अनुपयुक्त नकदी प्रबंधन के मुद्दों को संबोधित करने से मौद्रिक-राजकोषीय इंटरफ़ेस में सुधार होगा।
- **तरलता प्रबंधन साधनों का मूल्यांकन:**
  - RBI को स्थिरता सुनिश्चित करने के लिये VRRR और SDF जैसे तरलता प्रबंधन साधनों की प्रभावशीलता का नियमित मूल्यांकन करना चाहिये।
- **राजकोषीय नीति और मौद्रिक नीति के बीच समन्वय:**
  - यदि सरकार वास्तव में भारत में ऋण दरों को सार्थक और निरंतर तरीके से कम करना चाहती है तो कहीं बेहतर होगा कि अपने स्वयं के राजकोषीय घाटे को कम करने पर ध्यान केंद्रित करे।
  - केंद्रीय बैंक को अधिक स्वतंत्र बनाने के लिये ऋण प्रबंधन को मौद्रिक प्रबंधन से अलग करना एक अच्छा कदम होगा।
  - RBI की तरलता प्रबंधन दुविधा अधिशेष तरलता की स्थिति से निपटने के दौरान मूल्य स्थिरता, विकास और वित्तीय स्थिरता के अपने उद्देश्यों को संतुलित बनाए रखने की चुनौती है। टिप्पणी कीजिये।

इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण की संभावनाओं को उजागर करना

विश्व की सबसे तेज़ी से विकास करती अर्थव्यवस्थाओं में से एक के रूप में भारत ने स्वयं को गतिशील कर लिया है। इस संदर्भ में, इलेक्ट्रॉनिक विनिर्माण के क्षेत्र में प्रगति का अपना विशेष महत्त्व है। इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं की बढ़ती घरेलू मांग को पूरा करने के लिये दुनिया भर की कंपनियाँ भारतीय बाज़ार को अपने अगले इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण गंतव्य के रूप में देखने लगी हैं।

इस क्षेत्र की विकास क्षमता और बड़े पैमाने पर रोज़गार प्रदान कर सकने की क्षमता को समझते हुए, भारत सरकार देश के विनिर्माण क्षेत्र (इलेक्ट्रॉनिक्स क्षेत्र सहित) को समर्थन और गति प्रदान करने हेतु एक प्रमुख नीति पहल के रूप में 'मेक इन इंडिया' कार्यक्रम को उत्साहपूर्वक आगे बढ़ा रही है।

भारत में इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादन का वर्तमान परिदृश्य

- **भारत के लिये खुलते अवसर:**
  - इलेक्ट्रॉनिक्स वैश्विक स्तर पर सबसे बड़ी विनिर्माण एवं कारोबारी श्रेणी (manufactured and traded category) है, जिसका मूल्य 2 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक है। इसमें से चीन लगभग 50% से अधिक की आपूर्ति करता है।
    - हालाँकि, चीन में बढ़ती वेतन लागत (wage cost) खरीदारों को अपनी आपूर्ति शृंखलाओं में विविधता लाने और जोखिम कम करने के लिये प्रेरित कर रही है, जो भारत के लिये एक अनूठा अवसर पेश कर रही है।
  - भारत वैश्विक इलेक्ट्रॉनिक्स कंपनियों के लिये वैकल्पिक समाधान के प्रमुख दावेदारों में से एक है और इलेक्ट्रॉनिक्स क्षेत्र में अगले 3-5 वर्षों में भारत शीर्ष निर्यातक क्षेत्रों में से एक बनने की क्षमता है।
  - वित्त वर्ष 2026 तक भारत के 1 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर की डिजिटल अर्थव्यवस्था बनने की उम्मीद है।
- भारत का उत्पादन परिदृश्य: भारतीय इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण उद्योग वर्ष 2015-16 में 37.1 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर वर्ष 2020-21 में 67.3 बिलियन अमेरिकी डॉलर मूल्य का हो गया और भारत इसे वर्ष 2026 तक 300 बिलियन अमेरिकी डॉलर (घरेलू उत्पादन) तक ले जाने का लक्ष्य रखता है।

- इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (MeitY) के विज़न दस्तावेज़ 2.0 के अनुसार - भारत इस लक्ष्य तक पहुँच सकता है, बशर्ते कि स्केलिंग की उच्च क्षमता वाले विशिष्ट उत्पाद खंडों को शॉर्टलिस्ट किया जाए और प्रोत्साहन एवं नीतिगत उपायों के माध्यम से इसे समर्थन दिया जाए।
- इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण के लिये 300 बिलियन अमेरिकी डॉलर के आँकड़े तक पहुँचने के लिये 120-140 बिलियन अमेरिकी डॉलर का निर्यात महत्त्वपूर्ण है।

- **इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण के लिये योजनाएँ:**
  - भारत को 'इलेक्ट्रॉनिक्स सिस्टम डिज़ाइन एंड मैन्युफैक्चरिंग' (ESDM) के लिये एक वैश्विक केंद्र के रूप में स्थापित करने के लिये निम्नलिखित योजनाएँ शुरू की गई हैं:
    - उत्पादन लिंक्ड प्रोत्साहन (PLI) योजनाएँ— (a) बड़े पैमाने पर इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण के लिये; और (b) आईटी हार्डवेयर के लिये इलेक्ट्रॉनिक घटकों और सेमीकंडक्टर्स के विनिर्माण के संवर्द्धन हेतु योजना (Scheme for Promotion of Manufacturing of Electronic Components and Semiconductors-SPECS)
    - संशोधित इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण क्लस्टर योजना (Modified Electronics Manufacturing Clusters Scheme- EMC 2.0)
  - इसके अतिरिक्त, देश में एक स्थायी सेमीकंडक्टर और डिस्प्ले पारिस्थितिकी तंत्र विकसित करने के दृष्टिकोण से 10 बिलियन अमेरिकी डॉलर के प्रोत्साहनकारी परिव्यय के साथ 'सेमीकंडक्टर मिशन' शुरू किया गया है।
  - इलेक्ट्रॉनिक्स के लिये स्वचालित मार्ग के माध्यम से 100% FDI की अनुमति दी गई है, हालाँकि रक्षा इलेक्ट्रॉनिक्स के मामले में स्वचालित मार्ग के माध्यम से 49% तक FDI की अनुमति है (जबकि 49% से अधिक के लिये सरकार की मंज़ूरी आवश्यक है)।

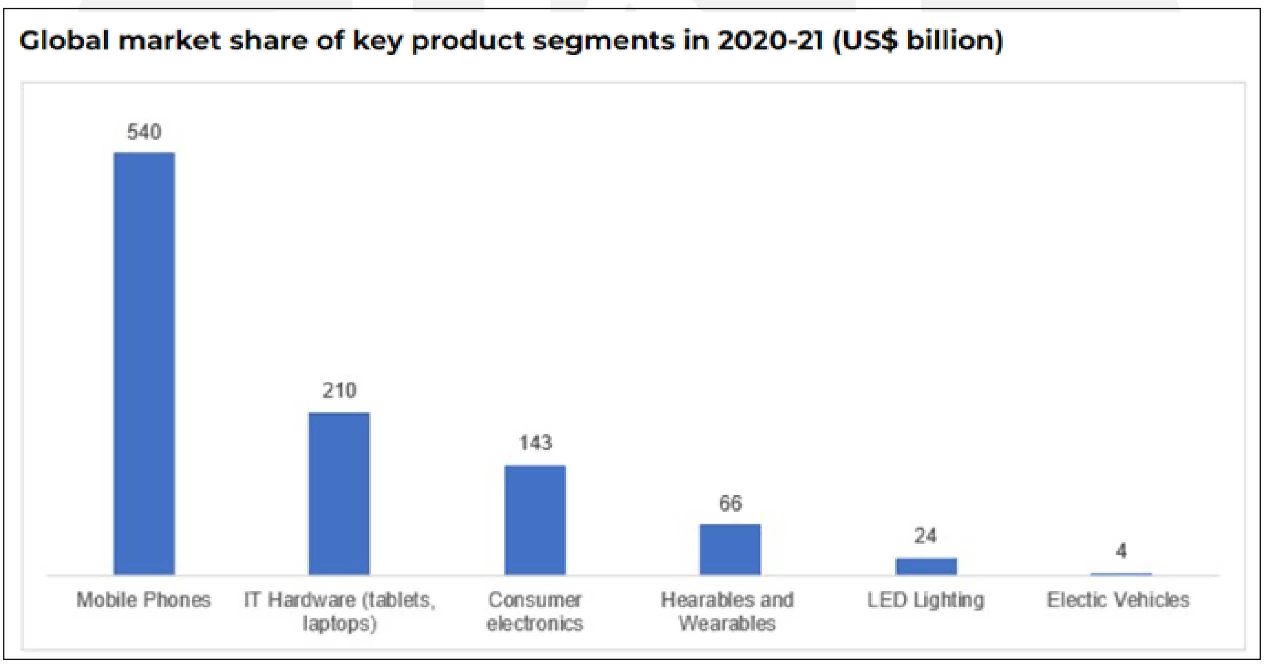

भारत को 'इलेक्ट्रॉनिक्स हब' में बदलने की राह की चुनौतियाँ

- **शुल्कों का दोधारी तलवार के रूप में कार्य करना:**
  - उच्च आयात शुल्क और सख्त स्थानीयकरण मानदंड प्रायः स्थानीय विनिर्माण को बढ़ावा देने के लिये अधिरोपित किये जाते हैं। हालाँकि वे स्थानीय विनिर्माण सुनिश्चित करने में एक हद तक सफल होते हैं, लेकिन वे देश की वैश्विक प्रतिस्पर्द्धात्मकता पर भी नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।
    - यह बात इलेक्ट्रॉनिक्स के मामले में विशेष रूप से सत्य है जहाँ आपूर्ति शृंखलाएँ वैश्विक स्तर पर आपस में जुड़ी हुई हैं।

- विनिर्माण के लिये उपयोग की जाने वाली मशीनरी और अनुसंधान एवं विकास जैसे क्षेत्रों में वियतनाम एवं चीन जैसे देशों में भारत की तुलना में अधिक अनुकूल सब्सिडी संरचनाएँ हैं।

- **घटक पारितंत्र का अभाव:**
  - एक अन्य चुनौती यह है कि भारत में इलेक्ट्रॉनिक उत्पादों के लिये आवश्यक घटकों का स्थानीय स्तर पर निर्माण करने वाली कंपनियों के एक सुदृढ़ पारितंत्र का अभाव है।
  - भारत में एक पूर्ण घटक पारितंत्र (Component Ecosystem) की अनुपस्थिति में इन घटकों को आयात करने की आवश्यकता होती है, जिसके परिणामस्वरूप निर्माताओं के लिये लागत और समय-सीमा (lead time) बढ़ जाती है।
    - स्थानीय विनिर्माण को बढ़ावा देने के लिये (घरेलू विनिर्माताओं के योगदान सहित) एक सक्रिय नीति समर्थन का वर्तमान में अभाव प्रतीत होता है।
- **कौशल विकास:**
  - इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण क्षेत्र में कुशल श्रमिकों की कमी है। भारत को एक वैश्विक केंद्र बनने के लिये इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग, अनुसंधान एवं विकास और उन्नत विनिर्माण प्रौद्योगिकियों जैसे क्षेत्रों में विशेषज्ञता के साथ एक उच्च कुशल कार्यबल विकसित करने की दिशा में निवेश करने की आवश्यकता है।
- **नियामक पर्यावरण:**
  - भारत में नियामक ढाँचा एवं नौकरशाही कार्यवाही जटिल और धीमी हैं।
  - नियमों को सुव्यवस्थित करने और नौकरशाही की लालफीताशाही (bureaucratic red tape) को कम करने से कारोबार सुगमता बढ़ेगी, निवेश आकर्षित होगा और इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण के लिये अनुकूल वातावरण को बढ़ावा मिलेगा।
- **पर्यावरणीय स्थिरता/संवहनीयता:**
  - इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण प्रायः इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट उत्पन्न करता है, जो पर्यावरणीय चुनौतियाँ पेश करता है।
  - ई-अपशिष्ट प्रबंधन और पर्यावरण हेतु अनुकूल विनिर्माण प्रक्रियाओं को बढ़ावा देने जैसे संवहनीय अभ्यासों के प्रभावी कार्यान्वयन का अभाव पर्यावरण के लिये इच्छित लाभ की तुलना में हानि ही अधिक पहुँचा सकता है।

भारत के इलेक्ट्रॉनिक्स क्षेत्र में सुधार के लिये क्या कदम उठाये जा सकते हैं?

- **'स्केलेबिलिटी' की वृद्धि करना:**
  - इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण बड़े क्लस्टर्स में अधिक फलता-फूलता है जो अपेक्षित 'इकोनॉमिज़ ऑफ़ स्केल' प्रदान करता है। लेकिन भारत ने अपेक्षित स्केल पर अपने विनिर्माण क्लस्टर्स की परिकल्पना नहीं की है।
    - भारत के पास निर्यात को बढ़ावा देने के लिये देश भर में लगभग 400 विशेष आर्थिक क्षेत्र (SEZs) हैं, जिन्हें एक साथ रखकर भी देखें तो ये चीन के शेनज़ेन SEZ की तुलना में लगभग आधा निर्यात ही करते हैं।
  - भारत को देश भर में कुछ स्थानों पर वृहत और वैश्विक स्तर के इलेक्ट्रॉनिक्स क्लस्टर्स का निर्माण करने पर ज़ोर देना चाहिये। उत्तर प्रदेश (नोएडा), तमिलनाडु और तेलंगाना पहले से ही अग्रणी खिलाड़ी के रूप में उभर रहे हैं और यह उपयुक्त समय है कि वैश्विक स्तर के इलेक्ट्रॉनिक्स क्लस्टर्स के निर्माण के लिये बड़ा दाँव लगाया जाए।
- **उच्च निर्यात शुल्क को सीमित करना:**
  - वैश्विक इलेक्ट्रॉनिक्स बाज़ार में उचित हिस्सेदारी हासिल करने के लिये हमारे दृष्टिकोण में आमूल-चूल परिवर्तन की आवश्यकता है, विशेष रूप से कराधान, श्रम कानूनों और श्रमिक आवास के मामले में।
    - भारत अब आयात-प्रतिस्थापन इलेक्ट्रॉनिक्स अर्थव्यवस्था (import-substitution electronics economy) से निर्यात-आधारित अर्थव्यवस्था की ओर आगे बढ़ रहा है।
  - जटिल शुल्क संरचना (उच्च और लगातार बदलती दरों के साथ) भारत को वैश्विक OEMs के लिये 'असेंबली हब' में परिणत करने में प्रमुख बाधा के रूप में कार्य करती है और इसलिये इस पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है।
- **निजी-सरकारी सहयोग:**
  - जबकि भारत पिछले कुछ वर्षों से मोबाइल फ़ोन का अग्रणी निर्माता रहा है, यह उपलब्धि काफी हद तक निम्न प्रौद्योगिकी श्रेणी में प्राप्त हुई है। अब समय आ गया है कि भारतीय विनिर्माता वैश्विक मूल्य शृंखला का अंग बनने की दिशा में कार्यशील हों।
    - सार्वजनिक-निजी सहयोग (Public-private collaboration), सहायक नीतियाँ और कानूनी ढाँचा इस प्रगति को आगे ले जाने के लिये महत्त्वपूर्ण हैं।

- सरकार ने अगले तीन वर्षों में 10 मिलियन कुशल आईटी कार्यबल तैयार करने, सेमीकंडक्टर डिज़ाइन-लिंक्ड प्रोत्साहन नीति लागू करने आदि का लक्ष्य रखा है। ये सभी पहलें एक सुदृढ़ इलेक्ट्रॉनिक विनिर्माण पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण की दिशा में कार्य करेंगी।

- **तनाव के बीच सहयोग की तलाश:**
  - आज वैश्विक स्तर पर सबसे बड़ी इलेक्ट्रॉनिक्स कंपनियों में से कई कंपनियाँ चीन की हैं। इसके अलावा, हज़ारों चीनी इलेक्ट्रॉनिक्स घटक आपूर्तिकर्ता बाज़ार में मज़बूत उपस्थिति रखते हैं।
    - भारत और चीन के बीच सीमा तनाव के कारण परस्पर सहयोग की कठिनाइयाँ बड़े पैमाने पर विनिर्माण निवेश को आकर्षित करने की भारत की क्षमता को गंभीर रूप से सीमित कर देती हैं।
  - इस संदर्भ में, चीन-ताइवान के उदाहरण से सबक लिया जा सकता है, जहाँ दोनों देश युद्ध की कगार पर हैं फिर भी 4,000 से अधिक ताइवानी कंपनियाँ चीन में कार्यरत हैं। इनमें Foxconn कंपनी भी शामिल है जो चीन के सबसे बड़े नियोक्ताओं में से एक है।
    - राजनीतिक तनाव के बावजूद भारत के प्रबुद्ध स्वार्थ में चीन के साथ व्यापार करने का रास्ता ढूँढना इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण क्षेत्र में सफलता के लिये महत्त्वपूर्ण होगा।
- **लचीलापन बढ़ाना:**
  - वर्ष 2008 में वियतनाम ने अपने FDI पर स्थानीय सामग्री आवश्यकताओं को हटा दिया, जिसने सैमसंग (Samsung) को अपना विनिर्माण आधार दक्षिण कोरिया से वियतनाम स्थानांतरित करने के लिये प्रोत्साहित किया और आज सभी सैमसंग स्मार्टफ़ोन का लगभग 60% वियतनाम में विनिर्मित होता है।
    - LG, Apple, Nintendo और कई अन्य टेक दिग्गजों ने भी अपने विनिर्माण के बड़े भाग को वियतनाम में स्थानांतरित कर दिया है।
    - इसके परिणामस्वरूप, वियतनाम वर्ष 2001 में वैश्विक इलेक्ट्रॉनिक्स निर्यात रैंकिंग में 47वें स्थान से ऊपर बढ़कर वर्ष 2021 में 7वें स्थान पर पहुँच गया।
  - प्रतिस्पर्द्धी देशों के अभ्यासों के अनुरूप कार्यबल का उपयोग कर सकने के लिये भारतीय निर्माताओं को भी लचीलेपन के संबंध में ऐसा ही प्रोत्साहन प्रदान किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), मशीन अधिगम (ML), इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), ऑगमेंटेड रियलिटी (AR), वर्चुअल रियलिटी (VR) और रोबोटिक्स (Robotics) जैसी उभरती प्रौद्योगिकियाँ नए इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादों की मांग को बढ़ाते हुए उद्योग के स्वरूप को बदल रही हैं। भारत सॉफ्टवेयर विकास में पहले से ही एक चिह्नित वैश्विक खिलाड़ी है और अपनी हार्डवेयर विनिर्माण क्षमताओं को सुदृढ़ कर भारत इलेक्ट्रॉनिक्स क्षेत्र में भी एक अग्रणी शक्ति के रूप में उभरने की क्षमता रखता है।

यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि 'आत्मनिर्भर भारत' का स्वप्न तभी साकार होगा जब विनिर्माण से संबद्ध विभिन्न क्षेत्र अपनी क्षमताओं और प्रौद्योगिकी अंगीकरण के स्तर को वृहत करेंगे। समय की मांग है कि एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया जाए जो नवाचार को बढ़ावा दे, बौद्धिक संपदा की रक्षा करे, कौशल विकास पर ध्यान केंद्रित करे और ऐसी आधारभूत संरचना का निर्माण करे जो पारिस्थितिकी तंत्र का समर्थन करे।

भारत एवं चीन की आर्थिक संवृद्धि की तुलना

भारत की वर्तमान आर्थिक स्थिति वर्ष 2007 में चीन की आर्थिक स्थिति के समान है। मूडी (Moody) के अनुसार, भारत की अर्थव्यवस्था हाल ही में 3.5 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर को पार कर गई है और वर्ष 2023 में इसके 3.7 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक होने की उम्मीद है, जो अतीत में चीन के तुलनीय आर्थिक आकार के समान है। प्रति व्यक्ति आय (per capita income) के मामले में, वर्ष 2007 में चीन की प्रति व्यक्ति आय 2,694 अमेरिकी डॉलर थी, जबकि अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) का अनुमान है कि भारत की प्रति व्यक्ति आय वर्ष 2022 में 2,379 अमेरिकी डॉलर से बढ़कर वर्ष 2023 में 2,601 अमेरिकी डॉलर हो जाएगी।

हालाँकि भारत की वर्तमान आर्थिक स्थिति और वर्ष 2007 में चीन की आर्थिक स्थिति के बीच कुछ समानताएँ दिखाई देती हैं, लेकिन उनके बीच के अंतर अधिक उल्लेखनीय हैं और ये भारत के विकास पथ के लिये महत्त्वपूर्ण परिणाम रखते हैं। ये अंतर भारत की अर्थव्यवस्था के भविष्य के विकास के लिये एक प्रभाव रखते हैं।

भारत और चीन की अर्थव्यवस्थाओं में प्रमुख अंतर

- निवेश अनुपात में अंतराल: सकल घरेलू उत्पाद (GDP) अनुपात में चीन का निवेश लगातार उच्च रहा है, जो वर्ष 2003 से 2011 तक औसतन लगभग 40% रहा, जबकि अपने उच्च विकास चरण के दौरान भारत का निवेश अनुपात लगभग 33% रहा, जो चीन की तुलना में कम है।

- इससे प्रकट होता है कि चीन अपने आर्थिक संसाधनों का एक बड़ा हिस्सा निवेश के लिये आवंटित करता रहा है, जिसने इसकी तीव्र आर्थिक वृद्धि में योगदान दिया है।
- वर्ष 2012 से 2021 के बीच चीन और भारत के बीच अंतराल और भी अधिक बढ़ गया, जहाँ चीन का निवेश अनुपात औसतन लगभग 43% रहा, जबकि भारत का निवेश अनुपात कुछ गिरकर लगभग 29% रह गया।

- भारत में दोहरे बैलेंस शीट की समस्या: भारत के निवेश परिदृश्य को एक उल्लेखनीय मंदी का सामना करना पड़ा, जो मुख्य रूप से दोहरे या ट्विन बैलेंस शीट (Twin Balance Sheet) समस्या के कारण उत्पन्न हुआ।
    - दोहरे घाटे की समस्या (twin deficit problem)— यानी चालू खाता घाटा (CAD) और राजकोषीय घाटा (FD), विशेष रूप से बिगड़ता चालू खाता घाटा, महंगे आयात के प्रभाव को बढ़ा सकती है और रुपए के मूल्य को कमज़ोर कर सकती है, जिससे बाह्य असंतुलन (external imbalances) और बढ़ सकते हैं।
- निर्यात और आयात की संरचना में असमानता: वित्तीय वर्ष 2022-23 में, भारत का वस्तुओं एवं सेवाओं का निर्यात 770 बिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक हो गया, जबकि आयात लगभग 890 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था। इसकी तुलना में वर्ष 2007 में जब चीन की अर्थव्यवस्था समान आकार की थी, चीन का निर्यात 1.2 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक हो गया था, जो मुख्य रूप से सेवाओं के बजाय वस्तुओं के निर्यात से प्रेरित था।
    - इसके अतिरिक्त, चीन का आयात 950 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था, जो वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ उच्च स्तर के एकीकरण का संकेत देता है।
- टैरिफ दरों में अंतर: चीन ने स्वयं को वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं के लिये एक 'सेंट्रल हब' के रूप में सफलतापूर्वक स्थापित किया है। इसमें चीन द्वारा टैरिफ दरों में लगातार कमी लाने का भी योगदान रहा है। वर्ष 2003 से 2007 तक चीन की औसत टैरिफ दर 10.69% से घटकर 8.93% हो गई और आगे इसमें और कमी के साथ वर्ष 2020 में यह 5.32% हो गई। टैरिफ में इस कमी ने वैश्विक व्यापार में चीन के एकीकरण को सुविधाजनक बनाया है और विदेशी निवेश को आकर्षित किया है।
    - इसके विपरीत, भारत का टैरिफ दर वर्ष 2003 में 25.63% से घटकर वर्ष 2007 में 8.88% हो गया, जो व्यापार उदारीकरण में प्रगति को इंगित करता है। हालाँकि उसके बाद से भारत की टैरिफ दर में वृद्धि हो रही है, जिससे निवेश आकर्षित करने और वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं में पूरी तरह से एकीकृत होने की इसकी क्षमता बाधित हो सकती है।
- श्रम बल भागीदारी: चीन ने पिछले कई वर्षों से लगातार उच्च श्रम बल भागीदारी दर बनाए रखी है। वर्ष 2007 में चीन की श्रम बल भागीदारी दर लगभग 73% थी (अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुमान के अनुसार, 15 वर्ष और उससे अधिक आयु के व्यक्तियों के लिये)। हालाँकि इस दर में धीरे-धीरे गिरावट आई है और वर्तमान में यह लगभग 67% है।
    - दूसरी ओर, भारत की श्रम बल भागीदारी दर वर्ष 2022 में लगभग 50% थी, जो चीन की तुलना में कार्यबल में सक्रिय रूप से भाग लेने वाली जनसंख्या के कम अनुपात का संकेत देती है।
- रोज़गार सृजन में कमी: जबकि भारत में निर्माण और व्यापार एवं परिवहन जैसी सेवाओं में बड़ी संख्या में रोज़गार सृजित हुए हैं, प्रति श्रमिक उत्पादन के मामले में औपचारिक विनिर्माण कहीं अधिक उत्पादक है।
    - आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार, औपचारिक विनिर्माण परिवहन की तुलना में दोगुना, व्यापार की तुलना में 2.5 गुना अधिक और निर्माण की तुलना में 3.75 गुना अधिक उत्पादक है।
    - हालाँकि, औपचारिक विनिर्माण क्षेत्र में रोज़गार के सीमित अवसरों का सृजन एक चुनौती है, जो भारत की आर्थिक विकास क्षमता को बाधित करती है।
- महिलाओं की भागीदारी: चीन और भारत के बीच श्रम बल भागीदारी में अंतर मुख्य रूप से महिलाओं की भागीदारी के संदर्भ में है। चीन में वर्ष 2007 में महिला श्रम बल भागीदारी दर 66% थी, जो वर्ष 2022 में घटकर 61% हो गई। भारत में वर्ष 2007 में महिला भागीदारी दर 30% के निम्न स्तर पर थी जो वर्ष 2022 में और घटकर 24% हो गई।
- इसका अर्थ यह है कि चीन की तुलना में भारत में महिलाओं का निम्न प्रतिशत श्रम बल में सक्रिय रूप से संलग्न है।

भारत की वर्तमान आर्थिक स्थिति और वर्ष 2007 में चीन की आर्थिक स्थिति के बीच क्या समानताएँ हैं?

- श्रम बल का क्षेत्रीय वितरण: वर्ष 2007 में चीन का 41% श्रम बल कृषि में, 27% उद्योग में (निर्माण सहित) और 32% सेवाओं में संलग्न था। इसकी तुलना में वर्ष 2021 में भारत में कृषि में 44%, उद्योग में 25% और सेवाओं में 31% श्रम बल संलग्न

था। यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि प्रत्येक क्षेत्र में संलग्न लोगों की वास्तविक संख्या दोनों देशों के बीच भिन्न-भिन्न है।

- यह तुलना उन क्षेत्रों के बारे में अंतर्दृष्टि प्रदान करती है जिनमें बड़ी संख्या में लोग कार्यरत हैं।

- कृषि में श्रम बल में गिरावट: चीन में वर्ष 2003 से 2019 के बीच यह गिरावट प्रति वर्ष लगभग 1.5 प्रतिशत अंक थी, जबकि भारत में यह लगभग 1 प्रतिशत अंक दर्ज की गई। यदि यह प्रवृत्ति जारी रही तो भारत में कृषि क्षेत्र छोड़ने वाले लोगों के लिये भविष्य की रोज़गार संभावनाओं को लेकर एक चिंता उत्पन्न होती है।
    - भारत और चीन में कृषि क्षेत्र से संक्रमण का यह अंतर श्रम बाज़ार की गतिशीलता के प्रबंधन और उनकी आबादी के लिये उत्पादक रोज़गार सुनिश्चित करने में दोनों देश के सामने मौजूद अपनी-अपनी चुनौतियों और अवसरों को प्रकट करता है।

आगे की राह

- निवेश गतिविधि बढ़ाना: अनुकूल कारोबारी माहौल बनाकर, नियामक प्रक्रियाओं को सरल बनाकर और उद्योगों के लिये प्रोत्साहन प्रदान करके घरेलू एवं विदेशी दोनों निवेशों को प्रोत्साहित करना।
- निर्यात को बढ़ावा देना: उन क्षेत्रों की पहचान करके निर्यात को बढ़ावा देना जहाँ भारत को तुलनात्मक लाभ प्राप्त हैं, अवसंरचना एवं लॉजिस्टिक्स में सुधार करना और निर्यातकों को सहायता प्रदान करना।
- महिला श्रम बल भागीदारी में वृद्धि करना: लैंगिक समानता उपायों, शिक्षा तक पहुँच और कौशल विकास आदि के माध्यम से कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिये कदम उठाना।
- औपचारिक विनिर्माण में रोज़गार के अवसर पैदा करना: निम्न-कुशल और अर्द्ध-कुशल श्रमिकों के लिये औपचारिक विनिर्माण क्षेत्र में रोज़गार के अधिक अवसर पैदा करने पर ध्यान केंद्रित करना। इसे उन नीतियों के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है जो विनिर्माण क्षेत्र की वृद्धि एवं उत्पादकता, उन्नत प्रौद्योगिकियों के अंगीकरण और कौशल विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा दें।
- अनुकूल निवेश माहौल बनाए रखना: कारोबार सुगमता में लगातार सुधार करना, नौकरशाही बाधाओं को कम करना, पारदर्शिता बढ़ाना और निवेश आकर्षित करने एवं आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिये शासन को सुदृढ़ करना।
- शिक्षा और कौशल विकास पर बल देना: उभरते रोज़गार बाज़ार के लिये कार्यबल को आवश्यक कौशल से लैस करने और नवाचार एवं उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिये शिक्षा एवं कौशल विकास कार्यक्रमों में निवेश करना।
- अवसंरचना को सुदृढ़ करना: आर्थिक गतिविधियों का समर्थन करने और व्यापार एवं वाणिज्य को सुविधाजनक बनाने के लिये परिवहन, लॉजिस्टिक्स, बिजली और डिजिटल कनेक्टिविटी सहित अवसंरचना विकास को प्राथमिकता देना।
- क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना: बाज़ार पहुँच का विस्तार करने, वैश्विक मूल्य शृंखलाओं में भाग लेने और वृद्धि एवं विकास के अवसरों का लाभ उठाने के लिये क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग में सक्रिय रूप से संलग्न होना।

निष्कर्ष

भारत वैश्विक व्यवसायों के लिये बेहद आकर्षक अवसर प्रस्तुत करता है। अपने विशाल बाज़ार, प्रचुर श्रम शक्ति और स्थिर सरकार के साथ यह विनिर्माण एवं निवेश के लिये एक आदर्श गंतव्य की स्थिति रखता है। हालाँकि अपनी क्षमता का पूरी तरह से दोहन करने के लिये भारत को वैश्विक मंच पर अपनी प्रतिस्पर्द्धात्मकता बढ़ाने के लिये सक्रिय उपाय करने होंगे। रणनीतिक सुधारों को लागू कर और एक अनुकूल कारोबारी माहौल का निर्माण कर भारत दुनिया भर के व्यवसायों के लिये एक बेहद आकर्षक केंद्र के रूप में अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर सकता है।

राज्यों की राजकोषीय स्थिति

भारतीय राज्यों की कुल राजस्व में एक तिहाई से अधिक हिस्सेदारी होती है और यह संयुक्त सरकारी व्यय के 60% भाग का व्यय करते हैं और सरकारी उधार में लगभग 40% की हिस्सेदारी रखते हैं। राज्यों के राजकोषीय परिचालन के आकार को देखते हुए उनके वित्त की अद्यतन समझ रखना महत्त्वपूर्ण है ताकि देश की राजकोषीय स्थिति पर साक्ष्य-आधारित निष्कर्ष निकाले जा सकें।

हालाँकि, व्यक्तिगत राज्य बजट डेटा के एकत्रीकरण के अभाव के कारण, सामान्य सरकारी वित्त का एक समेकित दृष्टिकोण आसानी से उपलब्ध नहीं है। प्रत्येक वर्ष यह डेटा भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) द्वारा 'राज्यों के वित्त पर वार्षिक अध्ययन' (Annual Study on State Finances) के प्रकाशन के बाद ही उपलब्ध होता है। नवीनतम प्रकाशन में वर्ष 2023-24 के लिये राज्यों के व्यक्तिगत बजट के प्रमुख आँकड़ों के आधार पर राज्यों की वित्तीय स्थिति का खुलासा किया गया है।

यह आँकड़ा 17 प्रमुख राज्यों का है जो सभी राज्यों के कुल व्यय में 90% से अधिक की हिस्सेदारी रखते हैं। इस प्रकार, उनके बजट के राजकोषीय मुद्दे भारत में राज्यों के वित्त की स्थिति को दर्शाते हैं। भारतीय राज्यों ने कोविड-19 महामारी के बाद से उल्लेखनीय राजकोषीय

समेकन दिखाया है, लेकिन उन्हें अभी भी अपने राजस्व घाटे को नियंत्रित करने में राजकोषीय चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

भारतीय राज्यों ने राजकोषीय समेकन के मामले में कैसा प्रदर्शन किया है?

- **राजकोषीय समेकन:**
  - राजकोषीय समेकन (Fiscal consolidation) परिव्यय और राजस्व नीतियों को समायोजित करके राजकोषीय घाटे एवं सार्वजनिक ऋण को कम करने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है।
  - भारतीय राज्यों ने कोविड-19 महामारी के बाद उल्लेखनीय राजकोषीय समेकन हासिल किया है, जिससे उनका राजकोषीय घाटा वर्ष 2020-21 में सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के 4.1% से घटकर वर्ष 2023-24 (BE) में सकल घरेलू उत्पाद का 2.9% रह गया है।
- **उल्लेखनीय राजकोषीय समेकन:**
  - कोविड-19 की चरम अवधि के दौरान राजस्व में संकुचन के बावजूद भारतीय राज्य, राजकोषीय रूप से विवेकपूर्ण बने रहने में सफल रहे।
  - राज्यों ने महामारी के दौरान स्वास्थ्य व्यय और आजीविका के लिये आपातकालीन प्रावधान प्रदान करने के लिये केंद्र सरकार के साथ समन्वय किया।
  - राज्यों ने अपने परिव्यय की नवीन प्राथमिकता तय की और राजकोषीय घाटे पर तुरंत ही नियंत्रण पा लिया।
  - वस्तु एवं सेवा कर (Goods and Services Tax-GST) संग्रह में सुधार और केंद्रीय राजस्व में वृद्धि से प्रेरित उच्च कर हस्तांतरण से राज्यों को लाभ मिला।
  - महामारी के बाद राज्यों के गैर-GST राजस्व में भी सुधार देखा गया।

भारतीय राज्यों के समक्ष विद्यमान राजकोषीय चुनौतियाँ:

- राजकोषीय घाटे में कमी के बावजूद, भारतीय राज्यों को अभी भी राजकोषीय चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, विशेष रूप से अपने राजस्व घाटे को नियंत्रित करने के संबंध में, जिसमें राजकोषीय घाटे के अनुपात में गिरावट नहीं आई।
  - राजस्व घाटा किसी वित्तीय वर्ष में राजस्व आय पर राजस्व व्यय की अधिकता को संदर्भित करता है।
  - राजस्व संबंधी चुनौतियाँ:
    - आर्थिक गतिविधि और कर संग्रह पर कोविड-19 महामारी का प्रभाव।
    - GST राजस्व और मुआवजे की अनिश्चितता एवं अस्थिरता।
    - केंद्र से कर हस्तांतरण और उसके फ़ॉर्मूला-आधारित आवंटन पर निर्भरता।
    - GST के अंतर्गत विभिन्न करों के समाहित होने से राजकोषीय स्वायत्तता का क्षरण।
    - उपयोगकर्ता शुल्क (user charges), फीस (fees) जैसे गैर-कर राजस्व जुटाने की सीमित गुंजाइश।
    - संपत्ति कर, स्टांप ड्यूटी जैसे स्वयं के करों को एकत्र करने से जुड़े अनुपालन संबंधी और प्रशासनिक मुद्दे।
- **राजस्व घाटे वाले प्रमुख राज्य:**
  - 17 प्रमुख राज्यों में से 13 राज्य राजस्व घाटे की स्थिति रखते हैं और 7 राज्यों में राजस्व घाटा उनके राजकोषीय घाटे का मुख्य प्रेरक है।
    - ये राज्य हैं: आंध्र प्रदेश, हरियाणा, केरल, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल।
    - इनका ऋण-GSDP अनुपात (debt to GSDP ratios) भी अधिक है।
- **व्यय संबंधी चुनौतियाँ:**
  - महामारी और जनसांख्यिकीय कारकों के कारण सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाओं की बढ़ती मांग।
  - विकास और रोज़गार को समर्थन देने के लिये अवसंरचना और शहरी विकास में निवेश की आवश्यकता।
  - गरीबों और कमज़ोर वर्गों के लिये विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं एवं सब्सिडी के राजकोषीय निहितार्थ।
  - सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों के लिये पेंशन और वेतन देनदारियों का बोझ।
  - सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों और अन्य संस्थाओं को दी गई गारंटी, ऋण आदि से उत्पन्न होने वाली आकस्मिक देनदारियाँ।
  - वर्षों से संचित ऋण स्टॉक की संवहनीयता और सेवाप्रदायता (सर्विसिंग)।

राजस्व घाटे के फिर से उभरने के पीछे के कारक:

- कोविड-19 महामारी और विभिन्न सामाजिक कल्याण योजनाओं के कारण राजस्व व्यय पर दबाव।

नोट :

- संरचनात्मक और चक्रीय कारकों के कारण आर्थिक विकास एवं कर राजस्व में मंदी।
- केंद्र सरकार द्वारा GST की कमी के लिये अपर्याप्त मुआवजा।
- वेतन, पेंशन, ब्याज भुगतान आदि प्रतिबद्ध देनदारियों के कारण राजस्व व्यय में लचीलेपन का अभाव।

भारतीय राज्य अपने राजस्व घाटे को कैसे कम कर सकते हैं?

- भारतीय राज्य विभिन्न उपायों को अपनाकर अपने राजस्व घाटे को कम कर सकते हैं, जैसे:
  - सार्वजनिक व्यय को कम करना, विशेषकर गैर-उत्पादक या अनावश्यक वस्तुओं पर, जैसे कि अत्यधिक सब्सिडी, प्रशासनिक लागत आदि।
  - राजस्व बढ़ाना—विशेष रूप से कर और गैर-कर स्रोतों से, जैसे कर अनुपालन में सुधार लाना, कर आधार का विस्तार करना, कर दरों को तर्कसंगत बनाना या सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की आय में वृद्धि करना आदि।
  - तेज़ आर्थिक वृद्धि प्राप्त करना, जिससे राजस्व संग्रह को बढ़ावा मिल सकता है और सामाजिक कल्याण योजनाओं पर व्यय कम हो सकता है।
  - केंद्र सरकार से प्राप्त ब्याज-मुक्त ऋण या अनुदान को राजस्व घाटे में कमी लाने के लक्ष्यों से जोड़ना, जो राजकोषीय अनुशासन के लिये प्रोत्साहन पैदा कर सकता है।
  - वित्त आयोगों (FCs) द्वारा सुझाए गए दृष्टिकोणों के आधार पर राजस्व घाटे में कमी के लिये प्रदर्शन प्रोत्साहन अनुदान लागू करना।

भारतीय राज्यों के लिये राजस्व घाटे को कम करने के क्या लाभ हैं?

- राजकोषीय स्वास्थ्य और राज्य वित्त की स्थिरता में सुधार करना तथा उनके ऋण बोझ को कम करना।
- व्यय की गुणवत्ता को बढ़ाना और कुल व्यय में पूंजीगत व्यय का हिस्सा बढ़ाना।
- आधारभूत संरचना और मानव पूंजी में सार्वजनिक निवेश को बढ़ावा देना, जो आर्थिक वृद्धि और विकास को बढ़ावा दे सकता है।
- राज्य के वित्त में निवेशकों और लेनदारों की विश्वसनीयता एवं भरोसे को सुदृढ़ करना।
- व्यापक आर्थिक स्थिरता (macroeconomic stability) और केंद्र सरकार के साथ समन्वय को सुनिश्चित करना।

आगे की राह:

- **एक विश्वसनीय और संवहनीय राजकोषीय समायोजन योजना अपनाना:**
  - अल्पकालिक और दीर्घकालिक राजकोषीय उद्देश्यों को संतुलित किया जाए।
  - प्रत्येक राज्य के आर्थिक और संस्थागत संदर्भ को ध्यान में रखा जाए।
  - लागत में कटौती करने और राजस्व बढ़ाने के उपायों को चिह्नित किया जाए तथा इन्हें लागू किया जाए।
- **राजकोषीय पारदर्शिता और जवाबदेहिता में सुधार लाना:**
  - बजटीय प्रदर्शन और परिणामों पर समयबद्ध एवं विश्वसनीय डेटा प्रदान किया जाए।
  - वित्त आयोगों और FRBM अधिनियमों द्वारा निर्धारित राजकोषीय नियमों एवं लक्ष्यों का पालन किया जाए।
  - राजकोषीय प्रदर्शन और परिणामों की नियमित रूप से निगरानी एवं मूल्यांकन हो।
- **राजकोषीय क्षमता और स्वायत्तता बढ़ाना:**
  - कर संरचना और प्रशासन को तर्कसंगत बनाया जाए।
  - राजस्व स्रोतों में विविधता लाई जाए।
  - परिसंपत्तियों और संसाधनों का लाभ उठाया जाए।
  - प्रतिस्पर्द्धी दरों पर बाज़ार उधारी तक पहुँच बनाई जाए।
- **राजकोषीय सहयोग और समन्वय को बढ़ावा देना:**
  - GST मुआवजे और हस्तांतरण से संबंधित लंबित मुद्दों का समाधान किया जाए।
  - राजकोषीय नीतियों और संकेतकों में सामंजस्य स्थापित किया जाए।
  - अंतर-सरकारी मंचों और तंत्रों में भागीदारी की जाए।
  - सर्वोत्तम अभ्यासों और अनुभवों की साझेदारी हो।

FRBM अधिनियम क्या है?

- **परिचय:**
  - राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन (Fiscal Responsibility and Budget Management- FRBM) अधिनियम को अगस्त 2003 में लागू किया गया था।
  - इसका उद्देश्य केंद्र सरकार को राजकोषीय प्रबंधन और दीर्घकालिक व्यापक-आर्थिक स्थिरता के संबंध में अंतर-

पीढ़ीगत समानता सुनिश्चित करने के लिये ज़िम्मेदार बनाना है।
- इस अधिनियम में केंद्र सरकार के ऋण और घाटे की सीमा निर्धारित करने की परिकल्पना की गई है।
- इसमें राजकोषीय घाटे को सकल घरेलू उत्पाद के 3% तक सीमित कर दिया गया है।
- यह सुनिश्चित करने के लिये कि राज्य भी वित्तीय रूप से विवेकपूर्ण हों, वर्ष 2004 में 12वें वित्त आयोग की अनुशंसाओं में राज्यों को प्रदत्त ऋण राहत को उनके द्वारा समान कानूनों के प्रवर्तन से संबद्ध किया गया।
- तब से राज्यों ने अपने-अपने वित्तीय उत्तरदायित्व विधान (Financial Responsibility Legislation) लागू किये हैं, जो उनके वार्षिक बजट घाटे पर सकल राज्य घरेलू उत्पाद (GDP) के 3% की सदृश सीमा निर्धारित करते हैं।

- यह केंद्र सरकार के राजकोषीय परिचालन और मध्यम आवधिक ढाँचे में राजकोषीय नीति के परिचालन में अधिक पारदर्शिता को भी अनिवार्य बनाता है।
- केंद्र सरकार के बजट में एक मध्यम आवधिक राजकोषीय नीति वक्तव्य (Medium-Term Fiscal Policy Statement) शामिल होता है जो तीन-वर्षीय समय सीमा में वार्षिक राजस्व और राजकोषीय घाटे के लक्ष्यों को निर्दिष्ट करता है।
- इस अधिनियम को लागू करने के नियमों को जुलाई 2004 में अधिसूचित किया गया था। इन नियमों में वर्ष 2018 में संशोधन किया गया था और हाल ही में एक संशोधन के साथ मार्च 2023 के लिये 3.1% का लक्ष्य निर्धारित किया गया था।
- एन.के. सिंह समिति (वर्ष 2016 में गठित) ने अनुशंसा की थी कि सरकार को 31 मार्च, 2020 तक राजकोषीय घाटे को सकल घरेलू उत्पाद के 3% तक करने का लक्ष्य रखना चाहिये, जिसे घटाकर वर्ष 2020-21 में 2.8% और वर्ष 2023 में 2.5% करना चाहिये।
- **FRBM अधिनियम के तहत छूट:**
  - एस्केप क्लाउज़ (Escape Clause):
    - इस अधिनियम की धारा 4(2) के तहत, केंद्र कुछ आधारों का हवाला देते हुए वार्षिक राजकोषीय घाटे के लक्ष्य के बाहर जा सकता है। ये आधार हो सकते हैं:
      - राष्ट्रीय सुरक्षा, युद्ध
      - राष्ट्रीय आपदा
      - कृषि का पतन
      - संरचनात्मक सुधार
      - किसी तिमाही में वास्तविक उत्पादन वृद्धि में पिछली चार तिमाहियों के औसत से कम से कम तीन प्रतिशत अंक की गिरावट।

जल संबंधी भारत की चुनौतियाँ और हर घर जल योजना

बुनियादी स्वास्थ्य और स्वच्छता सुनिश्चित करने के लिये प्रत्येक परिवार का पीने योग्य नल जल तक पहुँच होना एक मूलभूत आवश्यकता है। हालाँकि, ग्रामीण भारत में आबादी का एक बड़ा भाग अभी भी इस आवश्यक सुविधा से वंचित है।

भारत के लगभग 25 करोड़ परिवारों में से 19.5 करोड़ परिवार ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। दुर्भाग्य से प्रति व्यक्ति प्रति दिन 55 लीटर स्वच्छ पेयजल ('हर घर जल' योजना के तहत परिकल्पित) प्रदान कर सकने वाले नल जल कनेक्शन ग्रामीण क्षेत्रों में दुर्लभ ही हैं।

पीने योग्य नल जल तक पहुँच की इस कमी के ग्रामीण आबादी के लिये कई निहितार्थ हैं। यह खाना पकाने, साफ-सफाई और व्यक्तिगत स्वच्छता जैसी दैनिक गतिविधियों में बाधा उत्पन्न करता है। समुदायों को प्राय: कुओं, हैंडपंप या प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त जल जैसे वैकल्पिक स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है, जो हमेशा ही स्वच्छता और सुरक्षा के आवश्यक मानकों को पूरा करने में सक्षम नहीं हो सकते हैं।

भारत की ग्रामीण जल कनेक्टिविटी की चुनौतियों को हल करने के लिये 'हर घर जल' मिशन का प्रभावी कार्यान्वयन आवश्यक है।

'हर घर जल' योजना:

- 'हर घर जल' योजना 'जल जीवन मिशन' का एक भाग है जिसे भारत में जल शक्ति मंत्रालय द्वारा लॉन्च किया गया है। इसका लक्ष्य देश के हर घर को पाइप जल कनेक्शन उपलब्ध कराना है।
  - 'हर घर जल' (water in every home) का तात्पर्य है प्रत्येक घर तक जल की उपलब्धता, जो इस योजना के उद्देश्य को परिलक्षित करता है।
- 'हर घर जल' योजना के परिणामस्वरूप भारत में उन परिवारों के प्रतिशत में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है जिनकी अब पाइप जल कनेक्शन तक पहुँच है (लगभग 64%) और यह मिशन शुरू होने के बाद से उल्लेखनीय प्रगति का संकेत देती है।
- इस योजना में घरों तक पाइप जल कनेक्शन उपलब्ध कराने के अलावा ग्रामीण स्कूलों, आँगनवाड़ी और सामुदायिक भवनों में पाइप जल कनेक्शन की स्थापना करना भी शामिल है।

'हर घर जल' योजना की उपलब्धियाँ:

- वर्ष 2019 के बाद से लगभग नौ करोड़ घरों को पाइप जल तक अनन्य पहुँच प्राप्त हुई है।
- गुजरात, हरियाणा और पंजाब जैसे कुछ राज्यों ने 'हर घर जल' योजना के 100% अनुपालन की सूचना दी है।
- राज्यों द्वारा रिपोर्ट की गई सूचना के अनुसार 1,68,157 ग्रामों को 'हर घर जल' ग्रामों के रूप में निर्दिष्ट किया गया है।
  - रिपोर्ट किये गए 'हर घर जल' ग्रामों में से लगभग 35% (लगभग 59000 ग्राम) को आधिकारिक रूप से 'प्रमाणीकृत' (certified) भी किया गया है।
- अनुमान है कि अप्रैल 2024 तक ग्रामों में केवल 75% ग्रामीण घरों की नल जल तक पहुँच होगी।

'हर घर जल' योजना से संबद्ध चुनौतियाँ:

- कोविड-19 महामारी: वैश्विक महामारी का विभिन्न क्षेत्रों पर व्यापक प्रभाव पड़ा है, जिसमें 'हर घर जल' जैसी अवसंरचनात्मक विकास परियोजनाएँ भी शामिल हैं।
  - महामारी-प्रेरित प्रतिबंधों ने पाइप और अन्य निर्माण संसाधनों जैसी आवश्यक सामग्रियों की उपलब्धता को प्रभावित किया है, जिसके परिणामस्वरूप और देरी हुई है और इससे कार्यान्वयन की गति में बाधा उत्पन्न हुई है।
- जल संदूषण: पश्चिम बंगाल और केरल जैसे कुछ क्षेत्रों में जल संदूषण की समस्या बनी हुई है, जिससे सुरक्षित पेयजल तक पहुँच सुनिश्चित करने में बाधाएँ उत्पन्न हो रही हैं।
  - इसके अलावा, विभिन्न राज्यों में संतोषजनक गुणवत्तायुक्त टैंक, टंकी और जल कनेक्शन के निर्माण के लिये कुशल श्रमिकों की भी कमी है।
- कार्यान्वयन में देरी: कुछ मामलों में इस योजना के तहत घरों में नल कनेक्शन प्रदान करने का कार्य अभी शुरू भी नहीं हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप लक्ष्य प्राप्त करने में देरी हो रही है।
  - योजना के दायरे में आने वाले लगभग 19.5 करोड़ परिवारों में से लगभग 1 करोड़ परिवारों (कुल का ~5%) ने अभी तक कोई कार्य शुरू नहीं किया है।
- प्रमाणीकरण और कनेक्टिविटी: जबकि उत्तर प्रदेश और राजस्थान जैसे राज्यों में नल कनेक्शन की संख्या बढ़ाने में प्रगति हुई है लेकिन ग्रामों का प्रमाणीकरण और उनकी पूर्ण कनेक्टिविटी अभी भी निम्न स्तर पर है। यह परिदृश्य आगे और प्रयासों की आवश्यकता को प्रकट करता है।
  - अधिकांश गाँवों में सभी घरों तक कनेक्शन का लक्ष्य पूरा नहीं हुआ है। इन गाँवों ने लगभग आधे से तीन-चौथाई घरों को ही पाइप जल कनेक्शन से जोड़ सकने में सफलता हासिल की है।

'हर घर जल' योजना को अधिक प्रभावी बनाने के लिये कौन-से कदम उठाये जा सकते हैं ?

- कुशल कार्यबल को सुदृढ़ करना: प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रदान करके और निर्माण एवं जल प्रबंधन क्षेत्रों में कौशल विकास को बढ़ावा देकर कुशल जनशक्ति की कमी को दूर करने का प्रयास किया जाना चाहिये।
- जल गुणवत्ता निगरानी: जल संदूषण की समस्याओं को कम करने के लिये सुदृढ़ जल गुणवत्ता निगरानी प्रणालियों एवं उपायों (नियमित परीक्षण एवं उपचार सहित) को लागू करने के माध्यम से सुरक्षित पेयजल की आपूर्ति सुनिश्चित की जा सकती है।
- त्वरित कार्यान्वयन: जिन गाँवों और घरों में अभी तक कार्य शुरू नहीं हुआ है, उन पर ध्यान केंद्रित करते हुए योजना के कार्यान्वयन में तेज़ी लाई जाए और लक्ष्यों को पूरा करने के लिये समय पर निष्पादन सुनिश्चित किया जाए।
- प्रमाणीकरण और कनेक्टिविटी अभियान: प्रमाणीकरण प्रक्रिया को सुव्यवस्थित कर, समुदायों के बीच जागरूकता को बढ़ावा देकर और नल जल कनेक्शन तक पहुँच को सक्षम करने के लिये आवश्यक अवसंरचना प्रदान कर प्रमाणीकृत और पूरी तरह से कनेक्टेड गाँवों की संख्या में वृद्धि की जाए।
- निगरानी और सत्यापन प्रक्रियाएँ: रिपोर्ट किये गए आँकड़ों की सटीकता सुनिश्चित करने के लिये सुदृढ़ निगरानी और सत्यापन प्रक्रिया सुनिश्चित किया जाना अत्यंत आवश्यक है।
  - मिशन की प्रगति को सत्यापित करने और पारदर्शिता बढ़ाने के लिये स्वतंत्र आकलन, मूल्यांकन और ऑडिट को नियोजित किया जा सकता है।
- पारदर्शी और विश्वसनीय सूचना तंत्र की स्थापना करना: केंद्र सरकार को इस मिशन की प्रगति के संबंध में पारदर्शी और विश्वसनीय सूचना प्रदान करने के लिये एक तंत्र स्थापित करना चाहिये।
  - इससे हितधारकों और आम लोगों को मिशन की उपलब्धियों, चुनौतियों और उन क्षेत्रों की स्पष्ट समझ हो सकेगी जिन पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

भारत के लिये जनसांख्यिकीय संरचना का लाभ उठाने का अवसर

भारत विश्व के सबसे अधिक आबादी वाले देशों में सबसे युवा है, जहाँ की औसत आयु 29 वर्ष है। भारत अपनी विशाल आबादी के साथ अभी एक ऐसे चरण में है जिसमें इसकी कार्यशील आयु आबादी की वृद्धि हो रही है और इसका वृद्धावस्था निर्भरता अनुपात वर्ष 2075 में 37% तक पहुँच जाएगा। वृद्ध आबादी में वृद्धि के साथ वैश्विक जनसंख्या वृद्ध होती जा रही है, जबकि प्रजनन दर में भारी कमी आई है। इससे भारत को अपनी अनुकूल जनसांख्यिकीय संरचना का लाभ उठाने का एक अनूठा अवसर प्राप्त हो रहा है, जो इसकी आर्थिक वृद्धि और सामाजिक विकास को बढ़ावा दे सकता है। हालाँकि, इस क्षमता को प्राप्त करने के लिये भारत को कुछ प्रमुख चुनौतियों को संबोधित करने और विभिन्न क्षेत्रों में कुछ रणनीतिक सुधारों को लागू करने की आवश्यकता है।

भारत के जनसांख्यिकीय लाभांश के लिये कौन-से अवसर मौजूद हैं?

- **उच्च आर्थिक विकास:**
  - एक विशाल और युवा कार्यशील आबादी श्रम आपूर्ति, उत्पादकता, बचत एवं निवेश को बढ़ा सकती है, जिससे उच्च जीडीपी विकास और प्रति व्यक्ति आय की स्थिति प्राप्त हो सकती है।
- **वृहत् प्रतिस्पर्द्धात्मकता:**
  - एक कुशल कार्यबल वैश्विक बाज़ार में, विशेष रूप से विनिर्माण, सेवाओं और कृषि जैसे श्रम-गहन क्षेत्रों में भारत की प्रतिस्पर्द्धात्मकता को बढ़ा सकता है।
  - भारत विकसित देशों के वृद्ध कार्यशील बाज़ारों (ageing markets) में अपने निर्यात की बढ़ती मांग से भी लाभान्वित हो सकता है।
- **सामाजिक विकास:**
  - यह स्वास्थ्य, शिक्षा, लैंगिक समानता और सामाजिक संसंजन में सुधार लाकर सामाजिक विकास में योगदान दे सकता है।
  - एक सशक्त आबादी लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं और नागरिक सहभागिता में भी अधिक सक्रिय रूप से भागीदरी कर सकती है।
- **नवाचार और उद्यमिता:**
  - एक रचनात्मक आबादी विज्ञान, प्रौद्योगिकी, कला एवं संस्कृति जैसे विभिन्न क्षेत्रों में नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा दे सकती है।
  - एक आकांक्षी आबादी आर्थिक विविधीकरण के लिये नए बाज़ारों और अवसरों का सृजन भी कर सकती है।

जनसांख्यिकीय लाभांश प्राप्त करने की राह की प्रमुख चुनौतियाँ

- **बेरोज़गारी और रोज़गारहीन विकास:**
  - उपयुक्त नीतियों के बिना, कार्यशील आयु आबादी में वृद्धि से बेरोज़गारी बढ़ सकती है, जिससे आर्थिक और सामाजिक संकट बढ़ सकते हैं।
  - भारत में रोज़गारहीन विकास व्यापक रूप से मौजूद है, जहाँ मौजूदा कार्यशील आयु आबादी का भी पूरी तरह समावेश नहीं हो पाता है।
  - 'सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी' (CMIE) के अनुसार जनवरी 2023 में भारत की बेरोज़गारी दर 7.1 प्रतिशत के स्तर पर थी।
- **महिला श्रम बल भागीदारी में गिरावट:**
  - सामाजिक-सांस्कृतिक कारक और बढ़ती पारिवारिक आय भारत की महिला श्रम बल भागीदारी (FLFP) में गिरावट के प्रमुख कारण रहे हैं।
  - योग्यता-प्राप्त महिलाओं का एक बड़ा भाग स्थानीय क्षेत्र में (विशेष रूप से ग्रामीण इलाकों में) उपयुक्त रोज़गार अवसर न होने से लेकर पारिवारिक उत्तरदायित्वों और विवाह जैसे विभिन्न कारणों से कार्यबल से बाहर हो जाता है।
  - भारत की FLFP दर वैश्विक औसत से नीचे है।
    - CMIE के आँकड़ों के अनुसार, भारत में जहाँ पुरुष श्रम बल भागीदारी दर 67.4% थी, वहीं महिला श्रम बल भागीदारी दर 9.4% तक निम्न थी (दिसंबर 2021 तक की स्थिति)।
- **कौशल और मानव विकास की कमी:**
  - वर्तमान समय में बढ़ते नए क्षेत्रों और अवसरों के कारण 'स्किलिंग' और 'रीस्किलिंग' महत्त्वपूर्ण है।
  - निम्न मानव पूंजी आधार और कम कुशल श्रम बल के कारण भारत अवसरों का लाभ उठाने में सक्षम नहीं भी हो सकता है।
  - एसोचैम (ASSOCHAM) के अनुसार, केवल 20-30% इंजीनियरों को ही उनके कौशल के अनुकूल नौकरी मिल पाती है। इस प्रकार, निम्न मानव पूंजी आधार और कौशल की कमी एक बड़ी चुनौती है।

- UNDP के मानव विकास सूचकांक (HDI) (2021-22) में भारत 191 देशों की सूची में 132वें स्थान पर था, जो चिंताजनक है।
  - HDI मानव विकास के तीन बुनियादी आयामों में औसत उपलब्धियों की माप करता है। ये तीन आयाम हैं: सुदीर्घ एवं स्वस्थ जीवन, ज्ञान तक पहुँच और एक सभ्य जीवन स्तर।

भारत अपने जनसांख्यिकीय लाभांश में कैसे सुधार कर सकता है ?

- **कौशल और रोज़गार सृजन:**
  - भारत के पास लगभग 500 मिलियन लोगों का विशाल श्रम बल मौजूद है, जिसके आने वाले वर्षों में और बढ़ने की उम्मीद है।
  - हालाँकि, उनमें से अधिकांश या तो अकुशल हैं या अल्प-कुशल हैं और बदलते बाज़ार परिदृश्य में निम्न उत्पादकता और रोज़गार योग्यता रखते हैं।
- **LFPR में सुधार करना:**
  - भारत को श्रम बल भागीदारी दर (LFPR) में सुधार करने की ज़रूरत है, जो वर्तमान में लगभग 50 प्रतिशत है। इसके लिये प्रत्येक वर्ष रोज़गार बाज़ार में प्रवेश करने वाले युवाओं के लिये अधिकाधिक रोज़गार अवसरों का सृजन करना होगा।
  - इसके लिये निम्न उत्पादकता वाले कृषि क्षेत्र से उच्च उत्पादकता वाले विनिर्माण एवं सेवा क्षेत्रों की ओर आगे बढ़ने की आवश्यकता है, जो अधिक श्रम को अवशोषित कर सकते हैं और अधिक आय उत्पन्न कर सकते हैं।
- **कौशल विकास कार्यक्रमों में सुधार लाना:**
  - भारत द्वारा अपने कौशल विकास कार्यक्रमों की गुणवत्ता एवं प्रासंगिकता बढ़ाने की भी आवश्यकता है, जिनका उद्देश्य विभिन्न क्षेत्रों में लाखों श्रमिकों को प्रशिक्षित और प्रमाणीकृत करना है।
  - इन कार्यक्रमों को उद्योग की मांग, वैश्विक मानकों और उभरती प्रौद्योगिकियों के साथ संरेखित किया जाना चाहिये तथा श्रमिकों के लिये आजीवन अधिगम (लर्निंग) के अवसर प्रदान करने चाहिये।
  - हालाँकि, इनके दायरे को बढ़ाने और इन्हें बेहतर बनाने की ज़रूरत है ताकि और श्रमिकों तक (विशेष रूप से अनौपचारिक क्षेत्र के श्रमिकों तक) पहुँच बन सके।
- **विज़न 2025:**
  - कौशल मिशन में कौशल विकास एवं उद्यमिता मंत्रालय (MSDE) का विज़न 2025 शामिल है जो शिक्षा एवं कौशल के बीच संबंधों में सुधार लाने, औपचारिक कौशल के लिये मांग को उत्प्रेरित करने और एक उच्च-कुशल पारितंत्र का सृजन करने पर लक्षित है।
- **स्वास्थ्य और कल्याण:**
  - भारत ने पिछले कुछ वर्षों में जीवन प्रत्याशा, शिशु मृत्यु दर और मातृ मृत्यु अनुपात जैसे अपने स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार लाने में उल्लेखनीय प्रगति की है।
    - हालाँकि, अपनी विशाल एवं विविध आबादी के लिये स्वास्थ्य समानता और गुणवत्ता सुनिश्चित करने में इसे अभी भी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।
  - भारत पर संचारी और गैर-संचारी रोगों का भारी बोझ है, जो इसके कार्यबल के स्वास्थ्य और उत्पादकता को प्रभावित करते हैं।
    - भारत सभी को पर्याप्त और सस्ती स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान कर सकने के लिये स्वास्थ्य अवसंरचना, मानव संसाधन और वित्तीय संसाधन की कमी भी रखता है।
  - सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली में निवेश:
    - भारत को अपनी सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली में और अधिक निवेश करने की आवश्यकता है, जो इसकी लगभग 70 प्रतिशत आबादी की सेवा करती है। इसे अपने प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल नेटवर्क को भी सुदृढ़ करने की आवश्यकता है, जो अधिकांश लोगों के लिये संपर्क का पहला बिंदु होता है।
  - दवाओं की वहनीयता सुनिश्चित करना:
    - भारत 50 बिलियन अमेरिकी डॉलर के उद्योग के साथ दवाओं और टीकों के मामले में विश्व का अग्रणी देश है। विश्व में DPT, BCG और खसरे के टीकों में लगभग 60 प्रतिशत हिस्सेदारी भारत की है।
    - हालाँकि, यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि ये दवाएँ और टीके समाज के सभी वर्गों के लिये सुलभ और वहनीय हों।
- **शिक्षा और नवाचार:**
  - भारत में युवा और प्रतिभाशाली लोगों का एक बड़ा समूह मौजूद है, जो इसकी आर्थिक वृद्धि और सामाजिक विकास में योगदान दे सकता है।

- हालाँकि, इसके बच्चों और युवाओं में निरक्षरता, स्कूल ड्रॉप आउट और लर्निंग की कमी की दर भी उच्च है, जो उनकी क्षमता और आकांक्षाओं को प्रभावित करती है।
- शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच सुनिश्चित करना:
  - भारत को प्री-प्राइमरी से लेकर उच्चतर माध्यमिक तक स्कूली शिक्षा के सभी स्तरों पर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की सार्वभौमिक पहुँच सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।
  - इसे पाठ्यक्रम, शिक्षाशास्त्र, मूल्यांकन और शिक्षक प्रशिक्षण प्रणालियों को संवृद्ध कर अपने छात्रों के अधिगम प्रतिफलों में सुधार लाने की भी आवश्यकता है।
  - इसके साथ ही लिंग, जाति, क्षेत्र और सामाजिक-आर्थिक स्थिति के आधार पर शिक्षा में व्याप्त असमानताओं को भी कम करने की आवश्यकता है।

प्रमुख सरकारी पहलें

- **कौशल उन्नयन और उद्यमिता के लिये:**
  - जन शिक्षण संस्थान
  - प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना
  - राष्ट्रीय प्रशिक्षुता संवर्द्धन योजना
  - स्किल इंडिया
  - मेक इन इंडिया
  - स्टार्ट-अप इंडिया
- **स्वास्थ्य और कल्याण के लिये:**
  - आयुष्मान भारत
  - स्वच्छ भारत मिशन
  - प्रधानमंत्री भारतीय जनऔषधि परियोजना
- **शिक्षा और नवाचार के लिये:**
  - समग्र शिक्षा कार्यक्रम
  - राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

आगे की राह

- **क्षमता दृष्टिकोण का अनुसरण करना:**
  - मानव कल्याण और विकास की बहुआयामी प्रकृति को चिह्नित करें और प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद या हेड काउंट अनुपात जैसे संकीर्ण संकेतकों से आगे बढ़ें।
  - भारत में विभिन्न समूहों और क्षेत्रों की क्षमताओं में अंतराल एवं असमानताओं की पहचान करें और लक्षित हस्तक्षेपों एवं सशक्तिकरण रणनीतियों के माध्यम से उन्हें संबोधित करें।
  - स्वयं के जीवन को आकार देने और उन पर असर करने वाले निर्णयों को प्रभावित करने में लोगों की, विशेष रूप से समाज के हाशिए पर स्थित और कमजोर वर्गों की एजेंसी और भागीदारी को बढ़ावा दिया जाए।
  - विकास नीतियों और अभ्यासों के लिये मार्गदर्शक सिद्धांतों के रूप में सामाजिक न्याय एवं मानवाधिकारों को बढ़ावा देना तथा शासन में जवाबदेही एवं पारदर्शिता सुनिश्चित करना।
  - नवाचार और रचनात्मकता की संस्कृति को बढ़ावा देना जो सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन के लिये भारत की युवा आबादी की प्रतिभा एवं आकांक्षाओं का लाभ उठा सके।
- **विनिर्माण गतिविधियों में तेज़ी लाना:**
  - लाखों नौकरियों का सृजन करने और निर्यात को बढ़ावा देने हेतु विनिर्माण क्षेत्र की क्षमता का दोहन करने की ज़रूरत है।
  - विनिर्माण विशाल और युवा श्रम बल, विशेषकर निम्न या मध्यम कौशल वाले लोगों के लिये रोज़गार के अवसर प्रदान कर सकता है।
  - विनिर्माण वैश्विक बाज़ार में भारत की प्रतिस्पर्द्धात्मकता को बढ़ा सकता है, इसकी निर्यात टोकरी में विविधता ला सकता है और इसके व्यापार घाटे को कम कर सकता है।
  - विनिर्माण अर्थव्यवस्था में नवाचार और प्रौद्योगिकी उन्नयन को भी प्रेरित कर सकता है।
- **कारोबारी माहौल को बढ़ाना:**
  - भारत को विनिर्माण में अधिक घरेलू और विदेशी निवेश आकर्षित करने के लिये अपने कारोबारी माहौल, अवसंरचना, लॉजिस्टिक्स एवं व्यापार सुविधा में सुधार लाने की ज़रूरत है।
- **श्रम-गहन क्षेत्रों को बढ़ावा देना:**
  - भारत को वस्त्र, परिधान, चर्म, जूते, खिलौने और इलेक्ट्रॉनिक्स जैसे श्रम-गहन क्षेत्रों को भी बढ़ावा देने की आवश्यकता है, जिनमें उच्च रोज़गार लोच और निर्यात क्षमता है।
  - भारत को सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों (MSMEs) को भी समर्थन देने की ज़रूरत है, जो विनिर्माण क्षेत्र की रीढ़ हैं। यह समर्थन ऋण, प्रौद्योगिकी, बाज़ार एवं कौशल तक पहुँच प्रदान करने के रूप में दिया जा सकता है।
- **डिजिटल प्रौद्योगिकियों का लाभ उठाना:**
  - डिजिटल प्रौद्योगिकियाँ अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में विकास, नवाचार और समावेशन के नए अवसर प्रदान कर सकती हैं।

नोट :

- डिजिटल प्रौद्योगिकियाँ लाखों लोगों के लिये, विशेष रूप से दूरदराज के या कम सेवा वाले क्षेत्रों के लोगों के लिये सूचना, सेवा, बाज़ार और वित्त तक पहुँच को सक्षम कर सकती हैं।
- डिजिटल प्रौद्योगिकियाँ शासन, शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, कृषि, खुदरा और ई-कॉमर्स जैसे विभिन्न क्षेत्रों में दक्षता, पारदर्शिता, जवाबदेही एवं गुणवत्ता की भी वृद्धि कर सकती हैं।

भारतीय रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण

रुपया (Rupee) भारत की आधिकारिक मुद्रा है, जो सांकेतिक जीडीपी (Nominal GDP) के मामले में दुनिया की पाँचवीं और क्रय शक्ति समानता (Purchasing Power Parity-PPP) के मामले में तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है । भारत के कुछ पड़ोसी देशों, जैसे भूटान और नेपाल में भी रुपए का उपयोग विधिक मुद्रा के रूप में किया जाता है। हालाँकि, अंतर्राष्ट्रीय विदेशी मुद्रा बाज़ार और व्यापार लेनदेन में अत्यंत कम हिस्सेदारी के साथ रुपया अभी भी वैश्विक मुद्रा बन सकने से बहुत दूर है।

रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण (Internationalisation of the rupee) व्यापार, निवेश, रिज़र्व और अन्य उद्देश्यों के लिये भारत के बाहर रुपए के उपयोग एवं स्वीकृति को बढ़ाने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है। रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण करने से भारत को कई लाभ प्राप्त हो सकते हैं, हालाँकि इसमें कई चुनौतियाँ और जोखिम भी शामिल हैं।

रुपए के अंतर्राष्ट्रीयकरण की वर्तमान स्थिति

- **अंतर्राष्ट्रीयकरण में सीमित प्रगति :**
  - रुपया अभी अंतर्राष्ट्रीयकरण से बहुत दूर है, जहाँ वैश्विक विदेशी मुद्रा बाज़ार में रुपए की दैनिक औसत हिस्सेदारी मात्र 1.6% है, जबकि वैश्विक माल व्यापार में भारत की हिस्सेदारी मात्र 2% है।
- **रुपए के अंतर्राष्ट्रीयकरण को बढ़ावा देने के लिये उठाए गए कदम:**
  - रुपए के अंतर्राष्ट्रीयकरण (जैसे बाह्य वाणिज्यिक उधारी को रुपए में सक्षम करना) को बढ़ावा देने के लिये भारत ने कुछ कदम उठाए हैं, जहाँ भारतीय बैंकों को रूस, संयुक्त अरब अमीरात, श्रीलंका और मॉरीशस के बैंकों के लिये रुपया वोस्त्रो खाते (Rupee Vostro accounts) खोलने के लिये प्रोत्साहित किया गया है और लगभग 18 देशों के साथ रुपए में व्यापार करने के लिये एक तंत्र स्थापित किया गया है।
  - हालाँकि ऐसे लेन-देन की मात्रा सीमित ही रही हैं और भारत अभी भी रूस से अमेरिकी डॉलर में तेल खरीद रहा है।
- **मुद्रा विनिमय से जुड़ी बाधाएँ:**
  - चालू खाते और पूंजी खाते में उल्लेखनीय घाटे के परिदृश्य में भारत पूर्ण पूंजी खाता परिवर्तनीयता (capital account convertibility)—अर्थात् स्थानीय वित्तीय निवेश परिसंपत्तियों की विदेशी परिसंपत्तियों में और विदेशी परिसंपत्तियों की स्थानीय वित्तीय निवेश परिसंपत्तियों मुक्त आवाजाही—की अनुमति नहीं देता है, जहाँ पूंजी पलायन (capital flight)—अर्थात् मौद्रिक नीतियों/वृद्धि के अभाव के कारण भारत से पूंजी का बहिर्वाह—और विनिमय दर की अस्थिरता (exchange rate volatility) के अतीत के अनुभवों से प्रेरित होकर अपनी मुद्रा के विनिमय पर उल्लेखनीय बाधाएँ लगा रखी हैं।
- **पड़ोसी देशों की चिंताएँ :**
  - पड़ोसियों द्वारा व्यक्त की गई चिंताओं को ध्यान में रखे बिना रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण शुरू नहीं किया जा सकता।
  - वर्ष 2016 में भारत द्वारा विमुद्रीकरण (demonetisation) ने भी भारतीय रुपए के प्रति, विशेष रूप से भूटान और नेपाल में, भरोसे को झटका दिया।
  - दोनों देशों में RBI द्वारा अतिरिक्त नीतिगत बदलावों (आगे फिर नोटबंदी सहित) का भय बना हुआ है।
  - वर्ष 2023 में 2,000 रुपए के नोट को वापस लेने के कदम से भी रुपए के प्रति भरोसे पर असर पड़ा है।

रुपए के अंतर्राष्ट्रीयकरण के क्या लाभ हैं ?

- **विदेशी मुद्राओं पर निर्भरता कम होना:**
  - रुपए के अंतर्राष्ट्रीयकरण से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और वित्तीय लेनदेन के लिये अमेरिकी डॉलर जैसी विदेशी मुद्राओं पर भारत की निर्भरता कम हो जाएगी।
  - इससे भारत की आर्थिक संप्रभुता बढ़ेगी और मुद्रा में उतार-चढ़ाव का जोखिम कम होगा।
- **वैश्विक व्यापार में वृद्धि:**
  - रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण संलग्न पक्षकारों को प्रत्यक्ष रूप से रुपए में लेनदेन की अनुमति देकर सहज अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की सुविधा प्रदान कर सकता है।
  - इससे मुद्रा रूपांतरण (currency conversions) की आवश्यकता समाप्त हो जाएगी, लेनदेन लागत कम हो जाएगी और सीमा-पार व्यापार सरल हो जाएगा।

- **संवृद्ध वित्तीय एकीकरण:**
  - विश्व स्तर पर मान्यता प्राप्त और व्यापक रूप से उपयोग किया जाने वाला रुपया वित्तीय एकीकरण को बढ़ा सकता है।
  - यह विदेशी निवेशकों को आकर्षित करेगा और पूंजी प्रवाह को बढ़ावा देगा, जिससे भारतीय वित्तीय बाज़ारों में निवेश के अधिक अवसर बनेंगे और तरलता आएगी।
- **बेहतर मौद्रिक नीति प्रभावशीलता:**
  - रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण भारत की मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता को बढ़ा सकता है।
  - व्यापक अंतरराष्ट्रीय पहुँच के साथ, भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) मुद्रास्फीति को प्रबंधित करने और आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिये विनिमय दर (exchange rate) को एक साधन के रूप में उपयोग कर सकता है।
  - यह मौद्रिक स्थितियों के प्रबंधन और आर्थिक चुनौतियों पर प्रतिक्रिया देने में अधिक लचीलापन प्रदान करेगा।
- **सुदृढ़ क्षेत्रीय प्रभाव:**
  - विश्व स्तर पर स्वीकृत रुपया भारत के क्षेत्रीय प्रभाव को सुदृढ़ कर सकता है और इसे एशिया में एक प्रमुख आर्थिक खिलाड़ी के रूप में स्थापित कर सकता है।
  - यह क्षेत्र के भीतर व्यापार और निवेश को बढ़ावा देगा, आर्थिक साझेदारी और सहयोग को प्रोत्साहित करेगा।
- **आरक्षित भंडार या रिज़र्व का विविधीकरण:**
  - अंतर्राष्ट्रीयकरण से आरक्षित मुद्रा (reserve currency) के रूप में इसका आकर्षण बढ़ेगा।
  - केंद्रीय बैंक और विदेशी सरकारें अपने पोर्टफोलियो में विविधता एवं स्थिरता प्रदान करते हुए, अपने विदेशी मुद्रा भंडार के एक हिस्से के रूप में रुपए रखने का विकल्प चुन सकती हैं।
- **वित्तीय सेवाओं का विकास:**
  - रुपए की अंतर्राष्ट्रीय स्वीकृति बढ़ने के साथ रुपए-मूल्य वाले लेनदेन से जुड़ी वित्तीय सेवाओं, जैसे व्यापार वित्तपोषण, करेंसी हेजिंग (currency hedging) और निपटान सेवाओं में वृद्धि होगी।
  - यह भारत में एक मज़बूत और प्रतिस्पर्द्धी वित्तीय सेवा क्षेत्र के विकास को बढ़ावा दे सकता है।

रुपए के अंतर्राष्ट्रीयकरण से संबद्ध चुनौतियाँ

- **विनिमय दर की अस्थिरता (Exchange Rate Volatility):**
  - रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण इसे विनिमय दर की वृहत अस्थिरता के जोखिम में ला सकता है। रुपए के मूल्य में उतार-चढ़ाव व्यापार प्रतिस्पर्द्धात्मकता, विदेशी निवेश प्रवाह और वित्तीय बाज़ार स्थिरता को प्रभावित कर सकता है।
  - संभावित प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के लिये विनिमय दर जोखिमों का प्रबंधन करना अत्यंत आवश्यक हो जाएगा।
- **पूंजी पलायन और वित्तीय स्थिरता (Capital Flight and Financial Stability):**
  - रुपए को अंतर्राष्ट्रीय बाज़ारों के लिये खोले जाने से पूंजी पलायन की स्थिति बन सकती है, यदि निवेशक रुपए में भरोसा खो दें या प्रतिकूल आर्थिक स्थितियों की आशंका रखें।
  - इससे देश के विदेशी मुद्रा भंडार (foreign exchange reserves) पर दबाव पड़ सकता है, वित्तीय स्थिरता प्रभावित हो सकती है और मौद्रिक नीति प्रबंधन के लिये चुनौतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।
- **पूंजी नियंत्रण (Capital Controls):**
  - भारत में अभी भी पूंजी नियंत्रण लागू है जो विदेशियों की भारतीय बाज़ारों में निवेश और व्यापार करने की क्षमता को सीमित करता है।
  - इन नियंत्रणों के कारण रुपए का अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा के रूप में व्यापक रूप से उपयोग किया जाना कठिन हो जाता है।
- **प्रतिस्पर्द्धी मुद्राएँ (Competing Currencies):**
  - रुपए को अमेरिकी डॉलर, यूरो और येन जैसी स्थापित अंतर्राष्ट्रीय मुद्राओं से प्रतिस्पर्द्धा का सामना करना पड़ सकता है, जिन्हें व्यापक स्वीकृति और तरलता प्राप्त है।
  - बाज़ार हिस्सेदारी प्राप्त करना और इन प्रमुख मुद्राओं को विस्थापित करना एक बड़ी चुनौती सिद्ध हो सकती है।
- **आत्मविश्वास और धारणा (Confidence and Perception):**
  - भारत की आर्थिक एवं मौद्रिक नीतियों की विश्वसनीयता एवं स्थिरता रुपए के प्रति भरोसा पैदा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।
  - नीतिगत अनिश्चितता, पारदर्शिता की कमी या भू-राजनीतिक जोखिमों के संबंध मंथ कोई भी धारणा इसके अंतर्राष्ट्रीयकरण की प्रक्रिया में बाधा डाल सकती है।
- **बाज़ार सहभागियों द्वारा अपनाया जाना:**
  - अंतर्राष्ट्रीय लेनदेन के लिये रुपए को अपनाने हेतु व्यवसायों, व्यक्तियों और वित्तीय संस्थानों सहित विभिन्न बाज़ार सहभागियों को सहमत करने के लिये इस मुद्रा के प्रति भरोसे, परिचितता और असंशय की आवश्यकता होगी।

- विश्व स्तर पर रुपए के उपयोग के लाभों के बारे में जागरूकता का निर्माण करना और इसका प्रचार करना एक उल्लेखनीय चुनौती है।

रॅन्मिन्बी (Renminbi) के अंतर्राष्ट्रीयकरण में चीन के अनुभव से भारत कैसे सीख सकता है?

- **चीन का चरणबद्ध और अंशांकित दृष्टिकोण:**
  - वर्ष 2004 से पहले रॅन्मिन्बी का उपयोग चीन तक ही सीमित रहा था।
    - वर्ष 2009 तक चीन ने अन्य देशों के साथ व्यापार, निवेश और मुद्रा विनिमय के लिये इसके उपयोग का विस्तार कर दिया।
    - वर्ष 2013 में शंघाई मुक्त व्यापार क्षेत्र (Shanghai Free Trade Zone) ने अनिवासी ऑन-शोर और ऑफ-शोर खातों के बीच अप्रतिबंधित व्यापार को सक्षम कर दिया।
- **अपनी मुद्रा के अंतर्राष्ट्रीयकरण में चीन की उपलब्धियाँ:**
  - एक ऑनलाइन लेख के अनुसार, समय के साथ चीन ने अपनी मुद्रा के अंतर्राष्ट्रीयकरण का एक महत्त्वपूर्ण स्तर हासिल कर लिया है, जहाँ इसकी आरक्षित मुद्रा की स्थिति में तेज़ी से सक्षमता आई है (उदाहरण के लिये, वर्ष 2022 तक अंतर्राष्ट्रीय रिज़र्व में इसकी हिस्सेदारी ~2.88% तक पहुँच गई थी)।
- **चीन का अनुकरण करने के लिये भारत की संभावित रणनीतियाँ:**
  - भारत अपनी मुद्रा के अंतर्राष्ट्रीयकरण के लिये क्रमिक एवं अंशांकित दृष्टिकोण (gradual and calibrated approach) अपनाने में चीन की कुछ रणनीतियों का अनुकरण कर सकता है, जबकि साथ ही यह सुनिश्चित करे कि उसकी घरेलू आर्थिक और वित्तीय स्थितियाँ अनुकूल एवं प्रत्यास्थी हों।
  - भारत इस क्षेत्र और इसके बाहर के देशों के साथ अपने मौजूदा व्यापार एवं निवेश संबंधों का भी लाभ उठा सकता है तथा अपनी मुद्रा विनिमय व्यवस्था और ऑफ-शोर बॉण्ड बाज़ार का विस्तार करने का प्रयास कर सकता है।

भारत रुपए के अंतर्राष्ट्रीयकरण के लिये किन विशिष्ट सुधारों की दिशा में आगे बढ़ सकता है?

- **रुपए को अधिक स्वतंत्र रूप से परिवर्तनीय बनाना:**
  - वर्ष 2060 तक पूर्ण परिवर्तनीयता के लक्ष्य के साथ, वित्तीय निवेश के भारत और विदेशों के बीच स्वतंत्र आवाजाही को सक्षम करना।
  - इससे विदेशी निवेशकों को आसानी से रुपए के क्रय-विक्रय की सुविधा मिलेगी, जिससे इसकी तरलता बढ़ेगी और यह अधिक आकर्षक बन सकेगा।
- **गहन बॉण्ड बाज़ार की ओर आगे बढ़ना:**
  - विदेशी निवेशकों और भारतीय व्यापार भागीदारों को रुपए में अधिक निवेश विकल्प उपलब्ध कराना, इसके अंतर्राष्ट्रीय उपयोग को सक्षम बनाना।
- **निर्यातकों/आयातकों को रुपए में लेनदेन के लिये प्रोत्साहित करना:**
  - रुपए के आयात/निर्यात विनिमय के लिये व्यापार निपटान औपचारिकताओं को अनुकूलित/इष्टतम करने से दीर्घावधिक लाभ प्राप्त होगा।
- **अन्य मुद्रा विनिमय समझौतों पर हस्ताक्षर करना:**
  - भारत ने श्रीलंका के साथ ऐसा एक समझौता किया है जहाँ भारत को डॉलर जैसी आरक्षित मुद्रा का सहारा लिये बिना रुपए में व्यापार एवं निवेश लेनदेन निपटान का अवसर मिलता है। अन्य देशों के साथ भी ऐसे समझौते किये जा सकते हैं।
- **कर प्रोत्साहन की पेशकश करना:**
  - भारत में परिचालन में रुपए का उपयोग करने के लिये विदेशी व्यवसायों को कर प्रोत्साहन की पेशकश की जानी चाहिये।
- **मुद्रा प्रबंधन स्थिरता सुनिश्चित करना और विनिमय दर व्यवस्था में सुधार लाना:**
  - मुद्रा अवमूल्यन या विमुद्रीकरण/नोटबंदी जैसे अचानक लाये जाने वाले या बड़े बदलावों से बचना चाहिये जो रुपए के प्रति भरोसे को प्रभावित कर सकते हैं।
  - नोटों और सिक्कों का सुसंगत और पूर्वानुमानित निर्गम/पुनर्प्राप्ति सुनिश्चित करना।
- **तारापोर समिति की अनुशंसाओं का पालन करना:**
  - राजकोषीय घाटे को 3.5% से कम करने, सकल मुद्रास्फीति दर को 3-5% तक कम करने और सकल बैंकिंग गैर-निष्पादित परिसंपत्तियों को 5% से कम करने जैसी तारापोर समिति की अनुशंसाओं का पालन किया जाना चाहिये।

राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन (National Research Foundation- NRF) विधेयक को मंज़ूरी देकर देश में वैज्ञानिक अनुसंधान को बढ़ावा देने की दिशा में एक बड़ा कदम उठाया है। NRF अनुसंधान एवं विकास निवेश में भारत के लगातार बने रहे अंतराल को दूर करने और उच्च शिक्षा संस्थानों के अंदर एक

प्रबल अनुसंधान वातावरण को बढ़ावा देने का लक्ष्य रखता है। यह पहल आशाजनक है, लेकिन इसके समक्ष निधि का उचित आवंटन सुनिश्चित करने, अंत:विषय साझेदारी को बढ़ावा देने और अंतर्राष्ट्रीय मानकों को बनाए रखने जैसी चुनौतियाँ भी मौजूद हैं।

राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन (NRF)

- **परिचय:**
  - NRF एक प्रस्तावित निकाय है जो विज्ञान और इंजीनियरिंग अनुसंधान बोर्ड (Science and Engineering Research Board of India- SERB) को प्रतिस्थापित करेगा और प्रभावशील ज्ञान सृजन एवं अंतरण के माध्यम से भारत के महत्त्वाकांक्षी विकास एजेंडे में तेज़ी लाने के लिये अंत:विषय अनुसंधान को उत्प्रेरित एवं मार्ग-निर्देशित करेगा।
- **NRF के लक्ष्य:**
  - अंत:विषय अनुसंधान को बढ़ावा देना जो भारत की सबसे गंभीर विकास चुनौतियों को संबोधित कर सकेगा।
  - अनुसंधान प्रयासों के दोहराव को न्यूनतम करना।
  - नीति और व्यवहार में अनुसंधान के अंतरण को बढ़ावा देना।
- **NRF की मुख्य बातें:**
  - NRF की अध्यक्षता प्रधानमंत्री करेंगे और इसमें 10 प्रमुख निदेशालय शामिल होंगे, जो विज्ञान, कला, मानविकी, नवाचार और उद्यमिता जैसे विभिन्न क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करेंगे।
  - NRF में एक 18 सदस्यीय बोर्ड होगा जिसमें प्रख्यात भारतीय एवं अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक, वरिष्ठ सरकारी अधिकारी और उद्योग जगत के नेतृत्वकर्त्ता शामिल होंगे।
  - NRF एक सोसायटी के रूप में पंजीकृत होगा और इसका एक स्वतंत्र सचिवालय होगा।
- **NRF से अपेक्षाएँ:**
  - वर्ष 2030 तक अनुसंधान एवं विकास में भारत के निवेश को सकल घरेलू उत्पाद के 0.7% से बढ़ाकर 2% करना
  - वैश्विक वैज्ञानिक प्रकाशनों में भारत की हिस्सेदारी को लगभग 5% से बढ़ाकर 7% करना
  - विभिन्न विषयों और क्षेत्रों में प्रतिभाशाली शोधकर्त्ताओं के एक पूल का निर्माण करना
  - भारत की विकास संबंधी चुनौतियों के लिये नवीन समाधान विकसित करना
  - वैज्ञानिक ज्ञान को सामाजिक और आर्थिक लाभ में अंतरित करना

NRF की आवश्यकता क्यों है?

- **घटता अनुसंधान निवेश:**
  - भारत के अनुसंधान एवं विकास व्यय और जीडीपी का अनुपात महज 0.7% है, जो अन्य प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में पर्याप्त कम है तथा वैश्विक औसत 1.8% से पर्याप्त नीचे है। अमेरिका (2.8%), चीन (2.1%), इज़राइल (4.3%) और दक्षिण अफ्रीका (4.2%) जैसे देशों में यह अनुपात पर्याप्त उच्च है।
- **निम्न अनुसंधान आउटपुट और प्रभाव:**
  - पेटेंट और प्रकाशनों की संख्या के मामले में भारत बहुत पीछे है।
    - WIPO के अनुसार, चीन ने 1.538 मिलियन पेटेंट आवेदन फाइल किये (जिसमें केवल 10% अनिवासी चीनी नागरिक थे), अमेरिका ने 605,571 आवेदन फाइल किये, जबकि भारत ने मात्र 45,057 आवेदन फाइल किये (जिनमें से 70% से अधिक अनिवासी भारतीयों की ओर से थे)।
- **सीमित अनुसंधान अवसर:**
  - अनुसंधान के लिये धन प्राय: उच्च-प्रतिष्ठित संस्थानों और अनुसंधानकर्त्ताओं तक सीमित रहता है और वे वंचित रह जाते हैं जो हाशिये पर स्थित क्षेत्रों में होते हैं।
    - उदाहरण के लिये, डीएसटी अधिकारियों के अनुसार SERB से लगभग 65% निधि विभिन्न आईआईटी को जाता है और केवल 11% ही राज्य विश्वविद्यालयों को प्राप्त होता है।
- **अनुसंधान का खंडीकरण:**
  - भारत में अनुसंधान बड़े पैमाने पर विभिन्न संस्थानों द्वारा अलग-अलग आंतरिक स्तर पर किये जाते हैं, जिससे संसाधनों की बर्बादी एवं दोहराव की स्थिति बनती है।
- **निजी क्षेत्र की कम भागीदारी:**
  - R&D व्यय का लगभग 56% सरकार की ओर से और 35% निजी क्षेत्र से प्राप्त होता है।
    - इसके विपरीत, तकनीकी रूप से उन्नत देशों में निजी क्षेत्र अनुसंधान एवं विकास में अग्रणी भूमिका रखते हैं। उदाहरण के लिये इजराइल में निजी क्षेत्र का योगदान 88% तक है।
- **सामाजिक विज्ञान और मानविकी पर फोकस का अभाव:**
  - अधिकांश अनुसंधान निधि प्राकृतिक विज्ञान एवं इंजीनियरिंग क्षेत्र की ओर जाती है, जबकि सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी को प्राय: उपेक्षित किया जाता है।

नोट :

NRF अंतर-विषयक और समस्या-समाधानकर्त्ता अनुसंधान को कैसे बढ़ावा देगा?

- **मंच प्रदान करने के रूप में:**
  - NRF बहु-विषयक और बहु-संस्थागत सहयोगात्मक अनुसंधान के लिये एकीकृत मंच प्रदान करेगा जो उन जटिल चुनौतियों का समाधान कर सकता है जिनके लिये विभिन्न विषयों एवं क्षेत्रों की ओर से समाधान की आवश्यकता होती है।
    - उदाहरण के लिये, सार्वजनिक स्वास्थ्य नीति, बाल पोषण, वायु प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन ऐसे कुछ क्षेत्र हैं जिनके लिये अंत:विषयक (inter-disciplinary और बहि-विषयक (trans-disciplinary) अनुसंधान की आवश्यकता है जो साक्ष्य संपन्न, संदर्भ के लिये प्रासंगिक, संसाधन के लिये इष्टतम, सांस्कृतिक रूप से अनुरूप और समता को बढ़ावा देने वाले समाधान प्रदान कर सकते हैं।
  - NRF भारत के विकास के प्राथमिकता क्षेत्रों में कमीशन किये गए कार्यबल अनुसंधान और अन्वेषक द्वारा शुरू किये जाते सहयोगात्मक अनुसंधान, दोनों का समर्थन करेगा।
  - NRF विभिन्न ज्ञान क्षेत्रों के युवा शोधकर्त्ताओं को समस्या समाधान अनुसंधान पर सहयोग करने के लिये आमंत्रित कर वैज्ञानिक करियर के आरंभ में ही बहु-विषयक (multi-disciplinary) अनुसंधान से संलग्न होने की मानसिकता भी तैयार करेगा।
- **सहकार्यता को बढ़ावा:**
  - NRF वैज्ञानिक उद्यम में निजी क्षेत्र, राज्य सरकारों, राज्य स्तरीय संस्थानों और नागरिक समाज संगठनों जैसे विभिन्न हितधारकों को शामिल करने का प्रयास करेगा।
    - निजी क्षेत्र को कॉर्पोरेट और परोपकारी फंडिंग को बढ़ावा देने के लिये (जो सरकार के स्वयं के प्रतिबद्ध योगदान को बढ़ा सकता है) और नए विचारों एवं नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिये प्रमुख भागीदार के रूप में देखा जाता है।
  - स्थानीय स्तर पर प्रासंगिक वैज्ञानिक अनुसंधान के संचालन के लिये भारत की क्षमता बढ़ाने हेतु राज्य सरकारें और राज्यस्तरीय संस्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं।
  - अनुसंधान एजेंडे के लिये लोगों की प्रासंगिक प्राथमिकताओं की पहचान करने, सहभागी अनुसंधान में संलग्न होने, कार्यान्वयन और इसके प्रभाव की निगरानी एवं मूल्यांकन करने के साथ-साथ सामुदायिक गतिशीलता के माध्यम से कार्यान्वयन का समर्थन करने के लिये सामुदायिक भागीदारी आवश्यक है।
  - तभी वैज्ञानिक उद्यम 'जन आंदोलन' में परिणत हो सकता है।

NRF के समक्ष विद्यमान चुनौतियाँ

- **परामर्श और कैरियर विकास सहायता का अभाव:**
  - संस्थानों में औपचारिक या अनौपचारिक परामर्श और कैरियर विकास सहायता का अभाव।
    - इससे शोधकर्त्ताओं के लिये अपना कौशल विकसित करना और अपने करियर को आगे बढ़ाना कठिन हो सकता है।
- **अनुसंधान प्रबंधन के लिये अपर्याप्त समर्थन:**
  - शैक्षणिक नेतृत्व, प्रयोगशाला प्रबंधन, डेटा प्रबंधन, अनुसंधान कदाचार और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के लिये अपर्याप्त समर्थन।
    - इससे खराब शोध गुणवत्ता, डेटा उल्लंघन और नैतिक उल्लंघन जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं।
- **आवधिक मूल्यांकन की परिवर्तनीय गुणवत्ता:**
  - आवधिक मूल्यांकन की गुणवत्ता परिवर्तनशील होती है, जो प्राय: पुरस्कार या आलोचना की प्रदर्शन-प्रेरित प्रणाली से रहित होती है।
    - इससे आत्मसंतुष्टि पैदा हो सकती है और शोधकर्त्ता जोखिम लेने के प्रति हतोत्साहित हो सकते हैं।
- **विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओं का कम प्रतिनिधित्व:**
  - भारत में कुल नामांकन में महिला नामांकन का प्रतिशत वर्ष 2014-15 में 45% से बढ़कर वर्ष 2020-21 में लगभग 49% हो गया, लेकिन विज्ञान विभागों में संकाय पदों पर महिलाओं का प्रतिनिधित्व अभी भी कम है।
  - यह प्रतिभाशाली शोधकर्त्ताओं के समूह को सीमित कर सकता है और विज्ञान में महिलाओं के लिये प्रतिकूल वातावरण का निर्माण कर सकता है।
- **न्यायसंगत धन वितरण:**
  - NRF के सामने सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक यह सुनिश्चित करना है कि विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में स्थित संस्थानों को समान रूप से वित्तपोषण प्राप्त हो।

- NRF को पैटर्न को तोड़ने के तरीके खोजने होंगे और यह सुनिश्चित करना होगा कि देश के सभी हिस्सों में संस्थानों को फंडिंग उपलब्ध हो।

- **अंत:विषयक सहयोग को प्रोत्साहित करना:**
  - NRF के सामने एक और चुनौती अंत:विषय सहयोग को प्रोत्साहित करने की है।
  - पूर्व में भारत में अनुसंधान अलग-अलग किये जाते थे जहाँ विभिन्न विषय एक-दूसरे से स्वतंत्र रूप से कार्य करते थे।
  - NRF को विभिन्न विषयों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने के तरीके खोजने की आवश्यकता होगी, ताकि उन जटिल समस्याओं को संबोधित किया जा सके जिनके लिये बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है।
- **अन्य चुनौतियाँ:**
  - राजनीतिक हस्तक्षेप:
    - यह जोखिम मौजूद है कि NRF राजनीतिक हस्तक्षेप का शिकार होगा।
    - NRF को यह सुनिश्चित करने के लिये स्पष्ट दिशानिर्देश और प्रक्रियाएँ स्थापित करने की आवश्यकता होगी कि उसके निर्णय राजनीतिक विचारों के बजाय योग्यता पर आधारित हों।
  - जन जागरूकता का अभाव:
    - भारत में अनुसंधान के महत्त्व के बारे में जन जागरूकता की कमी है।
    - NRF को अपने कार्य हेतु समर्थन जुटाने के लिये अनुसंधान के लाभों के बारे में सार्वजनिक जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता होगी।

आगे की राह

- **अनुसंधान एवं विकास व्यय में वृद्धि करना:**
  - चूँकि भारत का अनुसंधान एवं विकास व्यय कम है, NRF का लक्ष्य होना चाहिये कि अनुसंधान और नवाचार में सार्वजनिक एवं निजी निवेश बढ़ाने का प्रयास करे तथा मौजूदा संसाधनों एवं अवसंरचना का कुशलतापूर्वक लाभ उठाए।
- **अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा सुनिश्चित करना:**
  - NRF का लक्ष्य भारत के अनुसंधान उत्पादन की गुणवत्ता एवं प्रभाव को बढ़ाना और वैश्विक वैज्ञानिक समुदाय में देश की रैंकिंग एवं दृश्यता में सुधार लाना होना चाहिये।
  - इसे भारत और विदेश, दोनों में शोधकर्त्ताओं की गतिशीलता और आदान-प्रदान की सुविधा प्रदान करनी चाहिये तथा दुनिया भर से प्रतिभाओं को आकर्षित करना चाहिये।

उत्तर भारत में बाढ़

हाल के समय में भारत को भारी वर्षा या अतिवृष्टि की लगातार घटनाओं का सामना करना पड़ा है जो देश के विभिन्न हिस्सों में व्यापक विनाश, भूस्खलन, 'फ्लैश फ्लड' और जान-माल की हानि का कारण बने हैं।

वर्षा का वितरण और इसकी तीव्रता विभिन्न कारकों से प्रभावित हुई है, जैसे कि मानसून, पश्चिमी विक्षोभ (western disturbance), अल नीनो-दक्षिणी दोलन (El Nino-Southern Oscillation- ENSO), हिंद महासागर द्विध्रुव (Indian Ocean Dipole- IOD) और जलवायु परिवर्तन।

उत्तर भारत में भारी वर्षा के क्या कारण हैं?

- **पश्चिमी विक्षोभ और मानसूनी गर्त के बीच अंत:क्रिया:**
  - उत्तर भारत में भारी वर्षा मुख्य रूप से पश्चिमी विक्षोभ (भूमध्यसागरीय क्षेत्र से उत्पन्न एक निम्न दाब तंत्र) और मानसून गर्त (Monsoon Trough) (मानसून पवन पट्टी के साथ एक निम्न दाब क्षेत्र) के बीच अंत:क्रिया के कारण होती है।
  - इस अंत:क्रिया के कारण हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब और हरियाणा जैसे क्षेत्रों में तीव्र वर्षा होती है।
- **अधिक वर्षा और अल्प वितरण:**
  - जून के अंत तक वर्षा में 10% की कमी का अनुभव करने के बाद उत्तर भारत में मानसून गतिविधि में वृद्धि देखी गई है, जिसके परिणामस्वरूप देश भर में 2% अधिक वर्षा हुई है।
  - विशेष रूप से उत्तर-पश्चिम भारत में 59% अधिक वर्षा हुई है, जबकि प्रायद्वीपीय भारत और पूर्वी/पूवोत्तर भारत में क्रमशः 23% और 17% वर्षा की कमी का सामना करना पड़ा है।
- **समकालिक दशाएँ और जलवायु परिवर्तन:**
  - उत्तराखंड में हाल में हुई भारी वर्षा और फ्लैश फ्लड की घटनाओं के लिये वैसी ही समकालिक दशाएँ (Synoptic Conditions) ज़िम्मेदार ठहराई गईं हैं, जैसी दशाएँ वर्ष 2013 के प्रलयंकारी बाढ़ के दौरान रही थीं।
    - इन दशाओं में एक सक्रिय मानसून (पर्याप्त नमी लाने वाली प्रबल निचले स्तर की पूर्वी पवनों के साथ) के साथ ही पूर्व की ओर आगे बढ़ते गर्त के कारण उत्पन्न ऊपरी स्तर का विचलन शामिल है।

- जलवायु परिवर्तन भी एक भूमिका निभाता है, क्योंकि इससे अतिरिक्त नमी और पर्वतीय उत्थापन (orographic lifting) के कारण पहाड़ी क्षेत्रों और उसके आसपास भारी वर्षा होती है।
  - हिमालय की तलहटी और पश्चिमी घाट जैसे पहाड़ी क्षेत्रों में पर्वतीय उत्थापन के कारण अत्यधिक वर्षा होती है।
  - पहाड़ियाँ नमी के प्रवाह को बाधित करती हैं, जिससे नमी जमा हो जाती है और भारी वर्षा का कारण बनती है।

- **'फ्लैश फ्लड' और 'क्लाउडबर्स्ट':**
  - बादल फटने या 'क्लाउडबर्स्ट' (Cloudbursts) और अत्यधिक वर्षा की घटनाओं के कारण अचानक आने वाली बाढ़ या 'फ्लैश फ्लड' की भविष्यवाणी करना चुनौतीपूर्ण है।
  - ऐसी घटनाओं की निगरानी एवं पूर्वानुमान के लिये रडार तंत्र और फ्लैश फ्लड के लिये प्रवण क्षेत्रों के सतर्क अवलोकन की आवश्यकता होती है।
  - भूमि उपयोग परिवर्तन और विकास संबंधी गतिविधियाँ फ्लैश फ्लड की गंभीरता को बढ़ा सकती हैं।

भारत में वर्षा को प्रभावित करने वाले कारक

- **वर्षा पर मानसून का प्रभाव:**
  - मानसून पवनों का एक मौसमी उत्क्रमण है जो भारत में आर्द्र जलवायु और मूसलाधार वर्षा का कारण बनता है।
    - मानसून आमतौर पर जून से सितंबर माह तक रहता है, जहाँ जुलाई और अगस्त में अधिकतम वर्षा दर्ज़ की जाती है।
    - भारतीय मानसून बंगाल की खाड़ी और अरब सागर के बीच वायुदाब में अंतर के कारण उत्पन्न होता है।
    - भारत में वर्षा का वितरण थार मरुस्थल एवं हिमालय के साथ ही हिंद महासागर, अरब सागर, बंगाल की खाड़ी और प्रशांत महासागर के दक्षिणी भाग में तापमान एवं दाब में परिवर्तन से प्रभावित होता है।

- **पश्चिमी विक्षोभ का वर्षा पर प्रभाव:**
  - पश्चिमी विक्षोभ एक निम्न दाब प्रणाली है जो भूमध्य सागर या पश्चिम एशिया के ऊपर उत्पन्न होता है और पूर्व की ओर (भारत की ओर) आगे बढ़ता है।
    - यह आमतौर पर शीत ऋतु (दिसंबर से फ़रवरी) के दौरान उत्तर-पश्चिमी भारत को प्रभावित करता है और हिमालयी क्षेत्रों में बर्फबारी तथा मैदानी इलाकों में वर्षा का कारण बनता है।
    - हालाँकि, कभी-कभी यह ग्रीष्म ऋतु में (जून से सितंबर) मानसूनी गर्त के साथ भी अंत:क्रिया कर सकता है और उत्तर भारत में भारी वर्षा ला सकता है।
  - पश्चिमी विक्षोभ स्थान, तीव्रता और समय के आधार पर मानसून गतिविधि को प्रबल या दुर्बल कर सकता है।
    - जब यह उत्तर-पश्चिमी भारत या पाकिस्तान के ऊपर स्थित होता है तो यह वातावरण में नमी लाकर और अस्थिरता उत्पन्न कर मानसून गतिविधि को प्रबल कर सकता है।
    - जब यह मध्य या पूर्वी भारत में स्थित होता है तो यह एक उच्च दाब प्रणाली का निर्माण कर मानसून गतिविधि को दुर्बल बना सकता है जो फिर मानसूनी पवनों को अवरुद्ध कर देती है।

- **ENSO का वर्षा पर प्रभाव:**
  - ENSO भूमध्यरेखीय प्रशांत महासागर के ऊपर समुद्री सतह के तापमान (SST) और वायुमंडलीय दाब का एक आवधिक उतार-चढ़ाव है।
  - ENSO हिंद महासागर, अरब सागर, बंगाल की खाड़ी और प्रशांत महासागर के दक्षिणी भाग पर वायुमंडलीय परिसंचरण पैटर्न को बदलकर भारत में वर्षा को प्रभावित कर सकता है।
    - अल नीनो (El Nino) भारत पर एक उच्च दाब प्रणाली का निर्माण कर मानसून को कमज़ोर या विलंबित कर देता है जो नमीयुक्त पवनों को भारत तक पहुँचने से रोकता है।
    - ला नीना (La Nina) भारत पर एक निम्न दाब प्रणाली का निर्माण कर मानसून के उभार को प्रबल या उन्नत करता है, जो नमीयुक्त पवनों को भारत की ओर आकर्षित करता है।

- **IOD का वर्षा पर प्रभाव:**
  - IOD हिंद महासागर, अरब सागर और बंगाल की खाड़ी के ऊपर नमी संचरण और संवहन को नियंत्रित करके भारत में वर्षा को प्रभावित कर सकता है।
  - IOD अपनी शक्ति, अवधि और समय के आधार पर भारत के विभिन्न क्षेत्रों को अलग-अलग तरीके से प्रभावित कर सकता है।
    - सकारात्मक IOD ग्रीष्म ऋतु में उत्तर-पश्चिमी भारत और शरद ऋतु में मध्य भारत में वर्षा की वृद्धि कर सकता है।

- नकारात्मक IOD ग्रीष्म ऋतु में उत्तर-पश्चिमी भारत में वर्षा की मात्रा कम कर सकता है और शरद ऋतु में प्रायद्वीपीय भारत में वर्षा की वृद्धि कर सकता है।
- **जलवायु परिवर्तन:**
  - जलवायु परिवर्तन समय और स्थान के विभिन्न पैमानों पर तापमान, आर्द्रता, वायुदाब, पवन और बादल के पैटर्न में परिवर्तन करके भारत में वर्षा को प्रभावित कर सकता है।
  - जलवायु परिवर्तन मानसून के उभार, अवधि, तीव्रता और स्थानिक वितरण को बदलकर इसे प्रभावित कर सकता है। कुछ अध्ययन सुझाव देते हैं कि-
    - जलवायु परिवर्तन भूमि-समुद्र तापमान विसंगति को बढ़ाकर मानसून के उभार में विलंब उत्पन्न कर सकता है, जो मानसूनी पवनों की उत्तर दिशा की ओर गमन को अवरुद्ध करता है।
    - जलवायु परिवर्तन हिंद महासागर में SST को बढ़ाकर मानसून के उभार को आगे बढ़ा सकता है, जिससे वातावरण में नमी की आपूर्ति बढ़ जाती है।
    - जलवायु परिवर्तन से अल नीनो घटनाओं की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि हो सकती है, जिससे भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून वर्षा (ISMR) में कमी आ सकती है और सूखे की वृद्धि हो सकती है।
    - जलवायु परिवर्तन से ला नीना घटनाओं की आवृत्ति एवं तीव्रता बढ़ सकती है, जिससे ISMR और बाढ़ की घटनाओं में वृद्धि हो सकती है।
  - जलवायु परिवर्तन हिमालय और पश्चिमी घाट पर हिम आवरण, ग्लेशियर पिघलाव और मृदा की नमी में परिवर्तन लाकर भारत में पर्वतीय वर्षा को भी प्रभावित कर सकता है।

भारत में भारी वर्षा के प्रमुख प्रभाव

- **कृषि:**
  - भारी वर्षा एवं बाढ़ से फसल, मृदा उर्वरता, सिंचाई अवसंरचना और पशुधन को नुकसान हो सकता है।
  - वे फसल की बुआई, कटाई, भंडारण और वितरण को भी प्रभावित कर सकते हैं।
    - इससे खाद्य असुरक्षा, कुपोषण, निर्धनता और किसानों के संकटपूर्ण पलायन की स्थिति बन सकती है।
- **जल संसाधन:**
  - भारी वर्षा एवं बाढ़ भूजल, सतह जल और मृदा नमी के स्तर का पुनर्भरण कर सकते हैं।
  - वे प्रदूषकों को बाहर बहाकर जल की गुणवत्ता में भी सुधार कर सकते हैं।
    - हालाँकि वे जलभराव, कटाव, अवसादन, भूस्खलन, बांध टूटने और जल स्रोतों के दूषित होने का कारण भी बन सकते हैं।
    - इससे जल की कमी, जल के लिये संघर्ष, जलजनित बीमारियों और लोगों के विस्थापन की स्थिति बन सकती है।
- **ऊर्जा:**
  - भारी वर्षा एवं बाढ़ नदी के प्रवाह और जलाशय के स्तर को बढ़ाकर जल विद्युत उत्पादन की वृद्धि कर सकते हैं।
  - वे कोयले की आपूर्ति और शीतलन प्रणालियों को प्रभावित कर तापीय विद्युत उत्पादन को कम कर सकते हैं।
    - वे बिजली संयंत्रों, ट्रांसमिशन लाइनों, सबस्टेशनों और वितरण नेटवर्क को नुकसान भी पहुँचा सकते हैं।
    - इससे पावर आउटेज, ब्लैकआउट, घाटे और दुर्घटनाओं की स्थिति बन सकती है।
- **यातायात:**
  - भारी वर्षा एवं बाढ़ नदियों और झीलों में जल स्तर बढ़ाकर नौवहन में सुधार कर सकते हैं।
    - हालाँकि वे भूस्खलन, बाढ़, ट्रैफिक जाम, देरी, सुविधाओं के रद्दीकरण, दुर्घटनाओं और मौतों का कारण बनकर सड़क, रेल, वायु और जल परिवहन को बाधित भी कर सकते हैं।
- **स्वास्थ्य:**
  - भारी वर्षा एवं बाढ़ धूल के कणों और एरोसोल को बहाकर वायु प्रदूषण को कम कर सकते हैं।
  - वे तापमान और आर्द्रता को कम करके 'हीट स्ट्रेस' को भी कम कर सकते हैं।
    - हालाँकि, वे वेक्टर-जनित बीमारियों को भी बढ़ा सकते हैं।

बाढ़ से निपटने के लिये प्रमुख सरकारी पहलें

- **राष्ट्रीय बाढ़ जोखिम शमन परियोजना (National Flood Risk Mitigation Project- NFRMP):**
  - इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कमज़ोर समुदायों के बीच जागरूकता पैदा करने के अलावा आपदाओं से राहत,

पुनर्वास, पुनर्निर्माण और पुनर्प्राप्ति के लिये संसाधन एवं क्षमता जुटाने की व्यवस्था की जाए।

- **राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन योजना (National Disaster Management Plan- NDMP):**
  - यह आपदा प्रबंधन चक्र के सभी चरणों- जैसे रोकथाम, शमन, तैयारी, प्रतिक्रिया, पुनर्प्राप्ति और पुनर्निर्माण के लिये एक रूपरेखा एवं दिशा प्रदान करता है।
- **राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (National Disaster Management Authority- NDMA):**
  - यह प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में भारत में आपदा प्रबंधन के लिये शीर्ष निकाय है।
  - यह आपदा प्रबंधन के लिये नीतियाँ, योजनाएँ और दिशानिर्देश तय करता है तथा उनके कार्यान्वयन का समन्वय करता है।
- **भारत मौसम विज्ञान विभाग (India Meteorological Department- IMD):**
  - यह वर्षा या चक्रवाती घटना का पूर्वानुमान प्रदान करता है जिसका उपयोग सभी एजेंसियाँ बाढ़ से निपटने की तैयारी के लिये करती हैं।
  - यह भारी वर्षा, फ्लैश फ्लड, भूस्खलन और क्लाउडबर्स्ट के लिये चेतावनी एवं सलाह भी जारी करता है।
- **केंद्रीय जल आयोग (Central Water Commission- CWC):**
  - यह प्रमुख नदियों और जलाशयों के जल स्तर की निगरानी करता है तथा बाढ़ और अंतर्वाह के संबंध में पूर्वानुमान जारी करता है।
  - यह बाढ़ क्षति का आकलन और बाढ़ मैदान क्षेत्रीकरण (flood plain zoning) भी करता है। यह बाढ़ प्रबंधन के लिये राज्य सरकारों को तकनीकी मार्गदर्शन और सहायता भी प्रदान करता है।
- **राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केंद्र (National Remote Sensing Centre- NRSC):**
  - यह बाढ़ की निगरानी, मानचित्रण, क्षति आकलन और राहत योजना के लिये उपग्रह-आधारित जानकारी प्रदान करता है।
  - यह बाढ़ आप्लावन मॉडल (flood inundation models) और बाढ़ जोखिम मानचित्र (flood risk maps) भी विकसित करता है।

आगे की राह

- **संस्थागत और विधिक ढाँचे को सशक्त बनाना:**
  - राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तर पर बाढ़ एवं भूस्खलन प्रबंधन के लिये संस्थागत और विधिक ढाँचे को सशक्त करना।
  - इसमें बाढ़ एवं भूस्खलन प्रबंधन के लिये समर्पित एजेंसियों या विभागों की स्थापना करना; विभिन्न हितधारकों के बीच समन्वय एवं सहयोग बढ़ाना; भूमि उपयोग, निर्माण, खनन आदि के लिये नियमों एवं मानकों को लागू करना और आपदा प्रबंधन गतिविधियों में जवाबदेही एवं पारदर्शिता सुनिश्चित करना शामिल है।
- **वैज्ञानिक और तकनीकी क्षमताओं को बढ़ाना:**
  - इसमें खतरे, भेद्यता और जोखिम का आकलन करना; बाढ़ एवं भूस्खलन संभावित क्षेत्रों की मैपिंग एवं ज़ोनिंग करना; पूर्व-चेतावनी प्रणाली एवं पूर्वानुमान मॉडल विकसित करना; संरचनात्मक एवं गैर-संरचनात्मक शमन उपायों को लागू करना; अनुसंधान एवं नवाचार को बढ़ावा देना और मानव संसाधनों एवं क्षमताओं का निर्माण करना शामिल है।
- **आपदा तैयारी में सुधार लाना:**
  - अल्पावधिक उपाय:
    - आपातकालीन नियंत्रण कक्ष और संचार नेटवर्क स्थापित करना
    - ड्रिल एवं मॉक एक्सरसाइज आयोजित करना
    - त्वरित प्रतिक्रिया दल की तैनाती और राहत सामग्री सुनिश्चित करना
    - समयबद्ध निकासी और बचाव कार्य सुनिश्चित करना
  - दीर्घकालिक उपाय:
    - विभिन्न स्तरों पर आपदा प्रबंधन योजनाएँ विकसित करना
    - धन और संसाधनों का आवंटन
    - सामुदायिक भागीदारी और जागरूकता बढ़ाना

भारत और यूरोप: रणनीतिक साझेदारी का एक नया युग

भारत-फ्राँस रणनीतिक साझेदारी की 25वीं वर्षगांठ यूरोपीय सुरक्षा के साथ भारत की संलग्नता को नवीन रूप देने का एक अच्छा क्षण हो सकता है। भारत और फ्राँस के बीच रक्षा सहयोग इस सदी में यूरेशियाई सुरक्षा में योगदान दे सकता है। भारतीय प्रधानमंत्री की फ्राँस यात्रा से कई

नए समझौते संपन्न होने (विशेष रूप से रक्षा एवं अंतरिक्ष क्षेत्र में) और द्विपक्षीय रणनीतिक साझेदारी को उच्च स्तर तक ले जाने की उम्मीद है। यह यात्रा महज इस बारे में नहीं है कि फ्राँस से कौन-सी उन्नत प्रौद्योगिकियाँ और हथियार प्राप्त हो सकते हैं, यह एक ऐसे विषय को भी उजागर करती है जिस पर प्राय: चर्चा नहीं होती है उदाहरण के लिये, भारत फ्राँस और यूरोप के लिये क्या कर सकता है पर चर्चा होनी चाहिये।

यूरोपीय सुरक्षा में भारत का योगदान क्यों महत्त्वपूर्ण है?

- **ऐतिहासिक योगदान:**
  - भारत ने दो विश्व युद्धों के दौरान यूरोप में शांति स्थापित करने में मदद की है, जब लाखों भारतीय सैनिक मित्र राष्ट्रों के लिये लड़े थे और शहीद हुए थे।
- **आर्थिक हित:**
  - यूरोप की स्थिरता और समृद्धि में भारत की भी एक हिस्सेदारी है, जो एक प्रमुख व्यापार एवं निवेश भागीदार, प्रौद्योगिकी एवं नवाचार का स्रोत और एक सहयोगी लोकतंत्र है।
- **सुरक्षा संबंधी चिंता:**
  - भारत यूक्रेन में ज़ारी युद्ध के समाधान में रुचि रखता है, जो एशियाई सुरक्षा और वैश्विक व्यवस्था को प्रभावित कर रहा है।
- **राजनयिक भूमिका:**
  - भारत के पास विभिन्न क्षेत्रीय और वैश्विक मुद्दों पर रूस और पश्चिम के साथ-साथ चीन और यूरोप के बीच की दूरियों को कम करने में रचनात्मक भूमिका निभाने का अवसर है।
- **रणनीतिक भागीदारी:**
  - भारत में अपने रक्षा औद्योगिक आधार के आधुनिकीकरण, अपनी समुद्री निगरानी क्षमताओं को बढ़ाने और नवीकरणीय ऊर्जा एवं जलवायु कार्रवाई को बढ़ावा देने के लिये फ्राँस और अन्य यूरोपीय देशों के साथ सहयोग करने की क्षमता है।

भारत के लिये यूरोप का क्या महत्त्व है?

- **रोज़गार:**
  - यूरोपीय संघ (EU) भारत में शांति को बढ़ावा देने, रोज़गार सृजित करने, आर्थिक विकास को बढ़ावा देने और सतत् विकास की संवृद्धि के लिये इसके साथ कार्यरत है।
- **वित्तीय सहायता:**
  - भारत के निम्न-आय देश से मध्यम-आय देश के रूप में आगे बढ़ने के साथ (OECD 2014 के अनुसार) यूरोपीय संघ और भारत का सहयोग भी पारंपरिक वित्तीय सहायता की श्रेणी से आगे बढ़कर सामान्य प्राथमिकताओं पर ध्यान केंद्रित करने वाली साझेदारी के रूप में विकसित हुआ है।
- **व्यापार:**
  - यूरोपीय संघ भारत का दूसरा सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार (अमेरिका के बाद) है और भारत का दूसरा सबसे बड़ा निर्यात बाज़ार भी है। भारत EU का 10वाँ सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है, जिसका EU के कुल माल व्यापार में 2% योगदान है।
  - यूरोपीय संघ और भारत के बीच सेवाओं का व्यापार वर्ष 2021 में 40 बिलियन यूरो तक पहुँच गया।
- **निर्यात:**
  - वर्ष 2021-22 में यूरोपीय संघ के सदस्य देशों को भारत का व्यापारिक निर्यात लगभग 65 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था, जबकि आयात 51.4 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था।
  - वर्ष 2022-23 में कुल निर्यात 67 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था जबकि वर्ष 2021-22 में आयात 54.4 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था।
- **अन्य द्विपक्षीय तंत्र:**
  - वर्ष 2017 के EU-भारत शिखर सम्मेलन में नेताओं ने सतत् विकास के लिये 2030 एजेंडा के कार्यान्वयन पर सहयोग को सुदृढ़ करने के अपने इरादे को दोहराया और EU-भारत विकास वार्ता की निरंतरता की दिशा में आगे बढ़ने पर सहमति व्यक्त की।

यूरोपीय सुरक्षा के साथ भारत की संलग्नता के लिये प्रमुख चुनौतियाँ:

- **ऐतिहासिक निर्भरता:**
  - रक्षा संबंधी आवश्यकताओं के लिये रूस पर भारत की ऐतिहासिक निर्भरता और क्रीमिया एवं यूक्रेन में रूस की कार्रवाइयों की आलोचना करने की अनिच्छा।
- **संस्थागत अंतराल:**
  - उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन (NATO), पर्मानेंट स्ट्रक्चर्ड कॉर्पोरेशन (PESCO) और क्लब डी बर्न (Club de Berne) जैसे यूरोपीय सुरक्षा संगठनों के साथ भारत के संस्थागत संबंधों का अभाव।
- **अवधारणात्मक अंतराल:**
  - एशियाई सुरक्षा मामलों में अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया और आसियान की तुलना में यूरोप को द्वितीयक स्तर के खिलाड़ी के रूप में देखने की भारत की धारणा।

नोट :

- **संसाधन संबंधी बाधा:**
  - अपने पड़ोस में और उससे परे प्रतिस्पर्द्धी प्राथमिकताओं के बीच यूरोप में अपना प्रभाव और उपस्थिति दर्शाने के लिये भारत के पास सीमित संसाधन एवं क्षमताएँ मौजूद हैं।

यूरोप के साथ भारत की संलग्नता में निहित अवसर

- **रणनीतिक अभिसरण:**
  - आतंकवाद से मुकाबला, समुद्री सुरक्षा, अंतरिक्ष सहयोग, रक्षा प्रौद्योगिकी और बहुपक्षवाद जैसे विभिन्न मुद्दों पर फ्राँस के साथ भारत का रणनीतिक अभिसरण बढ़ रहा है।
- **सांस्कृतिक सहयोग:**
  - भारत-फ्राँस संस्कृति वर्ष (Indo-French Year of Culture), 2023-2024 में भारत की भागीदारी, जो दोनों देशों की सांस्कृतिक विविधता और रचनात्मकता को प्रदर्शित करेगी तथा लोगों के परस्पर संबंधों को बढ़ावा देगी।
- **क्षेत्रीय दृष्टिकोण:**
  - स्वतंत्र, खुले, समावेशी और नियम-आधारित हिंद-प्रशांत क्षेत्र के संबंध में यूरोपीय संघ के दृष्टिकोण के साथ भारत का संरेखण, जिसे वर्ष 2021 में जारी एक रणनीति दस्तावेज़ में व्यक्त किया गया था।
- **प्रमुख परियोजनाएँ:**
  - भारत फ्राँस के साथ स्कॉर्पीन पनडुब्बियों, रफाल जेट और ISRO-CNES उपग्रह समूह जैसी कुछ प्रमुख परियोजनाओं में भागीदारी कर रहा है।
- **हरित सहयोग:**
  - 'यूरोपीयन ग्रीन डील' (European Green Deal)—जिसका लक्ष्य वर्ष 2050 तक यूरोपीय संघ को कार्बन-तटस्थ बनाना है, का भारत समर्थन करता है और अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (International Solar Alliance- ISA) एवं 'वन प्लैनेट समिट' (One Planet Summit) पर फ्राँस के साथ इसने सहयोगी संबंध स्थापित किया है।

भारत और फ्राँस द्वारा हाल की संयुक्त पहलें

- **लॉजिस्टिक संबंधी समझौता:**
  - दोनों देशों की सशस्त्र सेनाओं के बीच वर्ष 2018 में एक परस्पर लॉजिस्टिक सहयोग समझौते पर हस्ताक्षर किया गया जो उन्हें ईंधन भरने और पुन:पूर्ति के लिये एक-दूसरे के सैन्य अड्डों का उपयोग करने की अनुमति देता है।
- **संयुक्त अभ्यास:**
  - दोनों देशों की नौ सेनाओं (वरुण), थल सेनाओं (शक्ति), वायु सेनाओं (गरुड़) और विशेष बलों (शक्ति) के बीच नियमित संयुक्त अभ्यास का आयोजन किया जाता है।
- **समुद्री संवाद:**
  - जनवरी 2019 में द्विपक्षीय समुद्री सुरक्षा वार्ता का आरंभ हुआ जिसमें नौवहन की स्वतंत्रता, समुद्री डोमेन के बारे में जागरूकता, समुद्री डकैती विरोधी संचालन और क्षमता निर्माण जैसे मुद्दे शामिल हैं।
- **साइबर सुरक्षा कार्यसमूह:**
  - वर्ष 2019 में साइबर सुरक्षा पर एक संयुक्त कार्य समूह की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य साइबर प्रत्यास्थता, डिजिटल शासन, डेटा सुरक्षा और साइबर अपराध की रोकथाम पर सहयोग बढ़ाना है।
- **रक्षा संवाद:**
  - अक्तूबर 2019 में मंत्री स्तर पर एक वार्षिक रक्षा संवाद की शुरुआत की गई जो उनके रक्षा सहयोग को रणनीतिक मार्गदर्शन प्रदान करता है।

आगे की राह

- **जर्मनी के साथ सहयोग के संभावित क्षेत्र:**
  - जर्मनी जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा, ऊर्जा और अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा जैसी वैश्विक चुनौतियों के समाधान में भारत को एक महत्त्वपूर्ण भागीदार के रूप में देखता है।
  - भारत और जर्मनी के लिये रूस के साथ अपने संबंधों को सीमित करने की आवश्यकता को देखते हुए दोनों देशों के नेता समाधान की तलाश के लिये और इस जटिल स्थिति से निपटने के लिये मिलकर कार्य कर सकते हैं।
  - भारत को जर्मन निवेश के लिये स्वयं को एक आकर्षक गंतव्य के रूप में परिणत करने को प्राथमिकता देनी चाहिये, विशेष रूप से जब जर्मनी रूसी और चीनी बाज़ारों में अपना जोखिम कम करना चाहता है।
- **फ्राँस के साथ सहयोग के संभावित क्षेत्र:**
  - निजी और विदेशी निवेश में वृद्धि के साथ घरेलू हथियार उत्पादन का विस्तार करने की भारत की महत्त्वाकांक्षी योजनाओं में फ्राँस महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।
  - फ्राँस भारत के लिये हिंद-प्रशांत क्षेत्र में विशेष रूप से दोनों देशों द्वारा हिंद महासागर क्षेत्र में सहयोग के लिये स्थापित

संयुक्त रणनीतिक दृष्टिकोण के आलोक में, एक आदर्श भागीदार है।
- दोनों देशों के विमर्श में कनेक्टिविटी, जलवायु परिवर्तन, साइबर-सुरक्षा और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सहित सहयोग के अन्य उभरते क्षेत्रों को शामिल किया जाना चाहिये।

- **नॉर्डिक देशों को संलग्न करना:**
  - अपनी मामूली जनसंख्या के बावजूद पाँच नॉर्डिक देशों (डेनमार्क, फिनलैंड, आइसलैंड, नॉर्वे और स्वीडन) का संयुक्त सकल घरेलू उत्पाद 1.8 ट्रिलियन डॉलर है, जो रूस से अधिक है।
  - हाल के वर्षों में भारत ने प्रत्येक यूरोपीय राष्ट्र द्वारा उसके विकास में दिये जा सकने वाले महत्त्वपूर्ण योगदान को चिह्नित किया है।
    - लक्ज़मबर्ग पर्याप्त वित्तीय शक्ति रखता है, नॉर्वे के पास प्रभावशाली समुद्री प्रौद्योगिकियाँ हैं, एस्टोनिया साइबर शक्ति में उत्कृष्ट है, चेक गणराज्य ऑप्टो-इलेक्ट्रॉनिक्स में विशेषज्ञता रखता है, पुर्तगाल लुसोफोन वर्ल्ड के प्रवेश द्वार के रूप में कार्य करता है और स्लोवेनिया कोपर में अवस्थित अपने एड्रियाटिक समुद्री बंदरगाह के माध्यम से यूरोप तक वाणिज्यिक पहुँच प्रदान करता है।
  - भारत को डेनमार्क के साथ एक अद्वितीय हरित रणनीतिक साझेदारी बनाने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिये और सहयोग की अपनी क्षमता को अधिकतम करने के लिये नॉर्डिक देशों के साथ आगे बढ़ना चाहिये।

वित्त आयोग

वित्त आयोग (Finance Commissions- FCs) भारत के राजकोषीय संघवाद (fiscal federalism) और विकास प्रक्षेपवक्र को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे पाँच वर्ष की अवधि के लिये संघ और राज्यों के साथ-साथ राज्य-राज्य के बीच वित्तीय संसाधनों के वितरण के तरीक़े के संबंध में अनुशंसाएँ करते हैं। FCs सार्वजनिक वित्त, शासन और विकास से संबंधित विभिन्न मुद्दों—जैसे राजकोषीय समेकन, ऋण प्रबंधन, स्थानीय निकाय, आपदा राहत, स्वास्थ्य, शिक्षा, न्याय वितरण, सांख्यिकीय प्रणाली आदि पर मार्गदर्शन एवं सलाह भी प्रदान करते हैं। FCs ने केंद्र और राज्य सरकारों की राजकोषीय स्वायत्तता, समानता एवं दक्षता को बढ़ाने के साथ ही देश में सहकारी एवं प्रतिस्पर्द्धी संघवाद को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। हालाँकि उन्हें अपने कार्य-दायित्व की पूर्ति में (विशेष रूप से एक गतिशील एवं जटिल राजनीतिक अर्थव्यवस्था वातावरण के संदर्भ में) विभिन्न चुनौतियों एवं सीमाओं का भी सामना करना पड़ता है।

वित्त आयोग:

- FCs संविधान के अनुच्छेद 280 के तहत हर पाँच वर्ष पर गठित किये जाने वाले संवैधानिक निकाय हैं जो संघ और राज्यों के बीच वित्तीय संसाधनों के वितरण पर अनुशंसाएँ प्रस्तुत करते हैं।
- **इन अनुशंसाओं में तीन मुख्य पहलू शामिल होते हैं:**
  - लंबवत हस्तांतरण (Vertical Devolution):
    - केंद्रीय करों के विभाज्य पूल में राज्यों की हिस्सेदारी।
  - क्षैतिज वितरण (Horizontal Distribution):
    - राज्यों के बीच संसाधनों का आवंटन एक ऐसे फॉर्मूले के आधार पर किया जाता है जो उनकी वित्तीय आवश्यकताओं, क्षमताओं और प्रदर्शन को परिलक्षित करता है।
  - सहायता अनुदान (Grants-in-aid):
    - सहायता या सुधार की आवश्यकता रखने वाले विशिष्ट राज्यों या क्षेत्रों को अतिरिक्त हस्तांतरण।
    - 13वें वित्त आयोग द्वारा की गई अनुदान अनुशंसाओं में दो महत्त्वपूर्ण अनुदान न्याय वितरण और सांख्यिकीय प्रणाली के संबंध में थे।
    - न्याय विभाग ने कई पहलों की पहचान की है जहाँ समर्थन की आवश्यकता है। इनमें न्यायालयों के कार्य घंटों को बढ़ाना, लोक अदालत के लिये समर्थन बढ़ाना, राज्य विधिक सेवा प्राधिकरणों को अतिरिक्त धनराशि प्रदान करना, वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्र को बढ़ावा देना, प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से न्यायिक अधिकारियों एवं लोक अभियोजकों की क्षमता को बढ़ाना और ऐसे प्रशिक्षण की सुविधा के लिये हर राज्य में एक न्यायिक अकादमी की स्थापना को समर्थन देना शामिल है।
  - इसी प्रकार न्यायसंगत क्षैतिज वितरण के लिये लागत अंतराल (cost disabilities) का मापन महत्त्वपूर्ण है और बहुत से कारकों के कारण सेवाओं की लागत विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न होती है।

FCs की कुछ सफल अनुशंसाएँ:

- **FCs ने विगत वर्षों में कई अनुशंसाएँ की हैं जिनका भारत में सार्वजनिक वित्त, शासन और विकास के विभिन्न पहलुओं पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। इसके कुछ उदाहरण हैं:**
  - ऊर्ध्वाधर/लंबवत हस्तांतरण के एक प्रमुख घटक के रूप में कर हस्तांतरण को पेश करना, जहाँ समय के साथ राज्यों की हिस्सेदारी को 10% से बढ़ाकर 42% तक किया गया है।

- राजकोषीय अनुशासन, जनसंख्या नियंत्रण, वन संरक्षण, बिजली क्षेत्र में सुधार आदि को प्रोत्साहित करने के लिये राज्यों के लिये प्रदर्शन-आधारित प्रोत्साहन (performance-based incentives) की शुरूआत।
- प्राकृतिक आपदाओं के लिये राज्यों और स्थानीय निकायों की तैयारियों एवं प्रतिक्रिया क्षमता को बढ़ाने के लिये के लिये आपदा राहत निधियों की शुरुआत।
- स्थानीय निकायों की वित्तीय स्वायत्तता और बुनियादी सेवाओं के वितरण में उनकी जवाबदेही को सुदृढ़ करने के लिये अनुदान की शुरुआत।
- स्वास्थ्य, शिक्षा, न्याय वितरण, सांख्यिकीय प्रणाली जैसे विशिष्ट क्षेत्रों के लिये अनुदान की शुरूआत ताकि इन क्षेत्रों में उल्लेखनीय अंतराल और इनकी आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

FCs की अनुशंसाओं का कार्यान्वयन एवं निगरानी:

- FCs की अनुशंसाएँ अपनी प्रकृति में सलाहकारी होती हैं और केंद्र सरकार पर बाध्यकारी नहीं होती हैं। हालाँकि इन्हें आम तौर पर मामूली संशोधन या सुधार के साथ स्वीकार कर लिया जाता है।
- केंद्र सरकार राष्ट्रपति के आदेश के माध्यम अनुशंसाओं की स्वीकृति को अधिसूचित करती है, जिसमें वह अवधि निर्दिष्ट होती है (आमतौर पर पाँच वर्ष) जिसके लिये वे मान्य होते हैं।
- केंद्र सरकार संसद में एक व्याख्यात्मक ज्ञापन (explanatory memorandum) भी पेश करती है, जिसमें अनुशंसाओं पर की गई कार्रवाई और किसी भी सुधार/विचलन के कारण बताए जाते हैं।
- अनुशंसाओं का कार्यान्वयन और निगरानी का कार्य केंद्र और राज्य स्तर पर विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों द्वारा किया जाता है, जो विषय वस्तु और हस्तांतरण से जुड़ी शर्तों पर निर्भर करता है।

FCs के समक्ष विद्यमान प्रमुख चुनौतियाँ:

- **डेटा अंतराल और गुणवत्ता संबंधी मुद्दे:**
    - FCs संघ और राज्यों की वित्तीय स्थिति और प्रदर्शन का आकलन करने के लिये आधिकारिक डेटा स्रोतों पर भरोसा करते हैं, लेकिन ये डेटा प्राय: अपूर्ण, असंगत या पुराने होते हैं।
    - उदाहरण के लिये अंतर-राज्य व्यापार प्रवाह, सार्वजनिक सेवाओं की इकाई लागत और विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों के परिणामों पर कोई विश्वसनीय डेटा उपलब्ध नहीं है।
- **राजनीतिक अर्थव्यवस्था संबंधी घटक:**
    - FCs को केंद्र सरकार, राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों, नागरिक समाज समूहों जैसे विभिन्न हितधारकों के प्रतिस्पर्द्धी हितों एवं मांगों के बीच एक संतुलन साधने की आवश्यकता होती है।
    - उन्हें देश और दुनिया में बदलते राजनीतिक और आर्थिक परिदृश्यों को भी ध्यान में रखना पड़ता है।
- **कार्यान्वयन संबंधी चुनौतियाँ:**
    - FCs को यह सुनिश्चित करना होता है कि उनकी अनुशंसाएँ वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में व्यवहार्य, स्वीकार्य और प्रभावी हों।
    - हालाँकि केंद्र और राज्य सरकारें उनकी अनुशंसाओं को कैसे लागू करती हैं या उनकी निगरानी कैसे करती हैं, इस पर उनका कोई सीधा नियंत्रण नहीं होता है।
    - उन्हें विलंब, विचलन, गैर-अनुपालन या प्राप्तकर्ताओं द्वारा धन के दुरुपयोग जैसे मुद्दों से भी निपटना पड़ता है।
- **मूल्यांकन संबंधी कठिनाइयाँ:**
    - FCs को राजकोषीय स्वास्थ्य, शासन गुणवत्ता और विकास प्रदर्शन जैसे विभिन्न संकेतकों पर उनकी अनुशंसाओं के प्रभाव और परिणामों का आकलन करना होता है।
    - हालाँकि उन्हें कार्य-कारण को उत्तरदायी ठहराने, प्रभावों के पृथक्करण, परिणामों के मापन और अपने हस्तक्षेपों के मूल्य-निर्धारण में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

16वें वित्त आयोग के समक्ष नवीन मुद्दे:

- **जीएसटी परिषद का सह-अस्तित्व:**
    - जीएसटी परिषद (GST Council) एक स्थायी संवैधानिक निकाय है जो कर दरों और जीएसटी से संबंधित अन्य मामलों पर निर्णय लेती है।
    - इसके निर्णय वित्तीय संसाधनों को साझा करने के लिये FCs के राजस्व अनुमानों और गणनाओं को प्रभावित कर सकते हैं।
    - जीएसटी परिषद के निर्णयों और FCs की गणनाओं के बीच एक संगति स्थापित करने के लिये एक तंत्र के निर्माण की आवश्यकता है।
- **रक्षा और आंतरिक सुरक्षा हेतु वित्तपोषण:**
    - एक उत्तर चिंतन के रूप में 15वें वित्त आयोग को यह निर्धारित करने के लिये अतिरिक्त विचारार्थ विषय (term of reference) सौंपा गया था कि क्या रक्षा एवं आंतरिक

सुरक्षा के वित्तपोषण के लिये एक अलग तंत्र स्थापित किया जाना चाहिये।
- इसने इस उद्देश्य के लिये एक गैर-व्यपगत निधि (non-lapsable fund) के सृजन की अनुशंसा की, जिसे सरकार ने सैद्धांतिक रूप से स्वीकार कर लिया, लेकिन इसके कार्यान्वयन पर अभी भी कार्य किया जाना शेष है।

- **कोविड-19 महामारी का प्रभाव:**
  - कोविड-19 महामारी ने अर्थव्यवस्था और सार्वजनिक वित्त के मामले में अभूतपूर्व व्यवधान एवं अनिश्चितता की स्थिति उत्पन्न की है।
  - इसने स्वास्थ्य प्रणाली और सामाजिक सुरक्षा उपायों को सुदृढ़ करने की आवश्यकता पर भी प्रकाश डाला है।
  - 16वें वित्त आयोग को केंद्र और राज्यों की राजकोषीय स्थिति एवं प्रदर्शन पर महामारी के प्रभाव एवं निहितार्थ के साथ-साथ उनकी व्यय संबंधी आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं को भी ध्यान में रखना होगा।

आगे की राह:

- **राजकोषीय स्वायत्तता और समता को संवृद्ध करना:**
  - FCs को केंद्र और राज्य सरकारों की संबंधित संवैधानिक ज़िम्मेदारियों एवं व्यय आवश्यकताओं के आधार पर उन्हें पर्याप्त और अनुमानित संसाधन प्रदान करने पर लक्षित होना चाहिये।
  - उन्हें विभिन्न राज्यों की राजकोषीय क्षमताओं, उनके प्रदर्शन और उनकी विशेष परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उनके बीच संसाधनों का निष्पक्ष एवं पारदर्शी वितरण भी सुनिश्चित करना चाहिये।
- **राजकोषीय दक्षता और जवाबदेही को बढ़ावा देना:**
  - FCs को केंद्र और राज्य सरकारों को राजकोषीय समेकन, ऋण स्थिरता, राजस्व जुटाने, व्यय युक्तिकरण जैसी ठोस राजकोषीय नीतियों एवं अभ्यासों को अपनाने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये।
  - उन्हें सार्वजनिक व्यय की गुणवत्ता एवं प्रभावशीलता में सुधार लाने के लिये भी प्रोत्साहित करना चाहिये, विशेषकर स्वास्थ्य, शिक्षा, अवसंरचना जैसे प्राथमिकता क्षेत्रों में।
- **उभरते मुद्दों और चुनौतियों को हल करना:**
  - FCs को देश और दुनिया में बदलते आर्थिक एवं सामाजिक परिदृश्यों के प्रति उत्तरदायी एवं सक्रिय होना चाहिये।
  - उन्हें जीएसटी के कार्यान्वयन, कोविड-19 महामारी, जलवायु परिवर्तन, डिजिटल रूपांतरण आदि से उत्पन्न मुद्दों एवं चुनौतियों को हल करना चाहिये।
  - उन्हें देश में सहकारी और प्रतिस्पर्द्धी संघवाद को बढ़ावा देने के लिये नए अवसरों और तंत्रों की भी तलाश करनी चाहिये।
- **संस्थागत क्षमता और विश्वसनीयता को सुदृढ़ करना:**
  - FCs को विश्वसनीय एवं अद्यतन डेटा स्रोतों का उपयोग करने, सुदृढ़ एवं नवोन्मेषी पद्धतियों को लागू करने, विशेषज्ञों एवं हितधारकों के साथ संलग्न होने जैसे प्रयासों के साथ अपनी विश्लेषणात्मक और सलाहकारी क्षमताओं में सुधार लाना चाहिये।
  - उन्हें अपनी रिपोर्टों एवं अनुशंसाओं को व्यापक रूप से प्रसारित करने, प्रतिक्रिया एवं सुझाव आमंत्रित करने, विभिन्न अभिकर्ताओं के बीच जागरूकता एवं आम सहमति का निर्माण करने के रूप में अपनी संचार और आउटरीच रणनीतियों को भी संवृद्ध करना चाहिये।

विश्व भर में महत्त्वपूर्ण खनिजों की मांग

जैसे-जैसे दुनिया तेज़ी से स्वच्छ ऊर्जा प्रौद्योगिकियों को अपनाती जा रही है और एक संवहनीय भविष्य की ओर आगे बढ़ रही है, महत्त्वपूर्ण खनिजों (critical minerals) की मांग अभूतपूर्व स्तर तक बढ़ गई है। लिथियम, कोबाल्ट, निकेल और कॉपर जैसे ये आवश्यक खनिज इलेक्ट्रिक वाहनों, सौर पैनलों, विंड टर्बाइनों और अन्य स्वच्छ ऊर्जा उपकरणों के संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालाँकि इन महत्त्वपूर्ण खनिजों की मांग में वृद्धि ने इनकी आपूर्ति को पीछे छोड़ दिया है, जिससे उल्लेखनीय चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं।

हरित संक्रमण हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण सामग्रियों की आपूर्ति में चीन एक प्रमुख स्थान रखता है, जिसे संभावित आपूर्ति जोखिम के रूप में देखा जाता है। गैलियम और जर्मेनियम जैसी महत्त्वपूर्ण धातुओं के निर्यात पर चीन द्वारा हाल ही में लगाए गए प्रतिबंध को इसके उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। यह इन आवश्यक सामग्रियों की आपूर्ति के लिये एक ही देश पर बहुत अधिक निर्भर रहने से जुड़ी चिंता को उजागर करता है।

खनिज तथा महत्त्वपूर्ण खनिज

- **खनिज (Minerals):**
  - खनिज प्राकृतिक पदार्थ हैं जो भूवैज्ञानिक प्रक्रियाओं द्वारा निर्मित होते हैं। उनकी एक निश्चित रासायनिक संरचना और भौतिक गुण होते हैं।
  - उन्हें गुणों और उपयोग के आधार पर धात्विक एवं गैर-धात्विक खनिजों में वर्गीकृत किया जाता है।

- धात्विक खनिज वे हैं जिनमें धातु या धातु यौगिक मौजूद होते हैं, जैसे लोहा, ताँबा, सोना, चाँदी आदि।
- अधात्विक खनिज वे हैं जिनमें धातु नहीं होती, जैसे चूना पत्थर, कोयला, अभ्रक, जिप्सम आदि।

- **महत्त्वपूर्ण खनिज (Critical Minerals):**
  - महत्त्वपूर्ण खनिज वे खनिज हैं जो आर्थिक विकास और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिये आवश्यक होते हैं। इन खनिजों की उपलब्धता में कमी या कुछ भौगोलिक स्थानों में निष्कर्षण या प्रसंस्करण की एकाग्रता से आपूर्ति शृंखला संबंधी भेद्यताएँ पैदा होती हैं और यहाँ तक कि इनसे आपूर्ति में व्यवधान भी उत्पन्न हो सकता है।

भारत के लिये महत्त्वपूर्ण खनिज:

- खान मंत्रालय के तहत विशेषज्ञ समिति ने भारत के लिये 30 महत्त्वपूर्ण खनिजों के एक समूह की पहचान की है।
- ये हैं: एंटीमनी, बेरिलियम, बिस्मथ, कोबाल्ट, कॉपर, गैलियम, जर्मेनियम, ग्रेफाइट, हैफनियम, इंडियम, लिथियम, मोलिब्डेनम, नाइओबियम, निकल, PGE, फॉस्फोरस, पोटाश, REE, रेनियम, सिलिकॉन, स्ट्रोंशियम, टैंटलम, टेल्यूरियम, टिन, टाइटेनियम, टंगस्टन, वैनेडियम, ज़िरकोनियम, सेलेनियम और कैडमियम।
- भारत ने खनिज बिदेश इंडिया लिमिटेड (KABIL) की स्थापना की है। यह तीन सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों का एक संयुक्त उद्यम है जो भारतीय घरेलू बाज़ार में महत्त्वपूर्ण एवं रणनीतिक खनिजों की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करने का लक्ष्य रखता है।
  - यह राष्ट्र की खनिज सुरक्षा सुनिश्चित करता है; यह आयात प्रतिस्थापन के समग्र उद्देश्य को साकार करने में भी मदद करता है।

विश्व भर में महत्त्वपूर्ण खनिजों का वर्तमान परिदृश्य

- **ऊर्जा संक्रमण खनिजों (Energy Transition Minerals) की मांग और बाज़ार में तेज़ी से वृद्धि:**
  - वर्ष 2017 से 2022 के बीच लिथियम की मांग में तीन गुना वृद्धि हुई, कोबाल्ट की मांग 70% बढ़ गई और निकल की मांग में 40% वृद्धि हुई, जो मुख्य रूप से ऊर्जा क्षेत्र द्वारा प्रेरित थी।
  - अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (IEA) के अनुसार, ऊर्जा संक्रमण खनिजों का बाज़ार वर्ष 2022 में 320 बिलियन डॉलर तक पहुँच गया और इसके तेज़ी से बढ़ते रहने की उम्मीद है।
- **नीतिगत उपायों के माध्यम से वैश्विक प्रयास:**
  - महत्त्वपूर्ण खनिज आपूर्ति की उपलब्धता ऊर्जा संक्रमण की वहनीयता और गति को वृहत रूप से प्रभावित करेगी। वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं की अनिश्चितता को कम करने के लिये विभिन्न देश अपनी खनिज आपूर्ति में विविधता लाने हेतु नई नीतियाँ लागू कर रहे हैं।
    - संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, यूरोपीय संघ (EU) और ऑस्ट्रेलिया ने नियामक कानून बनाया है, जबकि इंडोनेशिया, नामीबिया और जिम्बाब्वे जैसे संसाधन संपन्न देशों ने असंसाधित खनिज अयस्कों के निर्यात पर प्रतिबंध आरोपित किया है।
- **कार्यक्षेत्र एकीकरण के माध्यम से उद्योग की भूमिका:**
  - खनिज आपूर्ति सुरक्षित करने के लिये वाहन निर्माता, बैटरी सेल निर्माता और उपकरण निर्माता जैसे उद्योग महत्त्वपूर्ण खनिज मूल्य शृंखला में अधिक सक्रिय रूप से संलग्न हो रहे हैं।
    - इसमें खनिजों की खरीद के लिये दीर्घकालिक समझौते करने के साथ-साथ खनन और शोधन जैसी गतिविधियों में संलग्न होना शामिल है।
- **भू-राजनीतिक तनाव और संसाधन राष्ट्रवाद:**
  - इन चुनौतियों को संबोधित करना महत्त्वपूर्ण है क्योंकि राष्ट्रों के बीच वैश्विक संबंध अधिक ध्रुवीकृत हो गए हैं, विशेष रूप से अमेरिका-चीन व्यापार युद्ध और रूस-यूक्रेन युद्ध जैसी घटनाओं के कारण। इन संघर्षों के कारण स्थापित व्यापार पैटर्न में प्रतिबंध और व्यवधान उत्पन्न हुए हैं।
  - इसके अतिरिक्त, संसाधन राष्ट्रवाद (resource nationalism) की प्रवृत्ति बढ़ रही है, जहाँ देश अपने संसाधनों को प्राथमिकता देते हैं और निर्यात पर प्रतिबंध लगाते हैं। ये कारक वैश्विक व्यापार प्रवाह की अनिश्चितताओं में योगदान करते हैं।
- **आपूर्ति-मांग की गतिशीलता:**
  - आपूर्ति से अधिक मांग की वृद्धि के कारण तांबे जैसी महत्त्वपूर्ण औद्योगिक धातुओं के मूल्य आने वाले वर्षों में बढ़ सकते हैं। सामग्री के मूल्यों में इस वृद्धि से सौर पैनलों और इलेक्ट्रिक वाहनों जैसे उपकरणों की उत्पादन लागत प्रभावित होने की संभावना है।

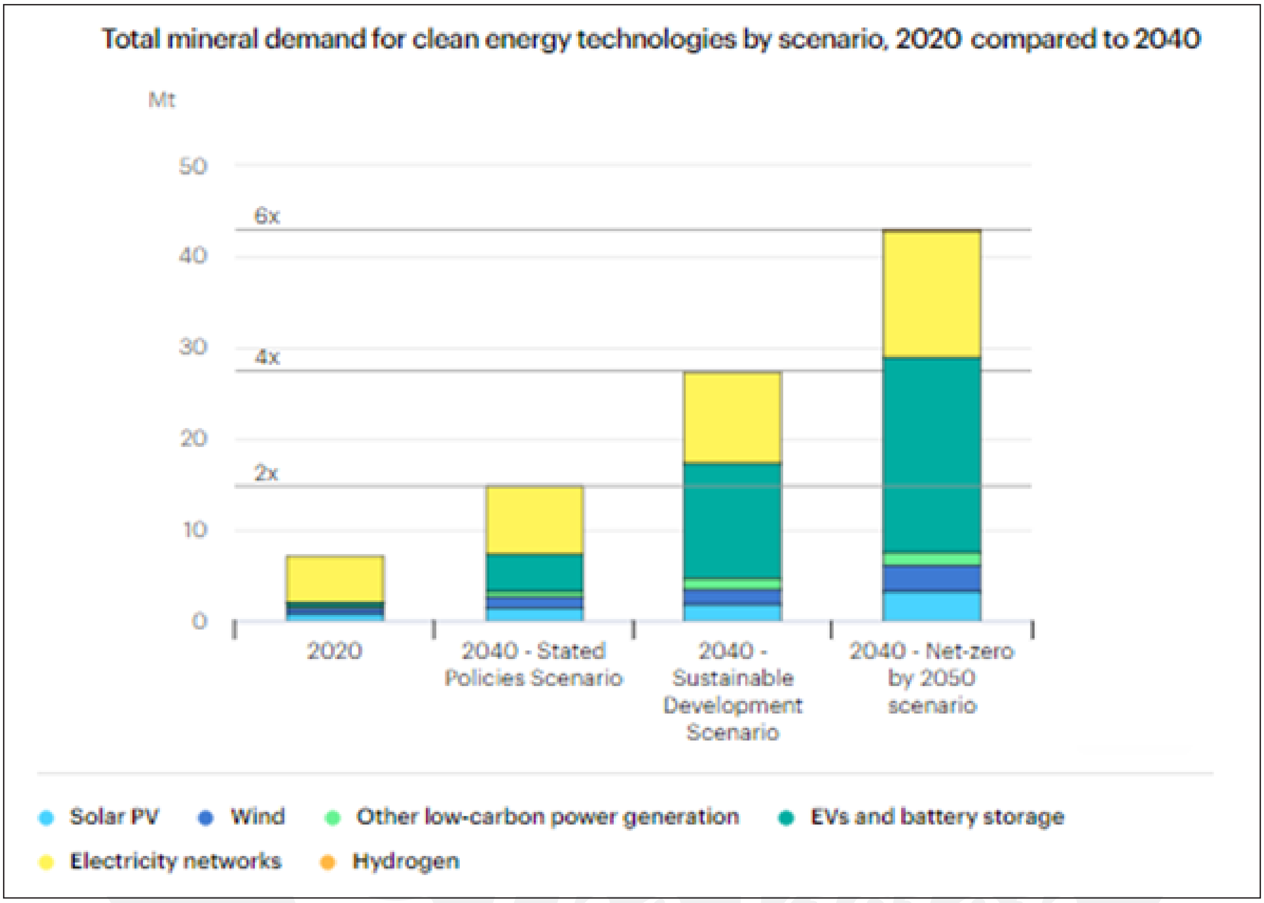

भारत में महत्त्वपूर्ण खनिजों से संबद्ध प्रमुख चुनौतियाँ

- **भारत वर्तमान में महत्त्वपूर्ण खनिजों के लिये विश्वसनीय आपूर्ति शृंखला सुनिश्चित करने में वैश्विक और घरेलू दोनों स्तरों पर चुनौतियों का सामना कर रहा है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विचार करने योग्य कुछ प्रमुख जोखिम ये हैं:**
  - कोविड-19 का प्रभाव: चीन, जो महत्त्वपूर्ण खनिज आपूर्ति शृंखलाओं में प्रमुख स्थान रखता है, अभी भी कोविड-19 से संघर्ष कर रहा है। इसके परिणामस्वरूप महत्त्वपूर्ण खनिजों के निष्कर्षण, प्रसंस्करण और निर्यात में मंदी का एक उल्लेखनीय जोखिम मौजूद है।
  - रूस-यूक्रेन युद्ध: इस संघर्ष का महत्त्वपूर्ण खनिज आपूर्ति शृंखलाओं के लिये कुछ निहितार्थ हैं। रूस निकल, पैलेडियम, टाइटेनियम स्पंज धातु और दुर्लभ मृदा तत्त्व स्कैंडियम का एक प्रमुख उत्पादक है।
    - यूक्रेन टाइटेनियम का एक महत्त्वपूर्ण उत्पादक है और लिथियम, कोबाल्ट, ग्रेफाइट एवं दुर्लभ मृदा तत्त्वों का भंडार रखता है।
  - दोनों देशों के बीच चल रहा युद्ध वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं में इन महत्त्वपूर्ण खनिजों की स्थिरता और उपलब्धता के संबंध में एक चिंता उत्पन्न करता है।
  - अंतर्राष्ट्रीय पहलों में चीन-रूस साझेदारी और असमानता का प्रभाव: देशों और महाद्वीपों के बीच शक्ति संतुलन का उभार महत्त्वपूर्ण खनिज आपूर्ति शृंखलाओं के लिये खतरा पैदा करता है, जिसका मुख्य कारण है चीन और रूस के बीच रणनीतिक साझेदारी।
    - दोनों देशों के इस गठबंधन का महत्त्वपूर्ण खनिजों की स्थिरता और उपलब्धता पर प्रभाव पड़ सकता है। इसकी प्रतिक्रिया में विकसित देशों ने खनिज सुरक्षा साझेदारी (Minerals Security Partnership-MSP) और G7 के सतत् महत्त्वपूर्ण खनिज गठबंधन (Sustainable Critical Minerals Alliance) जैसी सहयोगी रणनीतियों का निर्माण किया है।

- हालाँकि, विकासशील देशों को इन पहलों में सक्रिय रूप से शामिल नहीं किया गया है, जिससे वे इन साझेदारियों द्वारा प्रदान किये जाने वाले लाभों और सुरक्षा से वंचित रह सकते हैं।

- भारत के पास इनमें से बहुत से खनिजों के भंडार नहीं हैं या उसे उपलब्धता से अधिक की आवश्यकता हो सकती है, जिससे घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये विदेशी भागीदारों पर निर्भर रहना पड़ता है।

महत्त्वपूर्ण खनिजों से संबंधित चुनौतियों को कम करने के लिये अनुशंसित रणनीतियाँ:

- तीव्र मांग वृद्धि की पूर्ति करना: यह सुनिश्चित करना कि महत्त्वपूर्ण खनिजों की भविष्य की आपूर्ति जलवायु-संचालित परिदृश्यों से प्रेरित तेजी से बढ़ती मांग को पूरा कर सके। यह आकलन करना महत्त्वपूर्ण है कि इन खनिजों की वैश्विक आपूर्ति मांग में इस वृद्धि के साथ तालमेल बिठा सकती है या नहीं।
- आपूर्ति के स्रोतों का विविधीकरण: वर्तमान में इन खनिजों के लिये कुछ ही देशों पर निर्भरता आपूर्ति शृंखला के लिये जोखिम पैदा करती है। स्रोतों में विविधता लाकर विश्व के देश और विभिन्न उद्योग भू-राजनीतिक कारकों, व्यापार प्रतिबंधों या अन्य अनिश्चितताओं के कारण आपूर्ति में व्यवधान की आशंका को कम कर सकते हैं।
- स्वच्छ और ज़िम्मेदार स्रोत सुनिश्चित करना: यह सुनिश्चित करना कि ऊर्जा संक्रमण के लिये आवश्यक महत्त्वपूर्ण खनिजों की आपूर्ति स्वच्छ एवं ज़िम्मेदार स्रोतों से की जा सके। खनन और शोधन प्रक्रियाओं का पर्यावरणीय और सामाजिक प्रभाव हो सकता है, जिसमें प्रदूषण, पर्यावास विनाश और मानवाधिकार संबंधी चिंताओं जैसे मुद्दे शामिल हैं।
  - इन प्रभावों को कम करने और एक संवहनीय ऊर्जा संक्रमण सुनिश्चित करने के लिये महत्त्वपूर्ण खनिज मूल्य शृंखला में संवहनीय और ज़िम्मेदार अभ्यासों को बढ़ावा देना महत्त्वपूर्ण है।

आगे की राह

- संसाधन उपलब्धता सुनिश्चित करना: संसाधन के पहलू को संबोधित करना अत्यंत आवश्यक है। स्वच्छ ऊर्जा प्रौद्योगिकियों के लिये आवश्यक महत्त्वपूर्ण सामग्रियों की उपलब्धता और पहुँच का आकलन करना आवश्यक है। इसमें महत्त्वपूर्ण खनिजों के घरेलू भंडार का मूल्यांकन करना और विविध अंतर्राष्ट्रीय बाज़ारों से उनके स्थायी निष्कर्षण या सोर्सिंग के अवसर तलाशना शामिल है।
  - इसके अतिरिक्त, वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं में संभावित व्यवधानों से जुड़े जोखिमों को कम करते हुए इन सामग्रियों की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिये रणनीतियाँ होनी चाहिये।
- वित्तीय दृष्टिकोण: स्वच्छ ऊर्जा की ओर आगे बढ़ने के लिये प्राय: अवसंरचना के विकास, अनुसंधान एवं विकास और नीति समर्थन में उल्लेखनीय निवेश की आवश्यकता होती है। ऐसे वित्तपोषण तंत्र, प्रोत्साहन और वित्तपोषण मॉडल की आवश्यकता है जो सार्वजनिक और निजी दोनों निवेशों को आकर्षित कर सके।
  - एक सफल ऊर्जा संक्रमण के लिये आवश्यक पूंजी जुटाने में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के लिये अवसरों की पहचान करना और नवीन वित्तपोषण विकल्पों की खोज करना भी महत्त्वपूर्ण होगा।
- मुख्य चालक के रूप में प्रौद्योगिकी का उपयोग: प्रौद्योगिकी हमारे ऊर्जा लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। विश्व के लिये घरेलू तकनीकी क्षमताओं को बढ़ावा देने, अनुसंधान एवं विकास को बढ़ावा देने और स्वच्छ ऊर्जा प्रौद्योगिकियों में नवाचार को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है।
  - प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, शिक्षा जगत एवं उद्योग के साथ सहयोग और एक ऐसे पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण की आवश्यकता है जो नवोन्मेषी स्वच्छ ऊर्जा समाधानों के विकास, अंगीकरण और विस्तार का समर्थन करता हो।

निष्कर्ष

भारत को वैश्विक परिदृश्य से महत्त्वपूर्ण सबक लेने की ज़रूरत है। तीव्र डीकार्बोनाइजेशन और ऊर्जा संक्रमण के लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ते हुए भारत को तीव्र संक्रमण के लिये आवश्यक प्रमुख खनिजों और धातुओं की सीमित उपलब्धता के कारण चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है। अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में भारत के प्रयासों की सफलता इन महत्त्वपूर्ण संसाधनों के लिये विश्व बाज़ार की अनिश्चितताओं और उतार-चढ़ाव पर निर्भर करेगी।

संवैधानिक नैतिकता और व्यक्तिगत संबंध

संवैधानिक नैतिकता (Constitutional morality) एक ऐसी अवधारणा है जो व्यक्तिगत पसंद और संबंधों के मामलों में व्यक्तिगत स्वायत्तता, स्वतंत्रता, समानता, गरिमा, निजता एवं गैर-भेदभाव जैसे संवैधानिक लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों के पालन को संदर्भित करती है।

किरण रावत बनाम उत्तर प्रदेश राज्य मामले में इलाहबाद उच्च न्यायालय का निर्णय संवैधानिक नैतिकता के उल्लंघन के रूप में देखा जा रहा है, जहाँ उच्च न्यायालय ने लिव-इन रिलेशनशिप में रह रहे एक अंतर-धार्मिक युगल को इस आधार पर पुलिस उत्पीड़न से सुरक्षा प्रदान करने से इनकार कर दिया कि उनका संबंध अनैतिक, अवैध और निजी कानूनों के विरुद्ध है।

संविधान के सिद्धांतों द्वारा शासित लोकतांत्रिक समाज के कार्यकरण को आकार और दिशा देने में संवैधानिक नैतिकता एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जबकि यह व्याख्या का विषय है और इसकी अपनी चुनौतियाँ हैं। यह मूल अधिकारों की रक्षा करने, न्याय सुनिश्चित करने और शक्ति संतुलन बनाए रखने के लिये एक मार्गदर्शक ढाँचे के रूप में कार्य करता है।

संवैधानिक नैतिकता का महत्त्व:

- **व्यक्तिगत स्वायत्तता और निजी स्वतंत्रता की सुरक्षा:**
  - इससे अंतरंग पसंदों और संबंधों को मानव व्यक्तित्व के अंतर्निहित एवं अविभाज्य पहलुओं के रूप में मान्यता मिलती है।
  - इससे सार्वजनिक या सामाजिक नैतिकता के आधार पर विनियमन करने या दंड देने की राज्य की शक्ति सीमित होती है।
- **संवैधानिक मूल्यों का सम्मान:**
  - इससे धर्मनिरपेक्षता, बहुलवाद (pluralism) और विविधता की रक्षा होती है।
  - इससे उन व्यक्तियों पर धार्मिक या सांस्कृतिक मानदंडों को थोपे जाने को निषिद्ध किया जाता है जो स्वेच्छा से उन्हें स्वीकार नहीं करते हैं।
- **बहुलवाद और विविधता को बढ़ावा देना:**
  - इससे विभिन्न समूहों और समुदायों के बीच सहिष्णुता, सम्मान और संवाद की संस्कृति को बढ़ावा मिलता है।
  - यह व्यक्तियों को बिना किसी भय या दबाव के अपनी पहचान और प्राथमिकताओं को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने में सक्षम बनाने में महत्त्वपूर्ण है।

संवैधानिक नैतिकता की रक्षा करने वाले प्रमुख ऐतिहासिक निर्णय:

- **लता सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2006):**
  - अंतर-जातीय और अंतर-धार्मिक युग्लों को उत्पीड़न एवं हिंसा से सुरक्षा प्रदान करने का निर्देश दिया गया।
- **एस. ख़ुशबू बनाम कन्नियाम्माल और अन्य (2010):**
  - विवाह के बाहर सहमत वयस्कों के बीच यौन संबंधों को वैध और निजता के अधिकार के अंतर्गत घोषित किया गया।
- **नाज़ फाउंडेशन बनाम एनसीटी दिल्ली सरकार (2009):**
  - भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 377 को मूल अधिकारों का उल्लंघन घोषित करते हुए वयस्कों के बीच सहमत समलैंगिक कृत्यों को अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया गया।
- **जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ (2018):**
  - व्यभिचार (adultery) को अपराध की श्रेणी से हटा दिया गया और इसे समानता, गरिमा, निजता एवं स्वायत्तता के अधिकारों का उल्लंघन घोषित किया गया।
- **नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ (2018):**
  - इसमें LGBTQ+ व्यक्तियों के अपनी यौन उन्मुखता और पहचान को गरिमा के साथ व्यक्त कर सकने के अधिकारों की पुष्टि की गई।
- **शफीन जहां बनाम अशोकन के.एम. (2018):**
  - इस निर्णय में धर्म या जाति की परवाह किये बिना अपनी पसंद के व्यक्ति से विवाह करने के अधिकार की पुष्टि की गई और हिंदू-मुस्लिम विवाह के इस मामले को रद्द करने के फ़ैसले को न्यायालय ने निरस्त कर दिया।
- **शक्ति वाहिनी बनाम भारत संघ (2018):**
  - अंतर-जातीय और अंतर-धार्मिक युगलों की 'ऑनर किलिंग' और उनके विरुद्ध हिंसा की निंदा की गई तथा इस पर रोक और उनकी सुरक्षा के लिये दिशा-निर्देश जारी किये गए।

संवैधानिक नैतिकता से संबद्ध चुनौतियाँ:

- **स्पष्ट परिभाषा का अभाव:**
  - संवैधानिक नैतिकता की कोई स्पष्ट परिभाषा मौजूद नहीं है, जिससे व्यक्तिगत धारणाओं के आधार पर भिन्न-भिन्न व्याख्याओं की स्थिति बनती है।
- **न्यायिक सर्वोच्चता को बढ़ावा:**
  - संवैधानिक नैतिकता न्यायिक सर्वोच्चता (judicial supremacy) को बढ़ावा देती है, जिसके परिणामस्वरूप न्यायपालिका, विधायिका के कार्यकलाप में हस्तक्षेप कर सकती है।
  - यह हस्तक्षेप शक्तियों के पृथक्करण (separation of powers) के सिद्धांत का उल्लंघन करता है।

- **लोक-प्रचलित नैतिकता और धार्मिक मान्यताओं के साथ संघर्ष:**
  - संवैधानिक नैतिकता कभी-कभी लोक-प्रचलित नैतिकता (popular morality) या धार्मिक मान्यताओं (religious beliefs) से टकराव की स्थिति उत्पन्न कर सकती है।
  - इससे सामाजिक अशांति और प्रतिरोध की स्थिति बन सकती है।
  - समलैंगिक संबंधों को अपराध की श्रेणी से बाहर करने और सबरीमाला मंदिर में महिलाओं के प्रवेश को अनुमति देने जैसे सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर समाज के कुछ वर्गों द्वारा विरोध को ऐसे संघर्षों के उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है।
- **राजनीतिक विचारों और निजी पूर्वाग्रहों का प्रभाव:**
  - संवैधानिक नैतिकता राजनीतिक विचारों या निजी पूर्वाग्रहों से प्रभावित हो सकती है।
  - ये प्रभाव संवैधानिक नैतिकता की निष्पक्षता एवं वैधता को कमज़ोर कर सकते हैं।

संवैधानिक नैतिकता के लिये आगे की राह:

- **स्पष्ट परिभाषा और समझ:**
  - व्याख्या और अनुप्रयोग के लिये ठोस आधार प्रदान करते हुए संवैधानिक नैतिकता की स्पष्ट एवं व्यापक परिभाषा स्थापित करने का प्रयास किया जाना चाहिये।
- **जन जागरूकता और शिक्षा:**
  - संवैधानिक नैतिकता के संबंध में सार्वजनिक जागरूकता एवं शिक्षा को बढ़ावा देना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।
  - इसमें नागरिक शिक्षा को संवृद्ध करना, सार्वजनिक विमर्श आयोजित करना और इसके सिद्धांतों की गहरी समझ को बढ़ावा देने के लिये विभिन्न हितधारकों के साथ संलग्न होना शामिल है।
- **न्यायिक संयम और शक्तियों के पृथक्करण का सम्मान:**
  - न्यायिक सर्वोच्चता से जुड़ी चिंताओं को दूर करने के लिये न्यायिक संयम (Judicial Restraint) और शक्तियों के पृथक्करण के सम्मान पर ध्यान दिया जाना चाहिये।
  - न्यायपालिका को विधायी मामलों में हस्तक्षेप करने में सावधानी बरतनी चाहिये और संवैधानिक मूल्यों को बनाए रखने एवं सरकार के अन्य अंगों की भूमिकाओं का सम्मान करने के बीच संतुलन बनाए रखना चाहिये।
- **विकासशील और अनुकूल दृष्टिकोण:**
  - संवैधानिक नैतिकता को विकसित हो रहे सामाजिक मानदंडों, मूल्यों एवं चुनौतियों के प्रति लचीला और अनुकूल होना चाहिये।
  - संविधान की व्याख्या के लिये उत्तरदायी न्यायालयों और अन्य संस्थानों को एक गतिशील दृष्टिकोण अपनाना चाहिये जो समसामयिक मुद्दों और प्रगतियों से प्रेरित हो।

भारत में बाढ़ का कहर

भारत ऐसा देश है जो हर साल बाढ़ और सूखे की दोहरी चुनौतियों का सामना करता है। मानसून का मौसम (जो वार्षिक वर्षा में लगभग 75% भाग का योगदान करता है) अत्यधिक परिवर्तनशीलता एवं अनिश्चितता की अवधि भी है। साल-दर-साल जैसे-जैसे मानसून का मौसम आता है, बाढ़ का कहर भी शुरू हो जाता है जिससे काफी तबाही होती है। वर्ष 2023 में भी जैसे-जैसे मानसून आगे बढ़ रहा है, बाढ़ से होने वाली क्षति और विनाश का वही पुराना पैटर्न सामने आ रहा है। इस समस्या की भयावहता तब स्पष्ट हो जाती है जब हम इसके चौंका देने वाले आँकड़ों पर नज़र डालते हैं: हर साल औसतन कम से कम एक बड़ी बाढ़ की घटना सामने आती है, जिसके परिणामस्वरूप जन-धन की काफी हानि होती है।

भारत में बाढ़ हेतु उत्तरदायी कारक:

- **अधिक वर्षा (Heavy Rainfall):**
  - यह भारत में बाढ़ का सबसे आम कारण है। मानसून का मौसम (जो जून से सितंबर माह तक रहता है) देश के विभिन्न हिस्सों में तीव्र एवं अनियमित वर्षा का कारण बनता है।
  - कई बार, वर्षा की मात्रा मृदा की जल अवशोषण क्षमता या जल निकासी प्रणाली द्वारा अतिरिक्त जल को बहा सकने की क्षमता से अधिक हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप बाढ़ की स्थिति उत्पन्न होती है।
  - उदाहरण के लिये जुलाई 2023 में दिल्ली में 3-10 जुलाई के बीच इन आठ में से पाँच दिनों में 'अतिरिक्त' (excess) और 'वृहत अतिरिक्त' (large excess) वर्षा हुई। 9 जुलाई को 221.4 मिमी वर्षा दर्ज की गई, जो पूरे जुलाई माह के औसत 209.7 मिमी से भी अधिक थी।
    - इससे शहर के बड़े हिस्से में बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो गई।
- **बर्फ का पिघलना (Snowmelt):**
  - बढ़ते तापमान के कारण पर्वतों की बर्फ और ग्लेशियर पिघलने लगते हैं, जिससे नदियों और जलधाराओं में जल की मात्रा बढ़ जाती है।

नोट :

- इससे उनका जल स्तर बढ़ सकता है और निचले इलाकों में बाढ़ आ सकती है।
- उदाहरण के लिये फ़रवरी 2021 में उत्तराखंड में एक हिमनद के फटने के कारण बर्फ, हिम और मलबे का स्खलन होने से व्यापक 'फ्लैश फ्लड' उत्पन्न हुआ।

- **चक्रवात और तूफ़ान (Cyclones and Storms):**
  - ये मौसमी घटनाएँ हैं जो भारत के तटीय क्षेत्रों में तेज़ पवनों (आँधी) और भारी बारिश का कारण बन सकती हैं।
  - ये तूफ़ान महोर्मि (storm surges) की उत्पत्ति का कारण बन सकते हैं, जो निम्न वायुमंडलीय दाब और अत्यंत प्रबल पवनों (high winds) के कारण समुद्र के स्तर में अचानक वृद्धि की स्थिति है।
  - तूफ़ान महोर्मि से निचले इलाकों में जल भर सकता है और यह तटीय बाढ़ का कारण बन सकते हैं।
  - उदाहरण के लिये, मई 2020 में चक्रवात अम्फान (Cyclone Amphan) 185 किमी/घंटा तक की पवन गति और 5 मीटर तक के तूफ़ान महोर्मि के साथ पश्चिम बंगाल और ओडिशा तट से टकराया।
- **नदी का अतिप्रवाह (River Overflow):**
  - यह भी बाढ़ का एक कारण है यह तब देखा जाता है जब किसी नदी में ऊपरी क्षेत्र से आने वाली जलधारा का अत्यधिक प्रवाह होता है या निचले क्षेत्र की धारा में गाद जमा होने से कम प्रवाह होता है।
  - नदी का अतिप्रवाह भारी वर्षा, बर्फ पिघलने, चक्रवात, बाँध या बैराज से अधिक जल छोड़ने या नदियों में अत्यधिक गाद जमा होने जैसे कारकों से हो सकता है।
  - उदाहरण के लिये वर्ष 2023 में हिमाचल प्रदेश और हरियाणा जैसे ऊपरी राज्यों में भारी वर्षा के कारण यमुना नदी का जल स्तर काफी अधिक हो गया। दिल्ली में अवस्थित बैराज इस अतिप्रवाह को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने में असमर्थ थे, जिससे नदी के पास के कई क्षेत्रों में बाढ़ आ गई।

भारत में बाढ़ के प्रभाव:

- **जान की हानि:**
  - बाढ़ की स्थिति में लोगों के डूबने, घायल होने, संक्रमण के प्रसार या बिजली का करंट लगने जैसे कई कारणों से मौतें हो सकती हैं। राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (National Disaster Management Authority- NDMA) के अनुसार भारत में बाढ़ सबसे घातक प्राकृतिक आपदाओं में से एक है।
  - हर साल बाढ़ के कारण औसतन 1,600 लोगों की जान चली जाती है।
  - वर्ष 2023 की अभी आधी अवधि में ही उत्तर भारत में बाढ़ के कारण कम से कम 60 लोगों की मौत की पुष्टि हो चुकी है, जबकि वास्तविक आँकड़े इससे अधिक भी हो सकते हैं।
- **संपत्ति की क्षति:**
  - बाढ़ से घरों, इमारतों, सड़कों, पुलों, रेलवे, बिजली लाइनों, संचार नेटवर्क और अन्य अवसंरचना को क्षति पहुँच सकती है।
  - बाढ़ फसलों, पशुधन, वाहनों और अन्य संपत्तियों को भी क्षति पहुँचा सकती है या अपने साथ बहा ले जा सकती है।
  - NDMA के अनुसार भारत में बाढ़ प्रतिवर्ष लगभग 75 लाख हेक्टेयर भूमि क्षेत्र को प्रभावित करती है और फसलों, घरों एवं सार्वजनिक उपयोगिताओं की क्षति के रूप में 1,805 करोड़ रुपए मूल्य की हानि का कारण बनती है।
  - वर्ष 2023 में दिल्ली में आई बाढ़ ने लाल किला और सर्वोच्च न्यायालय जैसे कई स्थलों को व्यापक नुकसान पहुँचाया।
- **लोगों का विस्थापन:**
  - बाढ़ लोगों को अपना घर छोड़कर सुरक्षित स्थानों पर शरण लेने के लिये विवश कर सकती है। इससे उनके सामान्य जीवन और आजीविका को बाधा पहुँच सकती है।
  - बाढ़ खाद्य, जल, स्वच्छता, स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा की उपलब्धता को प्रभावित करके मानवीय संकट भी उत्पन्न कर सकती है।
  - आंतरिक विस्थापन निगरानी केंद्र (Internal Displacement Monitoring Centre- IDMC) के अनुसार, वर्ष 2020 में भारत में बाढ़ से लगभग 5.4 मिलियन लोग विस्थापित हुए।
  - वर्ष 2023 में बाढ़ ने उत्तर भारत में (विशेषकर हिमाचल प्रदेश और पंजाब में) हज़ारों लोगों को विस्थापित किया।
- **पर्यावरणीय क्षरण:**
  - मृदा अपरदन, वनस्पतियों एवं जीवों के प्राकृतिक पर्यावासों को बदलने, जल स्रोतों को प्रदूषित करने और भूस्खलन एवं महामारी के खतरे को बढ़ाने के रूप में बाढ़, पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है।

नोट :

- बाढ़, नदियों और आर्द्रभूमियों के जल विज्ञान एवं जैव विविधता को बदलकर उनके पारिस्थितिकी संतुलन को भी प्रभावित कर सकती है।
- उदाहरण के लिये, बाढ़ संकटग्रस्त गंगा डॉल्फिन और यमुना नदी के घड़ियालों के अस्तित्व को खतरे में डाल सकती है।

- **आर्थिक हानि:**
  - बाढ़ कृषि उत्पादन को कम कर, औद्योगिक उत्पादन को बाधित कर, व्यापार एवं वाणिज्य को प्रभावित कर और राहत एवं पुनर्वास पर व्यय को बढ़ाकर भारत की आर्थिक वृद्धि एवं विकास को प्रभावित कर सकती है।
  - बाढ़ सांस्कृतिक विरासत और प्राकृतिक आकर्षण स्थलों को क्षति पहुँचाकर पर्यटन क्षेत्र को भी प्रभावित कर सकती है। विश्व बैंक के एक अध्ययन के अनुसार, बाढ़ से भारत को प्रतिवर्ष लगभग 14 बिलियन अमेरिकी डॉलर की प्रत्यक्ष हानि होती है।

भारत में बाढ़ प्रबंधन हेतु उपलब्ध समाधान:

संरचनात्मक उपाय (Structural Measures)

- **भंडारण जलाशय (Storage Reservoirs):**
  - ये कृत्रिम संरचनाएँ हैं जो उच्च प्रवाह अवधि के दौरान जल को संग्रहीत करती हैं और निम्न प्रवाह अवधि के दौरान इसे छोड़ती हैं।
  - ये नीचे की ओर बहते जल की मात्रा और उसके वेग को कम कर बाढ़ को नियंत्रित कर सकते हैं।
  - ये सिंचाई, बिजली उत्पादन, जल आपूर्ति और अन्य उद्देश्यों के लिये जल का संरक्षण भी कर सकते हैं।
  - उदाहरण के लिये, सतलुज नदी पर बना भाखड़ा नांगल बाँध लगभग 9.34 BCM (Billion Cubic Meters) की भंडारण क्षमता रखता है और यह बाढ़ नियंत्रण के साथ-साथ बिजली उत्पादन एवं सिंचाई में मदद करता है।
- **तटबंध (Embankments):**
  - तटबंध ऐसी उभरी हुई संरचनाएँ हैं जो जल के प्रवाह को एक चैनल के भीतर या किनारे तक सीमित रखती हैं।
  - वे नदी की वहन क्षमता बढ़ाकर या अतिरिक्त जल को अन्य चैनलों की ओर मोड़कर निकटवर्ती क्षेत्रों की बाढ़ से रक्षा कर सकते हैं।
  - वे नदी के किनारे सड़कें और मनोरंजक सुविधाएँ भी प्रदान कर सकते हैं।
  - उदाहरण के लिये, बिहार में कोसी तटबंध परियोजना का उद्देश्य कोसी नदी के दोनों किनारों पर तटबंध का निर्माण कर बाढ़ को रोकना है।
- **डायवर्जन बाँध (Diversions Dam):**
  - ये ऐसी संरचनाएँ हैं जो जल के एक अंश को या पूरे प्रवाह को एक चैनल से दूसरे चैनल की ओर मोड़ देती हैं।
  - वे अतिरिक्त जल को कम संवेदनशील क्षेत्रों या भंडारण जलाशयों में स्थानांतरित करके बाढ़ की तीव्रता को कम कर सकते हैं।
  - वे अन्य क्षेत्रों को सिंचाई सुविधा या पेयजल भी उपलब्ध करा सकते हैं।
  - उदाहरण के लिये, इंदिरा गांधी नहर परियोजना सतलुज और ब्यास नदियों के जल को राजस्थान में थार मरुस्थल की ओर सिंचाई सुविधा और पेयजल उपलब्ध कराने के उद्देश्य से मोड़ती है।

गैर-संरचनात्मक उपाय (Non-structural Measures):

- **बाढ़ का पूर्वानुमान और चेतावनी (Flood Forecasting and Warning):**
  - यह एक ऐसी प्रणाली है जो मौसम संबंधी और जल विज्ञान संबंधी आँकड़ों के आधार पर आने वाली बाढ़ का पूर्व अनुमान प्रदान करती है।
  - इससे लोगों और चल संपत्तियों को समय पर सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाने में मदद मिलती है।
  - यह जलाशय संचालन और बाढ़ राहत समन्वय में भी मदद करती है।
  - उदाहरण के लिये, केंद्रीय जल आयोग (Central Water Commission- CWC) देश भर में बाढ़ पूर्वानुमान स्टेशनों का एक नेटवर्क संचालित करता है, जो बाढ़ की स्थिति पर दैनिक बुलेटिन एवं अलर्ट जारी करते हैं।
- **बाढ़ मैदान का क्षेत्रीकरण (Flood Plain Zoning):**
  - यह एक विनियामक उपाय है जो बाढ़-प्रवण क्षेत्रों में उनकी संवेदनशीलता और उपयुक्तता के आधार पर भूमि के उपयोग को प्रतिबंधित या नियंत्रित करता है।
  - इसका उद्देश्य उच्च जोखिमपूर्ण क्षेत्रों में विकास गतिविधियों को हतोत्साहित या प्रतिबंधित कर मानव बस्तियों और आधारभूत संरचना के जोखिम एवं क्षति को कम करना है।

नोट :

- ◆ यह आर्द्रभूमि और वनों जैसे प्राकृतिक 'फ्लड बफर' के संरक्षण एवं पुनर्बहाली को भी बढ़ावा देता है।
- ◆ उदाहरण के लिये, NDMA ने भारत में 'फ्लड प्लेन ज़ोनिंग' के लिये दिशानिर्देश जारी किये हैं, जहाँ भूमि को चार क्षेत्रों में वर्गीकृत किया गया है: निषिद्ध (prohibited), नियंत्रित (restricted), विनियमित (regulated) और मुक्त (free)।

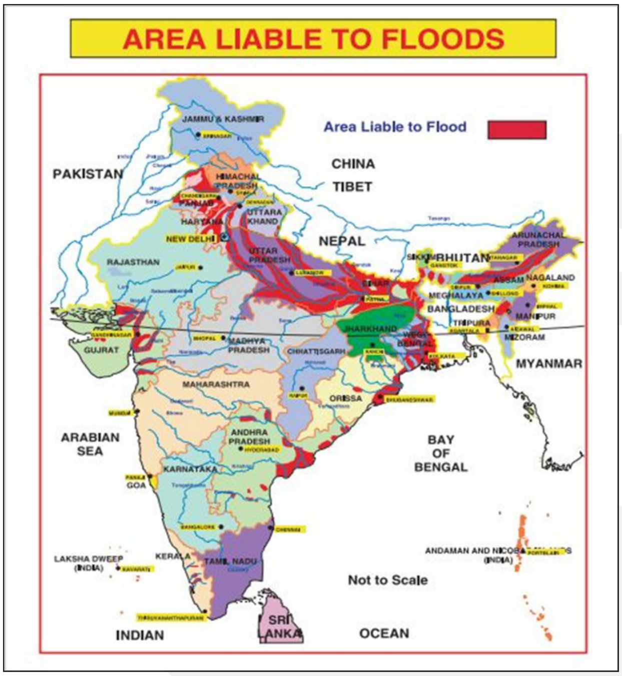

- **बाढ़ बीमा (Flood Insurance):**
  - ◆ यह एक वित्तीय उपाय है जो किसी बीमा कंपनी को प्रीमियम का भुगतान करने वाले व्यक्तियों या समूहों को बाढ़ से हुए नुकसान के लिये मुआवजा प्रदान करने का दायित्व देता है।
  - ◆ इसका उद्देश्य सरकार पर राहत एवं पुनर्वास के बोझ को कम करना और बीमित पक्षों द्वारा जोखिम शमनकारी उपायों के प्रयोग को प्रोत्साहित करना है।
  - ◆ यह बाढ़ जोखिम और क्षति मूल्यांकन का एक डेटाबेस सृजित करने में भी मदद करता है। उदाहरण के लिये, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (PMFBY) बाढ़ और अन्य प्राकृतिक आपदाओं के कारण होने वाले नुकसान को कवर करती है।
- **बाढ़ संबंधी जागरूकता और शिक्षा (Flood Awareness and Education):**
  - ◆ यह एक सामाजिक उपाय है जिसमें समुदायों, अधिकारियों, मीडिया, गैर-सरकारी संगठनों जैसे विभिन्न हितधारकों के बीच बाढ़ के बारे में जागरूकता पैदा करना और ज्ञान प्रदान करना शामिल है।
  - ◆ इसका उद्देश्य बाढ़ के खतरों, जोखिमों, शमनकारी उपायों, पूर्व चेतावनी प्रणालियों, निकासी मार्गों, आपातकालीन संपर्कों आदि के बारे में जानकारी प्रदान करके लोगों की तैयारी एवं प्रतिक्रिया क्षमता को बढ़ाना है।
  - ◆ यह लोगों के बीच बचाव और प्रत्यास्थता की एक संस्कृति के निर्माण में भी मदद करती है।
  - ◆ उदाहरण के लिये, NDMA भारत में बाढ़ प्रबंधन पर विभिन्न जागरूकता अभियान और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है।

आगे की राह:

- बाढ़ प्रबंधन के लिये संरचनात्मक एवं गैर-संरचनात्मक उपायों के पूरे समूह के साथ ही ग्रे, ब्लू और ग्रीन इंफ्रास्ट्रक्चर के एक उपयुक्त मिश्रण पर विचार करने की आवश्यकता है।
- मानसिकता में परिवर्तन की आवश्यता है, जहाँ बाढ़ के प्रवाह को बाद के उपयोग और जल सुरक्षा के लिये संरक्षित किये जा सकने वाले संसाधन के रूप में देखा जाना चाहिए।
- पर्यावरण का ध्यान रखते हुए बाढ़ प्रबंधन के लिये नदी बेसिन दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए।
- यह विवेकपूर्ण होगा कि हम अब देश में जल-अवसंरचना को उन्नत करें ताकि बढ़ी हुई परिवर्तनशीलता को प्रबंधित करने के साधन समय पर उपलब्ध हों।

भारत में अप्रूवल वोटिंग का दायरा

भारत एक विविध और बहुदलीय लोकतंत्र है, जहाँ 600 से अधिक राजनीतिक दल आम चुनाव में भाग लेते हैं और लगभग तीन दर्जन दलों का कम से कम एक सदस्य संसद में होता है।

फर्स्ट-पास्ट-द-पोस्ट (First-Past-The-Post- FPTP) पद्धति भारत की अनूठी राजनीतिक विविधता के साथ अधिक संगत नहीं है, क्योंकि यह कई दलों के बीच मतों के बँटवारे को बढ़ावा देती है और विभिन्न दलों के बीच अवसरवादी एवं अप्राकृतिक गठबंधन के लिये प्रोत्साहन पैदा करती है।

दूसरी ओर अप्रूवल वोटिंग (Approval voting) मतदाता विखंडन को कम कर सकती है और वैचारिक राजनीति को प्रोत्साहित कर सकती है, क्योंकि यह मतदाताओं को अपना मत बर्बाद करने या सबसे कम पसंदीदा विकल्प की मदद करने के भय के बिना विभिन्न दलों के लिये अपना समर्थन व्यक्त करने की अनुमति देती है। यह चुनाव के बाद होने वाले दलबदल और खरीद-फरोख्त (horse-

trading/political vote trading) पर भी रोक लगा सकती है, क्योंकि यह दलों के बीच चुनाव-पूर्व गठबंधन और सीट बँटवारे की आवश्यकता को कम कर देती है।

'फर्स्ट पास्ट द पोस्ट' प्रणाली:

- **परिचय:**
  - यह एक चुनावी प्रणाली है जिसमें मतदाता एक ही उम्मीदवार को मत दे सकते हैं और सबसे अधिक मत पाने वाला उम्मीदवार चुनाव में विजयी घोषित किया जाता है।
    - इसे साधारण बहुमत प्रणाली (simple majority system) या बहुलवादी प्रणाली (plurality system) के रूप में भी जाना जाता है।
  - यह सबसे सरल और सबसे पुरानी चुनावी प्रणालियों में से एक है जो यूके, यूएसए, कनाडा और भारत जैसे देशों में प्रचलित है।
- **फर्स्ट पास्ट द पोस्ट प्रणाली की विशेषताएँ:**
  - मतदाताओं को विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा नामांकित या निर्दलीय रूप में चुनाव लड़ रहे उम्मीदवारों की एक सूची प्रस्तुत की जाती है।
  - मतदाता अपने मतपत्र पर निशान लगाने या इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन पर बटन दबाने के माध्यम से अपनी पसंद के उम्मीदवार को चुनते हैं।
  - किसी निर्वाचन क्षेत्र में सबसे अधिक मत पाने वाले उम्मीदवार को विजेता घोषित किया जाता है।
  - विजेता को मतों का बहुमत (50% से अधिक) प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि केवल मतों की बहुलता (सबसे अधिक मत) प्राप्त करनी होती है।
- **वैकल्पिक चुनावी प्रणालियाँ:**
  - आनुपातिक प्रतिनिधित्व (Proportional Representation- PR) प्रणालियाँ:
    - ये ऐसी प्रणालियाँ हैं जो राजनीतिक दलों या उम्मीदवारों को लोकप्रिय मत की उनकी हिस्सेदारी के अनुसार सीटें आवंटित करती हैं।
  - रैंकिंग वोटिंग प्रणालियाँ (Ranked Voting Systems/ Ranked-choice Voting Systems):
    - ये ऐसी प्रणालियाँ हैं जो मतदाताओं को किसी एक उम्मीदवार को चुनने के बजाय उम्मीदवारों को अपनी पसंद के क्रम में रैंक करने की अनुमति देती हैं।
  - स्कोर वोटिंग प्रणालियाँ (Score Voting Systems):
    - ये ऐसी प्रणालियाँ हैं जो मतदाताओं को किसी एक उम्मीदवार को चुनने या उनकी रैंकिंग करने के बजाय संख्यात्मक पैमाने पर उम्मीदवारों की स्कोरिंग करने की अनुमति देती हैं।

अप्रूवल वोटिंग (Approval Voting):

- अप्रूवल वोटिंग एक मतदान पद्धति है जो मतदाताओं को विकल्पों की सूची से जितने चाहें उतने उम्मीदवारों या दलों को चुनने की अनुमति देती है।
  - इसमें विजेता वह उम्मीदवार या दल होता है जिसे मतदाताओं से सबसे अधिक अनुमोदन (approvals) या टिक मार्क प्राप्त होते हैं।
- अप्रूवल वोटिंग, FPTP पद्धति से भिन्न है, जहाँ मतदाताओं को केवल एक विकल्प चुनने के लिये विवश किया जाता है और सबसे अधिक मत पाने वाले विकल्प को विजयी घोषित किया जाता है, भले ही उसे मतों का बहुमत प्राप्त न हुआ हो।
- अप्रूवल वोटिंग, रैंकिंग वोटिंग से भी भिन्न है, जहाँ मतदाताओं द्वारा अपनी पसंद के अनुसार उम्मीदवारों या दलों की रैंकिंग करने की आवश्यकता होती है और न्यूनतम पसंद किये जाते विकल्पों को तब तक हटाते जाने की प्रक्रिया ज़ारी रहती है जब तक कि एक विकल्प बहुमत न प्राप्त कर ले।
- अप्रूवल वोटिंग एक सुशोधित मतदान पद्धति है जिसका उपयोग विभिन्न विश्वसनीय विकल्पों वाले चुनावों में किया जाता है जैसे कि संयुक्त राष्ट्र में, अमेरिका में इंटरनल पार्टी प्राइमरी में और कभी-कभी पोप के चुनाव में।

'MOTA' अप्रूवल वोटिंग को लागू करने का एक तरीका कैसे प्रदान करता है?

- भारत में अप्रूवल वोटिंग को मतपत्र पर MOTA (Many Of The Above) नामक एक नया विकल्प जोड़कर लागू किया जा सकता है, जो एक प्रकार से NOTA (None Of The Above) जैसा ही होगा, जो हमारे पास पहले से ही प्रत्येक मतपत्र पर मौजूद होता है।
- MOTA मतदाताओं को केवल एक उम्मीदवार या दल को चुनने के लिये विवश करने के बजाय विकल्पों की सूची में से जितने चाहें उतने उम्मीदवारों या दलों को चुनने की अनुमति देगा।
- MOTA के प्रयोग के लिये मौजूदा चुनावी प्रणाली या मशीनरी में किसी बड़े बदलाव की आवश्यकता नहीं होगी,

क्योंकि इसमें केवल मतपत्र पर एक नया विकल्प जोड़ना और प्रत्येक विकल्प के लिये अनुमोदन की संख्या की गणना करना शामिल होगा।

- MOTA किसी भी संवैधानिक या विधिक प्रावधानों का उल्लंघन नहीं करेगा, क्योंकि यह मतदान के अधिकार या संसद में लोगों के प्रतिनिधित्व को किसी प्रकार प्रभावित नहीं करेगा।

भारत के लिये अप्रूवल वोटिंग के लाभ:

- **कुल मतदान में वृद्धि (Increase in Voter Turnout):**
  - इससे कुल मतदान और मतदाता भागीदारी बढ़ सकती है, क्योंकि मतदाताओं के पास अपनी पसंद व्यक्त करने के लिये अधिक विकल्प और स्वतंत्रता होगी।
- **ध्रुवीकरण में कमी (Reduce Polarization):**
  - यह ध्रुवीकरण और अतिवाद (extremism) को कम कर सकता है, क्योंकि मतदाता चरम सीमाओं के बीच चयन करने के बजाय अधिक उदार और समावेशी विकल्पों पर विचार करने के लिये प्रोत्साहित होंगे।
- **व्यापक प्रतिनिधित्व (Wider Representation):**
  - यह प्रतिनिधित्व और जवाबदेही की समृद्धि कर सकता है, क्योंकि उम्मीदवारों और दलों को संकीर्ण हितों या अपने निष्ठावान आधारों को संतुष्ट करने के बजाय व्यापक और अधिक विविध मतदाताओं से अपील करनी होगी।
- **स्थिरता सुनिश्चित करना (Ensure Stability):**
  - यह स्थिरता और शासन को बढ़ावा दे सकता है, क्योंकि यह उन गठबंधनों पर निर्भरता को कम करेगा जो प्राय: अस्थिर होते हैं और भ्रष्टाचार या 'ब्लैकमेलिंग' की संभावना रखते हैं।

भारत के लिये अप्रूवल वोटिंग से संबंधित चुनौतियाँ:

- **जानकारी और समझ का अभाव (Lack of Familiarity and Understanding):**
  - भारतीय राजनीति में अप्रूवल वोटिंग एक अपेक्षाकृत नई अवधारणा है और कई मतदाता इसकी कार्यप्रणाली से अपरिचित हो सकते हैं।
  - अप्रूवल वोटिंग के कार्यकरण के तरीके और इसके लाभों के बारे में जागरूकता पैदा करना तथा मतदाताओं को शिक्षित करना इसकी स्वीकृति और प्रभावी कार्यान्वयन के लिये आवश्यक होगा।
- **स्थापित दलों की ओर से विरोध (Resistance from Established Parties):**
  - अप्रूवल वोटिंग को स्थापित राजनीतिक दलों की ओर से विरोध का सामना करना पड़ सकता है, विशेष रूप से उनकी ओर से जो मौजूदा FPTP प्रणाली से लाभान्वित होते हैं या कुछ क्षेत्रों में अभेद्य प्रभाव रखते हैं।
  - राजनीतिक दल ऐसी प्रणाली को अपनाने के प्रति अनिच्छुक हो सकते हैं जो उनके प्रभुत्व को चुनौती दे या मौजूदा चुनावी गतिशीलता को बाधित करे।
- **खंडित परिणामों की संभावना (Potential for Fragmented Results):**
  - अप्रूवल वोटिंग का उद्देश्य विखंडन को कम करना है लेकिन ऐसी संभावना है कि इसके बाद भी खंडित परिणाम प्राप्त हो सकते हैं, विशेष रूप से यदि उम्मीदवारों की एक बड़ी संख्या को उच्च अप्रूवल रेटिंग प्राप्त हो।
    - इसके परिणामस्वरूप स्पष्ट विजेता का निर्धारण करने के लिये चुनाव के बाद गठबंधन की आवश्यकता पड़ सकती है।
- **संवैधानिक और विधिक विचार (Constitutional and Legal Considerations):**
  - अप्रूवल वोटिंग को लागू करने के लिये मौजूदा निर्वाचन कानूनों में संवैधानिक या विधिक संशोधन की आवश्यकता पड़ सकती है।
  - कानूनी बाधाओं का समाधान करना और संवैधानिक प्रावधानों का अनुपालन सुनिश्चित करना ऐसी चुनौतियाँ उत्पन्न कर सकता है जिन्हें सावधानीपूर्वक हल करने की आवश्यकता होगी।

अप्रूवल वोटिंग को लागू करने और इसके प्रभावी कार्यान्वयन हेतु उपाय:

- **जागरूकता और शिक्षा को बढ़ावा देना:**
  - मतदाताओं को अप्रूवल वोटिंग की अवधारणा और लाभों के बारे में शिक्षित करने के लिये जन जागरूकता अभियान चलाना।
  - मतदाता विखंडन को कम करने में अप्रूवल वोटिंग के लाभों के बारे में सूचना प्रसार हेतु नागरिक समाज संगठनों, शैक्षणिक संस्थानों और मीडिया आउटलेट्स के बीच सहकार्यता का निर्माण।

- **पायलट कार्यक्रम और केस अध्ययन:**
  - भारतीय संदर्भ में अप्रूवल वोटिंग की व्यवहार्यता एवं प्रभावशीलता का परीक्षण करने के लिये चुनिंदा निर्वाचन क्षेत्रों या भूभागों में पायलट कार्यक्रम लागू करना।
  - अप्रूवल वोटिंग के परिणामों पर केस स्टडी करने एवं अनुभवजन्य डेटा का संग्रह करने से मत विभाजन को कम करने एवं मतदाता भागीदारी को प्रोत्साहित करने की इसकी क्षमता का पता लगाना।
- **राजनीतिक दलों को संलग्न करना:**
  - राजनीतिक दलों को वैकल्पिक चुनावी पद्धति के रूप में अप्रूवल वोटिंग को अपनाने पर संवाद और चर्चा करने के लिये प्रोत्साहित करना।
  - वैचारिक राजनीति को बढ़ावा देने और अवसरवादी गठबंधनों पर निर्भरता को कम करने में अप्रूवल वोटिंग के लाभों को उजागर करना।
- **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और विशेषज्ञ परामर्श:**
  - उन अंतर्राष्ट्रीय संगठनों और चुनावी विशेषज्ञों के साथ सहयोग का निर्माण करना जिनके पास अप्रूवल वोटिंग या इसी तरह के अन्य वैकल्पिक मतदान प्रणालियों का अनुभव है।
  - अंतर्दृष्टि प्राप्त करने के लिये विशेषज्ञों के साथ परामर्श एवं कार्यशालाएँ आयोजित करना, वैश्विक सर्वोत्तम प्रथाओं से सीखना और भारतीय चुनावों की अनूठी विशेषताओं के अनुरूप अप्रूवल वोटिंग पद्धतियों को अपनाना।
- **सार्वजनिक विमर्श और चर्चा:**
  - चुनाव सुधारों की आवश्यकता और अप्रूवल वोटिंग के संभावित लाभों पर सार्वजनिक विमर्श एवं चर्चा को प्रोत्साहित करना।
  - विशेषज्ञों, शिक्षाविदों, राजनेताओं और नागरिकों को इस विषय पर अपने विचार एवं राय व्यक्त करने के लिये मंच प्रदान करने के द्वारा अप्रूवल वोटिंग की व्यापक समझ और स्वीकृति को बढ़ावा देना।

PACS-FPO एकीकरण के अवसरों का आकलन

भारत का कृषि क्षेत्र विशाल और विविध है, जिससे 13 करोड़ से अधिक किसान संलग्न हैं, जिनमें से अधिकांश लघु एवं सीमांत किसान हैं। इन किसानों को सशक्त बनाने और वित्त, बाज़ार एवं सेवाओं तक उनकी पहुँच में सुधार करने के लिये सरकार ने विभिन्न पहलें शुरू की हैं, जैसे प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों (Primary Agriculture Cooperative Societies- PACS) का कम्प्यूटरीकरण और किसान उत्पादक संगठनों (Farmer Producer Organizations- FPOs) का गठन।

PACS-FPO एकीकरण निकायों और किसानों दोनों के लिये ही लाभ का सौदा है। यह सहयोग एवं सहकार्यता के ऐसे मॉडल का सृजन कर सकता है जो अन्य क्षेत्रों और भू-भागों को प्रेरित कर सकता है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था को रूपांतरित करने और किसानों की आय एवं आजीविका बढ़ाने में ये दोनों निकाय महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। हालाँकि अपनी पूरी क्षमता हासिल करने के लिये उन्हें सहक्रियात्मक और सहयोगात्मक तरीके से मिलकर कार्य करने की ज़रूरत है।

PACS और FPOs:

- **प्राथमिक कृषि सहकारी समितियाँ (PACS):**
  - PACS सहकारी समितियाँ हैं जो अपने सदस्यों, जिनमें अधिकतर किसान हैं, को अल्पकालिक ऋण और अन्य सेवाएँ प्रदान करती हैं।
  - वे भारत में सहकारी ऋण संरचना के ज़मीनी स्तर के संस्थान हैं।
  - देश में लगभग 90,000 PACS हैं, 13 करोड़ किसान जिनके सदस्य हैं।
  - कम्प्यूटरीकरण द्वारा PACS को रूपांतरित किया जा रहा है; वे बहुसेवा प्रदान कर रहे हैं, जन सेवा केंद्र (CSC) के रूप में बिजली, जल, दवाओं का वितरण और अन्य सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं।
- **किसान उत्पादक संगठन (FPOs):**
  - FPOs किसानों के समूह द्वारा गठित ऐसे विधिक निकाय हैं जो समान हित और लक्ष्य साझा करते हैं।
  - वे विभिन्न विधिक रूपों—जैसे सहकारी समितियों, कंपनियों, ट्रस्ट या समितियों के तहत पंजीकृत होते हैं।
  - FPOs का लक्ष्य छोटे और सीमांत किसानों की उपज और सौदेबाजी शक्ति का समूहन कर वित्त और बाज़ारों तक उनकी पहुँच को बेहतर बनाना है।
  - वे अपने सदस्यों को तकनीकी सहायता, इनपुट आपूर्ति, मूल्यवर्द्धन और गुणवत्ता आश्वासन भी प्रदान करते हैं।
  - देश में लगभग 7,500 FPOs कार्यरत हैं, जो विभिन्न एजेंसियों द्वारा पंजीकृत हैं।

PACS-FPO एकीकरण की महत्ता:

- **किसानों को सशक्त करना:**
  - यह एकीकरण किसानों को एक व्यापक सहायता प्रणाली प्रदान कर सकता है जो क्रेडिट सेवाओं, विपणन अवसरों और तकनीकी सहायता को संयुक्त करता है।
  - यह समग्र दृष्टिकोण किसानों की आय बढ़ाने और उनकी समग्र भलाई में सुधार करने में योगदान कर सकता है।
- **बाज़ार तक पहुँच और मूल्यवर्द्धन:**
  - PACS के स्थापित बाज़ार संपर्कों और नेटवर्क से FPOs लाभ उठा सकते हैं तथा अपनी पहुँच के विस्तार के साथ ही अपनी सौदेबाजी शक्ति को बढ़ा सकते हैं।
  - यह एकीकरण FPOs को बेहतर बाज़ारों तक पहुँच बनाने, अनुकूल मूल्यों के लिये सौदेबाजी कर सकने और अपनी कृषि उपज में मूल्यवर्द्धन कर सकने में सक्षम बना सकता है।
- **ज्ञान साझेदारी और विशेषज्ञता:**
  - PACS ग्रामीण वित्त के मामले में अपने अनुभव और विशेषज्ञता के साथ, FPOs के साथ अपने ज्ञान एवं सर्वोत्तम अभ्यासों की साझेदारी कर सकते हैं।
  - यह सहयोग FPOs को वित्तीय प्रबंधन, जोखिम मूल्यांकन और शासन जैसे क्षेत्रों में उनकी परिचालन दक्षता को सशक्त करने में मदद कर सकता है।
- **'रिसोर्स पूलिंग':**
  - इस एकीकरण से वित्तीय संसाधनों, अवसंरचना और तकनीकी विशेषज्ञता सहित संसाधन जुटाने या रिसोर्स पूलिंग (Resource Pooling) का लाभ प्राप्त हो सकता है।
  - PACS और FPOs के बीच संसाधनों की साझेदारी से लागत को अनुकूलित किया जा सकता है, दक्षता बढ़ाई जा सकती है और तालमेल का निर्माण किया जा सकता है, जिससे दोनों संस्थाओं को लाभ होगा।
- **नीति समर्थन और मान्यता:**
  - PACS और FPOs का एकीकरण सामूहिक कार्रवाई और किसान-केंद्रित पहलों के महत्त्व की ओर ध्यान आकर्षित कर सकता है।
  - इससे ऐसे नीति समर्थन का विकास हो सकता है, जिससे एकीकृत मॉडल को और बढ़ावा देने तथा सशक्त करने के लिये अनुकूल नीतियाँ, प्रोत्साहन और योजनाएँ लाई जा सकती हैं।
  - उदाहरण के लिये वे FPOs जो 'एक ज़िला एक उत्पाद (ODOP) से संबद्ध हैं और विश्व बैंक प्रायोजित 'स्मार्ट' (SMART) तथा केंद्र सरकार की योजनाओं का लाभ उठा रहे हैं, वे तुलनात्मक रूप से अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं; यहाँ तक कि एक करोड़ रुपए से अधिक के टर्नओवर को भी पार कर रहे हैं।
- **नवाचार और प्रौद्योगिकी अपनाना:**
  - PACS और FPOs को एकीकृत करने से नवोन्मेषी अभ्यासों और प्रौद्योगिकियों को अपनाने में सुविधा हो सकती है।
  - इससे कृषि उत्पादकता में सुधार, कुशल आपूर्ति शृंखला और बेहतर बाज़ार पहुँच के परिणाम प्राप्त होंगे, जो कृषि क्षेत्र की समग्र वृद्धि और विकास में योगदान कर सकते हैं।

PACS और FPOs की सामूहिक भूमिका:

- **ऋण में सहयोग:**
  - PACS, FPOs और उनके सदस्यों को रियायती दरों एवं लचीली शर्तों पर ऋण एवं अन्य सेवाएँ प्रदान कर सकते हैं। इससे FPOs को अपनी वित्तीय बाधाओं को दूर करने और अपने परिचालन स्तर को बढ़ाने में मदद मिलेगी।
- **बेहतर नेटवर्किंग:**
  - FPOs अधिक किसानों और बाज़ारों तक पहुँच बनाने के लिये PACS के मौजूदा नेटवर्क और अवसंरचना का लाभ उठा सकते हैं। इससे FPOs को अपनी लेनदेन लागत कम करने और अपनी दक्षता बढ़ाने में मदद मिलेगी।
- **सामूहिक विपणन:**
  - PACS अपनी उपज के लिये बेहतर मूल्य और गुणवत्ता प्राप्त करके FPOs की सामूहिक विपणन और मूल्य संवर्द्धन गतिविधियों से लाभ उठा सकते हैं। इससे PACS को अपनी लाभप्रदता और स्थिरता में सुधार लाने में मदद मिलेगी।
- **सामाजिक पूंजी का लाभ उठाना:**
  - FPOs अपने प्रशासन और निर्णयन में किसानों को शामिल करके PACS के पास मौजूद सामाजिक पूंजी एवं भरोसे से लाभ उठा सकते हैं। इससे FPOs को अपनी वैधता और जवाबदेही बढ़ाने में मदद मिलेगी।

- **अन्य आर्थिक सहयोग:**
  - PACS और FPOs संयुक्त रूप से मधुमक्खी पालन, मशरूम की खेती, गैर-कृषि गतिविधियों (हथकरघा, हस्तशिल्प, यात्रा, मीडिया, शिक्षा एवं स्वास्थ्य) जैसी उच्च आय सृजन करने वाली गतिविधियों पर संयुक्त रूप से कार्य कर सकते हैं।

PACS-FPOs एकीकरण से संबंधित चुनौतियाँ:

- **संगठनात्मक और सांस्कृतिक अंतर:**
  - PACS और FPOs एक-दूसरे से भिन्न संगठनात्मक संरचनाएँ, शासन प्रणाली और परिचालन प्रक्रियाएँ रखते हैं।
  - दोनों निकायों को एकीकृत करने के लिये इन भिन्नताओं को दूर करने और एक ऐसे सामंजस्यपूर्ण ढाँचा स्थापित करने की आवश्यकता होगी जो दोनों को समायोजित करे।
- **विश्वास और सहयोग:**
  - सफल एकीकरण के लिये PACS और FPOs के बीच विश्वास निर्माण और सहयोग को बढ़ावा देना अत्यंत आवश्यक है।
  - PACS के किसानों के साथ प्राय: दीर्घकालिक संबंध होते हैं और FPOs को स्वयं को विश्वसनीय भागीदार के रूप में स्थापित करने की आवश्यकता है। किसी भी शुरुआती संदेह या प्रतिरोध पर काबू पाना इस सहयोग के विकास के लिये महत्त्वपूर्ण होगा।
- **विनियामक और कानूनी ढाँचे में सुधार:**
  - PACS और FPOs को नियंत्रित करने वाले नियामक और कानूनी ढाँचे को संरेखित करना चुनौतीपूर्ण सिद्ध हो सकता है।
  - किसी भी विसंगति को दूर करने, प्रवर्तनीय कानूनों का अनुपालन सुनिश्चित करने और एकीकृत संचालन के लिये एक सहायक नियामक वातावरण का सृजन करने के लिये विधायी संशोधन या नीति परिवर्तन की आवश्यकता हो सकती है।
- **वित्तीय एकीकरण:**
  - वित्तीय सेवाओं को एकीकृत करने और मौजूदा PACS अवसंरचना के तहत FPOs के लिये ऋण, बचत एवं अन्य वित्तीय उत्पादों तक निर्बाध पहुँच सुनिश्चित करने के लिये सावधानीपूर्ण समन्वय एवं योजना निर्माण की आवश्यकता होगी।

PACS-FPOs एकीकरण से उभरने वाले संभावित बिजनेस मॉडल हैं:

- **'प्लेटफॉर्म को-ऑपरेटिव' (Platform Cooperatives):**
  - ये सहकारी समितियाँ उत्पादकों को उपभोक्ताओं से जोड़ने के लिये डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग करती हैं और अपने सदस्यों द्वारा सृजित डेटा का उपयोग करके ई-कॉमर्स, ई-लर्निंग, ई-हेल्थकेयर जैसी सेवाएँ प्रदान कर सकती हैं।
- **सतत सहकारी समितियाँ (Sustainable Cooperatives):**
  - ये ऐसी सहकारी समितियाँ हैं जो अपने पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने और अपने सामाजिक प्रभाव को बढ़ाने के लिये जैविक कृषि, कृषि वानिकी, नवीकरणीय ऊर्जा, अपशिष्ट प्रबंधन जैसे सतत/संवहनीय अभ्यासों को अपनाती हैं।
- **चक्रीय अर्थव्यवस्था (Circular Economy):**
  - PACS और FPOs बायोडिग्रेडेबल पैकेजिंग, जैविक कचरे की कम्पोस्टिंग, पोषक तत्वों की पुनर्प्राप्ति आदि के माध्यम से चक्रीय अर्थव्यवस्था के सिद्धांतों को अपना सकते हैं।
- **पुनर्योजी कृषि (Regenerative Agriculture):**
  - PACS और FPOs नो-टिलिंग (no-till), कवर क्रॉप्स (cover crops), फसल चक्र (crop rotation), मल्चिंग (mulching) आदि तकनीकों का उपयोग कर पुनर्योजी कृषि का अभ्यास कर सकते हैं।
- **'कस्टम हायरिंग सेंटर' (Custom Hiring Centres):**
  - ये उन किसानों को किराये पर कृषि मशीनरी और उपकरण (ड्रोन, सेंसर, सिंचाई उपकरण आदि) प्रदान करते हैं जो उन्हें खरीदने या रखरखाव करने में सक्षम नहीं होते हैं।

PACS और FPOs को एकीकृत करने हेतु उठाए जाने वाले संभावित कदम:

- **सरकार और अन्य एजेंसियों की भूमिका:**
  - नीति परिवेश का निर्माण करना: PACS और FPOs के एकीकरण के समर्थन के लिये अनुकूल नीतियाँ और विनियमन प्रदान किया जाए।
  - क्षमता निर्माण और मार्गदर्शन सहायता: एकीकरण के विभिन्न पहलुओं पर PACS और FPOs को प्रशिक्षण, मार्गदर्शन एवं सहायता प्रदान किया जाए।

- भागीदारीपूर्ण लर्निंग प्लेटफॉर्म और इन्क्यूबेशन सेंटर: ऐसे मंच और केंद्र बनाए जाएँ जहाँ PACS और FPOs एक-दूसरे के अनुभवों से सीख सकें, सर्वोत्तम अभ्यासों की साझेदारी कर सकें और नवाचार समर्थन तक पहुँच बना सकें।

- **PACS और FPOs की भूमिका:**
  - विभिन्न हितधारकों के साथ सहयोग: अपनी क्षमताओं और पहुँच को बढ़ाने के लिये गैर-सरकारी संगठनों, निजी क्षेत्र, अनुसंधान संस्थानों, मीडिया आदि अन्य अभिकर्ताओं के साथ साझेदारी एवं सहयोग को बढ़ावा देना।
  - किसानों के बीच नवाचार और उद्यमिता: किसानों को नए विचारों, उत्पादों, सेवाओं और उद्यमों को विकसित करने के लिये प्रोत्साहन एवं समर्थन दिया जाए जिससे उनकी उपज और आय का मूल्यवर्द्धन हो सके।

बहु-आयामी गरीबी उन्मूलन हेतु रोडमैप

कोविड-19 के नियंत्रण में होने और रूस-यूक्रेन युद्ध के शांतिपूर्ण समाधान की उम्मीद के साथ अब भारत को अपनी भविष्य की विकास रणनीति की योजना तैयार करने में जुट जाना चाहिये। हमारा मुख्य लक्ष्य प्रति व्यक्ति औसत आय को अगले 25 वर्षों में लगभग छह गुना बढ़ाना होना चाहिये, जो वर्ष 2022-23 में लगभग 2,379 अमेरिकी डॉलर थी। इससे लोगों के जीवन स्तर में सुधार होगा और गरीबी कम होगी। इस क्रम में इस उद्देश्य को प्राप्त करने की दिशा में भारत के सामने आने वाली चुनौतियों की पहचान करना और उन्हें दूर करने के लिये आवश्यक कार्रवाई एक महत्त्वपूर्ण कार्य होगा।

भारत में गरीबी की वर्तमान स्थिति:

- नीति आयोग के राष्ट्रीय बहुआयामी गरीबी सूचकांक के अनुसार भारत की 14.96% आबादी बहुआयामी गरीबी में रह रही थी।
  - भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुआयामी गरीबी की स्थिति 19.28% थी।
  - शहरी क्षेत्रों में गरीबी दर 5.27% थी।
- विश्व बैंक के आँकड़ों के अनुसार, लगभग 10% भारतीय आबादी प्रतिदिन 2.15 अमेरिकी डॉलर से कम पर जीवनयापन करती है, जो निम्न-मध्यम आय वाले देशों के लिये अंतर्राष्ट्रीय गरीबी रेखा का निर्माण करती है।

भारत में बहुआयामी गरीबी के पीछे के प्रमुख कारण:

- समावेशी आर्थिक विकास का अभाव: भारत ने हाल के दशकों में प्रभावशाली आर्थिक विकास हासिल किया है, लेकिन समाज के विभिन्न वर्गों के बीच इसका समान रूप से वितरण नहीं हो सका है। गिनी गुणांक—जो आय असमानता की माप करता है, वर्ष 1983 में 0.32 से बढ़कर वर्ष 2019 में 0.36 हो गया है।
  - इसके अलावा, भारत की वृद्धि काफी हद तक सेवा क्षेत्र द्वारा संचालित रही है, जो कार्यबल के केवल एक छोटे से हिस्से को ही रोज़गार प्रदान करती है।
  - बहुसंख्य आबादी अभी भी कृषि क्षेत्र पर निर्भर है, जिसकी उत्पादकता और आय निम्न है।
- कृषि क्षेत्र का कमज़ोर प्रदर्शन और गरीबी: कृषि, भारतीय आबादी के लगभग 50% के लिये आजीविका का मुख्य स्रोत है, लेकिन यह सकल घरेलू उत्पाद में केवल 17% का योगदान देती है। कृषि क्षेत्र कई चुनौतियों का सामना कर रहा है, जैसे खंडित एवं उप-विभाजित भूमि जोत, पूंजी की कमी, नई प्रौद्योगिकियों के बारे में अशिक्षा, खेती के पारंपरिक तरीकों का उपयोग, भंडारण के दौरान बर्बादी, जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक आपदाएँ।
- भूमि सुधारों का कार्यान्वयन न होना: भूमि, ग्रामीण निर्धनों के लिये एक महत्त्वपूर्ण संपत्ति होती है, लेकिन भारत में इसका वितरण अत्यधिक असमान है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार लगभग 5% ग्रामीण परिवारों के पास 32% भूमि थी, जबकि 56% ग्रामीण परिवारों के पास केवल 10% भूमि थी। भूमि सुधार (जैसे अधिशेष भूमि का पुनर्वितरण, पट्टेदारी/किरायेदारी में सुधार, भूमि जोत की सीमा/सीलिंग और महिलाओं एवं हाशिये पर स्थित समूहों के लिये भूमि अधिकार) अधिकांश राज्यों में प्रभावी ढंग से लागू नहीं किये गए हैं।
- तीव्र जनसंख्या वृद्धि: समय के साथ भारत की जनसंख्या में लगातार वृद्धि हुई है। पिछले 45 वर्षों के दौरान इसमें प्रति वर्ष 2.2% की दर से वृद्धि हुई है, जिसका अर्थ है कि हर साल देश की आबादी में औसतन लगभग 17 मिलियन अतिरिक्त लोग जुड़ जाते हैं। इससे उपभोग वस्तुओं की मांग भी काफी बढ़ जाती है।
  - लेकिन इस मांग की पूर्ति कर सकने के लिये अवसरों और संसाधनों का पर्याप्त विस्तार नहीं हुआ है।
  - जनसंख्या वृद्धि पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों पर भी दबाव डालती है, जो पहले से ही कमी और अवनति की स्थिति में हैं।
- बेरोज़गारी और अल्प-रोज़गार: बेरोज़गारी भारत में गरीबी का एक अन्य कारण है। लगातार बढ़ती जनसंख्या के कारण रोज़गार की मांग रखने वाले लोगों की संख्या में वृद्धि हुई है। लेकिन इस मांग के अनुरूप रोज़गार के अवसरों का पर्याप्त विस्तार नहीं हुआ है।

- सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी (CMIE) के अनुसार, अप्रैल 2023 में भारत में बेरोज़गारी दर 8.11% थी। अप्रैल 2020 के बाद से यह भारत में सर्वोच्च बेरोज़गारी दर की स्थिति है।
- इसके अलावा, बहुत से लोग जो नियोजित हैं वे अल्प-रोज़गार की स्थिति रखते हैं या निम्न-गुणवत्ता के ऐसे रोज़गार से संलग्न हैं जो पर्याप्त आय या सामाजिक सुरक्षा प्रदान नहीं करते हैं।

- संगठित क्षेत्र में रोज़गार के अवसरों की धीमी वृद्धि: रोज़गार में भारत के संगठित क्षेत्र की हिस्सेदारी कुल रोजगार का केवल 10% है। अधिकांश कार्यबल असंगठित क्षेत्र में कार्यरत है, जहाँ कम वेतन, खराब कार्य करने की दशा, सामाजिक सुरक्षा का अभाव और आघातों के प्रति उच्च संवेदनशीलता की स्थिति पाई जाती है।
  - कौशल विसंगति, कठोर श्रम कानून, व्यवसाय करने की उच्च लागत और अवसंरचना की कमी जैसे विभिन्न कारणों से संगठित क्षेत्र असंगठित क्षेत्र से पर्याप्त श्रमिकों को शामिल करने में सक्षम नहीं है।
- बुनियादी सेवाओं तक पहुँच का अभाव: गरीबी केवल आय की कमी को इंगित नहीं करती, बल्कि शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, जल, स्वच्छता और बिजली जैसी बुनियादी सेवाओं तक पहुँच की कमी को भी प्रकट करती है। ये सेवाएँ मानव विकास और कल्याण के लिये आवश्यक हैं। लेकिन भारत में सामर्थ्य, उपलब्धता, गुणवत्ता और भेदभाव जैसे विभिन्न कारणों से बड़ी संख्या में लोगों की इन सेवाओं तक पहुँच नहीं है।
  - राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 2019-21 (NFHS-5) के अनुसार भारत में अनुमानित रूप से 6-17 आयु वर्ग के 16.2 मिलियन बच्चे स्कूल नहीं जा रहे थे।
  - राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्रोफ़ाइल (NHP) 2019 के अनुसार 10,926 लोगों पर केवल एक सरकारी चिकित्सक और 1,844 लोगों पर सरकारी अस्पताल में केवल एक बिस्तर ही उपलब्ध है।

आगे की राह:

- निरंतर वृद्धि की तलाश करना: अगले 25 वर्षों के लिये 7% की निरंतर वृद्धि की आवश्यकता है। इसके लिये 4 अनुपात के वृद्धिशील पूंजी-उत्पादन अनुपात (ICOR) को ध्यान में रखते हुए 28% की सकल स्थिर पूंजी निर्माण दर की आवश्यकता है। 4 का अनुमानित अनुपात पूंजी के बेहतर उपयोग पर आधारित है।
  - वृद्धिशील पूंजी उत्पादन अनुपात (ICOR) वस्तुत: अतिरिक्त उत्पादन के सृजन के लिये अतिरिक्त पूंजी की आवश्यकता को संदर्भित करता है।
- निवेश बढ़ाना: भारत को अगले 25 वर्षों में आवश्यक निवेश दर हासिल करने की दिशा में कार्य करने की ज़रूरत है जो सकल घरेलू उत्पाद के 30-32% की सीमा में हो सकती है। यह स्वीकार करते हुए भी कि सार्वजनिक निवेश में वृद्धि हुई है, इस बात पर बल देना आवश्यक है कि व्यापार क्षेत्र (कॉर्पोरेट और गैर-कॉर्पोरेट दोनों) द्वारा निवेश में वृद्धि होनी चाहिये।
  - निवेश उन क्षेत्रों की ओर प्रवाहित होना चाहिये जो विकास और रोज़गार सृजन को बढ़ावा देने के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं।
  - जबकि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का स्वागत किया जाना चाहिये, विशेषकर नए उभरते तकनीकी क्षेत्रों में, निवेश का बड़ा हिस्सा देश के अंदर से ही प्राप्त होना चाहिये।
- बहुआयामी रणनीति अपनाना: चीन और दक्षिण कोरिया जैसी निर्यात-आधारित विकास रणनीति भारत के लिये अनुकूल सिद्ध नहीं भी हो सकती है, विशेष रूप से बदली हुई वैश्विक व्यापार स्थिति के संदर्भ में। इसलिये कृषि एवं संबंधित गतिविधियों, विनिर्माण और निर्यात पर बल दिया जाना चाहिये। सेवा क्षेत्र में भारत पहले से ही मज़बूती से उभर रहा है।
- भारत में AI को अपनाने और रोज़गार प्रभाव से संबंधित चुनौती को हल करना: भारत नई प्रौद्योगिकियों, विशेष रूप से आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) और इसके व्यापक निहितार्थों को आत्मसात करने से संबंधित एक महत्त्वपूर्ण समस्या का सामना कर रहा है। AI से उत्पादकता और उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि की उम्मीद है, लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि यह नए रोज़गार अवसर भी सृजित करे। यह भारत जैसे अत्यधिक आबादी वाले देशों के लिये विशेष चिंता का विषय है। इस चुनौती से सफलतापूर्वक निपटने के लिये एक सक्रिय दृष्टिकोण अपनाना होगा।
  - AI-संचालित भविष्य के रोज़गार बाज़ार में आगे बढ़ने के लिये छात्रों को आवश्यक कौशल से लैस करने के लिये शैक्षिक प्रणाली को नया रूप देना आवश्यक है। AI-संबंधित क्षेत्रों पर बल देना और निरंतर सीखने की संस्कृति को बढ़ावा देना अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा।
  - श्रम-केंद्रित आर्थिक गतिविधियों की पहचान करना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जो रोज़गार के संभावित अवसरों के रूप में

नोट :

कार्य कर सकते हैं। उन क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करके जो AI-संचालित ऑटोमेशन के प्रति कम संवेदनशील हैं, हम रोज़गार पर इसके प्रभाव को कुछ हद तक कम कर सकते हैं।

- बुनियादी आय के लिये प्रावधान: बुनियादी आय से संबद्ध कई मुद्दे हैं जिन्हें हल करने की आवश्यकता है। बुनियादी आय का स्तर और लाभार्थियों का कवरेज कुछ मानक विचारों तथा वित्तीय क्षमता को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किया जाना चाहिये।
  - बुनियादी आय के साथ हमें खाद्य सब्सिडी के अलावा अधिकांश अन्य सब्सिडी में कटौती करने के लिये तैयार रहना चाहिये।
  - एक अनिश्चित विश्व में बुनियादी आय के प्रावधान की आवश्यकता और भी तात्कालिक हो गई है।
- शांतिपूर्ण माहौल पर ध्यान केंद्रित करना: यह सतत विकास के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हाल के यूक्रेन-रूस संघर्ष ने इस माहौल पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। यदि तनाव जारी रहता है तो यह भविष्य के विकास के लिये एक उल्लेखनीय खतरा रखता है। इसके अलावा, हमें तेल जैसे आवश्यक आयात की आपूर्ति में व्यवधान पर भी सूक्ष्मता से नज़र बनाए रखना होगा, क्योंकि इन व्यवधानों का न केवल विकासशील देशों पर बल्कि विकसित देशों पर भी गंभीर प्रभाव पड़ सकता है।

निष्कर्ष:

- पिछले 75 वर्षों में भारत ने एक पर्याप्त सुदृढ़ और विविधिकृत अर्थव्यवस्था का निर्माण किया है। भारत आज विश्व की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है, जो निश्चय ही एक उपलब्धि है, लेकिन प्रति व्यक्ति आय के मामले में यह 194 देशों की सूची में 149वें स्थान पर है (वर्ष 2022)। इस प्रकार, हमें अभी एक लंबा रास्ता तय करना है। अर्थव्यवस्था को ऊपर ले जाने के लिये विकास महत्त्वपूर्ण है। हमारे पास इसकी क्षमता भी है। वर्तमान में बाह्य स्थितियाँ उत्साहवर्द्धक नहीं हैं। हमें इसके साथ ही आगे बढ़ना होगा। यदि हमारी रणनीति सही हो और हम उचित निवेश माहौल का निर्माण कर सकें तो लगातार 6 से 7% की विकास दर बनाए रखना संभव है।

फ्राँस : भारत का वास्तविक सहयोगी

भारत-फ्राँस रणनीतिक साझेदारी के 25 वर्ष पूरे होने का उत्सव मनाना प्रधानमंत्री की दो दिवसीय फ्राँस यात्रा के शीर्ष एजेंडे में शामिल था और यात्रा का अंत विभिन्न समझौतों और रक्षा सौदों के संपन्न होने के साथ हुआ।

इस अवसर पर दोनों देशों ने सुरक्षा, पर्यावरण, नवीकरणीय ऊर्जा आदि विषयों को कवर करने वाला 'इंडो-पैसिफिक रोडमैप' जारी किया और इसके साथ ही व्यापक संबंध के लिये 'होराइज़न 2047' एजेंडे की घोषणा की गई जो गहन सैन्य-औद्योगिक संबंध, डिजिटल प्रौद्योगिकियों में सहयोग, निम्न कार्बन अर्थव्यवस्था की ओर संक्रमण, शहरी संक्रमण, व्यापार एवं निवेश और लोगों के परस्पर संपर्क जैसे विषयों को अपने दायरे में लेता है।

जबकि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (UNSC) के P5 देशों में से प्रत्येक के साथ ही भारत एक अद्वितीय संबंध रखता है, जो बात भारत-फ्राँस संबंधों को विशिष्ट बनाती है, वह है सही-गलत के निर्णय के बिना भू-राजनीति (geopolitics sans value judgements)। यह कहना गलत नहीं होगा कि प्रधानमंत्री ने जितने भी देशों का दौरा किया है, विशेष रूप से पश्चिमी विश्व में, उनमें फ्राँस ही संभवतः वह देश है जिसके साथ भारत सबसे अधिक आपसी हित या समझौते का आधार रखता है।

फ्राँस के साथ भारत के राजनयिक संबंध

- **संबंध के स्तंभ:**
  - भारत और फ्राँस लंबे समय से सांस्कृतिक, व्यापारिक और आर्थिक संबंध साझा करते रहे हैं। वर्ष 1998 में हस्ताक्षरित 'भारत-फ्राँस रणनीतिक साझेदारी' (India-France strategic partnership) ने समय के साथ महत्त्वपूर्ण प्रगति हासिल की है और वर्तमान में गहन निकट बहुआयामी संबंध में विकसित हो गया है जो सहयोग के विभिन्न क्षेत्रों तक विस्तृत है।
  - दोनों देशों ने अपने संबंध में तीन स्तंभों पर सुदृढ़ता बनाए रखी है:
    - एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना
    - रणनीतिक स्वायत्तता और गुटनिरपेक्षता में दृढ़ विश्वास
    - स्वयं की संधि और गठबंधन के दायरे में दूसरे को शामिल करने के मामले में संयम
  - इस तरह और कई अन्य तरीकों से दोनों देशों का संबंध भारत का दुनिया भर में बनाई गई अन्य प्रमुख साझेदारियों से अलग स्वरूप रखता है।
- **भारत के मामलों पर फ्राँस की प्रतिक्रिया:**
  - भारत-फ्राँस संबंध एक-दूसरे की रणनीतिक स्वायत्तता के सम्मान पर निर्मित हैं। फ्राँस भारत के आंतरिक मामलों या उसकी विदेश नीति विकल्पों पर टिप्पणी करने से इनकार करने में तटस्थ बना रहा है।
  - जबकि फ्राँस ने यूक्रेन में रूस के युद्ध पर पश्चिमी देशों की प्रतिक्रिया में अग्रणी भूमिका निभाई है, उसने अन्य पश्चिमी

देशों की तरह भारत पर अपना रुख बदलने के लिये कोई सार्वजनिक दबाव नहीं बनाया।

- यहाँ तक कि जब भारत ने UNSC और UNGA में इस संबंध में लाए गए संकल्प पर मतदान में भागीदारी नहीं की, तब भी फ्राँस ने निराशा का एक शब्द भी व्यक्त नहीं किया, जबकि UNSC में लाया गया एक संकल्प (संघर्ष क्षेत्र के अंदर निर्बाध मानवीय सहायता सुनिश्चित करने के संबंध में) फ्राँस द्वारा ही मैक्सिको के साथ प्रस्तुत किया गया था।

- उल्लेखनीय है कि जब भारत ने पोखरण-II परमाणु परीक्षण किया था तब भी UNSC में फ्राँसीसी राजनयिक भारत पर प्रतिबंध लगाने के अमेरिकी नेतृत्व वाले पहल में शामिल नहीं हुए थे।
  - यहाँ तक कि फ्राँस तारापुर रिएक्टरों को यूरेनियम की आपूर्ति से भी पीछे नहीं हटा।

- **मूल में रक्षा साझेदारी:**
  - भारत-फ्राँस संबंधों के मूल में रक्षा साझेदारी है; अन्य पश्चिमी देशों की तुलना में फ्राँस कहीं अधिक इच्छुक और उदार भागीदार के रूप में सामने आया है।
  - राफेल सौदे से लेकर इस विमान के समुद्री संस्करण के 26 विमानों के नवीनतम अधिग्रहण तक, फ्राँस भारत को अपनी कुछ बेहतरीन रक्षा प्रणालियाँ सौंपने का इच्छुक बना रहा है।
  - इस बीच, फ्राँस द्वारा प्रौद्योगिकी हस्तांतरण से पहले ही भारत को छह स्कॉर्पीन श्रेणी की पनडुब्बियों के निर्माण में मदद मिल चुकी है, जबकि नौसेना के लिये पनडुब्बियों की घटती संख्या को बढ़ाने के लिये तीन और पनडुब्बियाँ खरीदी जा रही हैं।
- **नाटो प्लस पर रुख में समानता:**
  - फ्राँस ने सार्वजनिक रूप से घोषणा कर रखी है कि वह नाटो प्लस (NATO+) भागीदारी योजनाओं को अस्वीकार करता है, जिसके तहत ट्रांस-अटलांटिक एलायंस का जापान, ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, दक्षिण कोरिया और यहाँ तक कि भारत के साथ प्रत्यक्ष संबंध बन जाएगा।
  - भारत ने भी इस योजना को यह कहते हुए खारिज कर दिया है कि नाटो "ऐसा टेम्पलेट या खाका नहीं है जो भारत पर लागू होता है"।
- **रणनीतिक साझेदारी:**
  - फ्राँस 'क्वाड-प्लस' गठबंधन के प्रति भी गैर-आशंकित बना रहा है, जिसका विचार सर्वप्रथम 2020 में प्रकट किया गया था (लेकिन AUKUS समझौते पर अमेरिका-फ्राँस के बीच मतभेद की स्थिति में जिसे टाल दिया गया था)।
  - फ्राँस ही एकमात्र देश है जिसके साथ भारतीय नौसेना ने अब तक कोई संयुक्त गश्त की है और भविष्य की योजनाओं के तहत द्विपक्षीय आधार पर दोनों नौसेनाओं द्वारा पोर्ट कॉल एवं सैन्य-सर्वेक्षण के लिये रीयूनियन, न्यू कैलेडोनिया एवं फ्रेंच पोलिनेशिया जैसे फ्राँसीसी क्षेत्र और यहाँ तक कि भारत के अंडमान द्वीप समूह में संयुक्त अभ्यास किये जा सकते हैं।
  - हिंद-प्रशांत पर हाल ही में जारी 'इंडिया-फ्राँस इंडो-पैसिफिक रोडमैप' भी स्पष्ट करता है कि कोई भी पक्ष दूसरे को अपने अन्य किसी क्षेत्रीय सैन्य गठबंधन में खींचने का प्रयास नहीं कर रहा है।

चुनौतियाँ

- फ्राँस और भारत के बीच राजनयिक संबंध सकारात्मक होने के बावजूद दोनों देश एक मुक्त व्यापार समझौते (FTA) का अभाव रखते हैं, जो व्यापार क्षमता के पूर्णरूपेण साकार हो सकने को सीमित करता है। भारत-EU ब्रॉड-बेस्ड ट्रेड एंड इंवेस्टमेंट एग्रीमेंट (BITA) पर सुस्त प्रति इस समस्या को और बढ़ाती है।
- हालाँकि दोनों देश एक मज़बूत रक्षा साझेदारी रखते हैं, लेकिन उनका रक्षा एवं सुरक्षा सहयोग अलग-अलग प्राथमिकताओं एवं दृष्टिकोणों से प्रभावित हो सकता है। भारत का क्षेत्रीय फोकस और इसकी 'गुटनिरपेक्ष' नीति कभी-कभी फ्राँस के वैश्विक हितों से टकराहट भी उत्पन्न कर सकती है।
- फ्राँस ने भारत द्वारा बौद्धिक संपदा अधिकारों की अपर्याप्त सुरक्षा पर भी चिंता जताई है, जिससे भारत के भीतर कार्य करने वाले फ्राँसीसी व्यवसायों पर असर पड़ रहा है।

आगे की राह

- **एक-दूसरे को सशक्त बनाने के लिये सदृश महत्त्वाकांक्षाओं का लाभ उठाना:**
  - एक जटिल भू-राजनीतिक परिदृश्य में रणनीतिक स्वायत्तता बनाए रखने के साझा दृढ़ संकल्प ने दोनों शक्तियों को कुछ हद तक विश्वास और व्यावहारिक साझेदारी विकसित करने में मदद की है।
  - फ्राँस इतनी शक्ति रखता है कि वह भारत को राजनयिक, सैन्य, अंतरिक्ष और परमाणु क्षेत्रों में कुछ न कुछ प्रदान कर सकता है।

- रूसी आक्रामकता या अफ्रीका में आतंकवाद जैसे खतरों के संदर्भ में जब व्यापार और रक्षा सहयोग की बात आती है तो भारत फ्राँस के लिये पर्याप्त महत्त्वपूर्ण हो जाता है।
- दोनों देश अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था को आकार देने या यहाँ तक कि ऐसे अन्य देशों को संतुलित करने में एक-दूसरे का समर्थन कर सकते हैं, जिन पर उनमें से एक अत्यधिक निर्भर हो।

- **हिंद-प्रशांत में बेहतर सहयोग:**
  - 'इंडो-पैसिफिक' की अवधारणा ने पहले से फल-फूल रहे फ्राँस-भारत संबंधों के लिये एक उपयोगी ढाँचा प्रदान किया है। हिंद महासागर में अपने विदेशी क्षेत्रों और सैन्य ठिकानों के कारण फ्राँस हिंद महासागर की स्थिरता में क्वाड भागीदारों से कहीं अधिक प्रत्यक्ष रुचि रखता है।
  - दोनों देशों के बीच इंडो-पैसिफिक फोरम रणनीतिक हितों और द्विपक्षीय सहयोग को सुनिश्चित करने में बेहतर सहायता प्रदान करने में सक्षम सिद्ध हो सकता है।
- **फ्राँस के साथ सहयोग के संभावित क्षेत्र:**
  - निजी और विदेशी निवेश में वृद्धि के साथ घरेलू हथियार उत्पादन का विस्तार करने की भारत की महत्त्वाकांक्षी योजनाओं में फ्राँस एक महत्त्वपूर्ण भूमिका रखता है।
  - दोनों देशों के बीच चर्चा में कनेक्टिविटी, जलवायु परिवर्तन, साइबर-सुरक्षा और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सहित सहयोग के विभिन्न उभरते क्षेत्रों को शामिल किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष

फ्राँस और भारत विश्व की दो प्रमुख शक्तियाँ हैं (एक यूरोप में, दूसरा एशिया में) जो विश्व के बारे में एक जैसी अवधारणा रखते हैं। वस्तुतः दोनों देश एक स्वतंत्र विदेश नीति का पालन करते हैं और रणनीतिक स्वायत्तता का पालन करते हैं, जिससे उन्हें उम्मीद है कि वे एक बहुध्रुवीय विश्व को आकार देने में सक्षम होंगे। इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इन दोनों शक्तियों को एहसास है कि यदि वे मिलकर कार्य करेंगे तो ऐसा होने की अधिक बेहतर संभावना है।

भारत की खनन क्षमता

खनिज (Minerals) बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन हैं जो मूलभूत उद्योगों के लिये आवश्यक कच्चे माल के रूप में कार्य करते हैं। किसी राष्ट्र के समग्र औद्योगिक विकास के लिये खनन उद्योग का विकास आवश्यक है।

भारत के खनन उद्योग (mining industry) में सकल घरेलू उत्पाद (GDP) की वृद्धि और विदेशी मुद्रा आय अर्जन को उल्लेखनीय रूप से प्रभावित करने तथा भवन, अवसंरचना, मोटर वाहन एवं बिजली जैसे उद्योगों को उचित दरों पर आवश्यक कच्चे माल उपलब्ध कराने के माध्यम से प्रतिस्पर्द्धात्मक बढ़त देने की क्षमता है।

मज़बूत घरेलू मांग और वैश्विक विनिर्माताओं के बीच अपने संयंत्रों को भारत में स्थानांतरित करने की बढ़ती रुचि के साथ, भारत के पास विनिर्माण के लिये एक वैश्विक केंद्र के रूप में उभरने का एक व्यापक अवसर मौजूद है। खनिजों और धातुओं के मामले में भारत की विशाल क्षमता देश के आकर्षण को बढ़ाती है। हालाँकि भारत के विशाल खनिज भंडार के बावजूद इसका खनन क्षेत्र अभी भी लीगेसी संबंधी मुद्दों (legacy issues : पूर्व के निर्णय, कृत्यों आदि के परिणामस्वरूप वर्तमान परिदृश्य) से प्रभावित है।

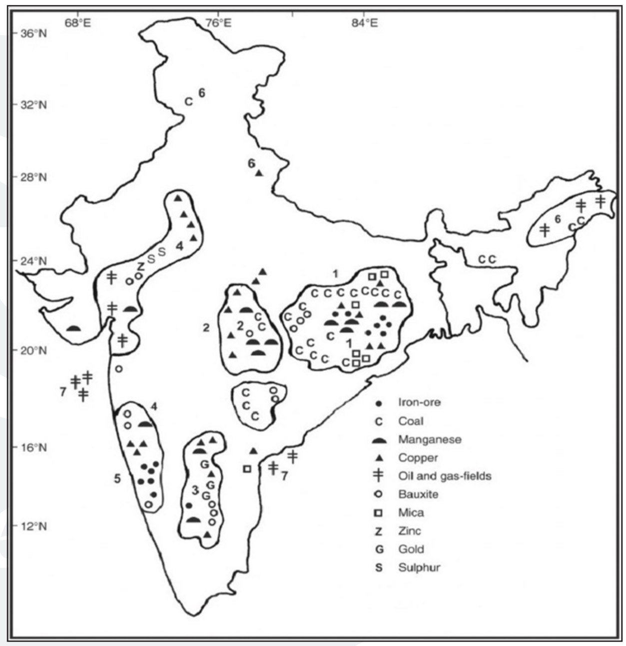

भारत के खनन क्षेत्र का वर्तमान परिदृश्य:

- **निजीकरण का संक्षिप्त इतिहास:**
  - नब्बे के दशक की शुरुआत के भारत के आर्थिक उदारीकरण (economic liberalisation) और राष्ट्रीय खनिज नीति (National Mineral Policy), 1993 ने भारत में खनिज अन्वेषण के लिये निजी निवेश का मार्ग प्रशस्त किया है।
    - नए मानदंडों के अनुसार, निजी कंपनियाँ 'पहले आओ पहले पाओ' (FCFS) प्रणाली के तहत भारत में अन्वेषण परमिट के लिये आवेदन कर सकती हैं, जिससे उन्हें किसी भी खोजे गए खनिज का पता लगाने और फिर उसका खनन करने या बिक्री करने का अधिकार प्राप्त होता है।

- 12वीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत कार्यसमूह की वर्ष 2011 की एक रिपोर्ट में खनिज अन्वेषण के क्षेत्र में निजी निवेश को प्रोत्साहित करने में FCFS प्रणाली के महत्त्व को रेखांकित किया गया।
  - हालाँकि, सर्वोच्च न्यायालय ने वर्ष 2012 के अपने निर्णय में कहा कि प्राकृतिक संसाधन आवंटन की FCFS पद्धति हेरफेर, पक्षपात एवं दुरुपयोग के लिये अतिसंवेदनशील है। इसमें आगे कहा गया कि उच्च जोखिम और उच्च निवेश के साथ, नीलामी निजी निवेश को बाधित करेगी।
- खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1957 (MMDR Act) में वर्ष 2015 के संशोधन ने खनिज आवंटन के लिये FCFS के आधार को नीलामी से प्रतिस्थापित कर दिया।

- **भारतीय अर्थव्यवस्था में योगदान:**
  - खनिज खनन (Mineral mining) आर्थिक विकास पर प्रभाव डालने वाले सबसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में से एक है।
  - रोज़गार सृजन के मामले में यह कृषि के बाद दूसरा सबसे बड़ा क्षेत्र है जो प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से लगभग 11 मिलियन लोगों को रोज़गार प्रदान करता है और लगभग 55 मिलियन लोगों की आजीविका बनाए रखता है।
- **खनन क्षेत्र में भारत के लिये अवसर:**
  - भारत लौह अयस्क उत्पादन के मामले में विश्व स्तर पर चौथे स्थान पर है और विश्व का दूसरा सबसे बड़ा कोयला उत्पादक है (वर्ष 2021)।
    - भारत में संयुक्त एल्युमीनियम उत्पादन (प्राथमिक एवं द्वितीयक) वित्त वर्ष 2021 में 4.1 मीट्रिक टन प्रति वर्ष के स्तर पर था; इस प्रकार भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक बन गया।
  - वर्ष 2023 में भारत में विस्तारित विद्युतीकरण और समग्र आर्थिक विकास के कारण खनिज की मांग 3% तक बढ़ने की संभावना है।
    - भारत इस्पात एवं एल्युमिना के मामले में उत्पादन एवं रूपांतरण लागत (production and conversion costs) में उचित लाभ की स्थिति रखता है। इसकी रणनीतिक अवस्थिति विकसित देशों के साथ-साथ तेज़ी से विकास कर रहे एशियाई बाज़ारों में निर्यात संभावनाओं को सक्षम बनाती है।

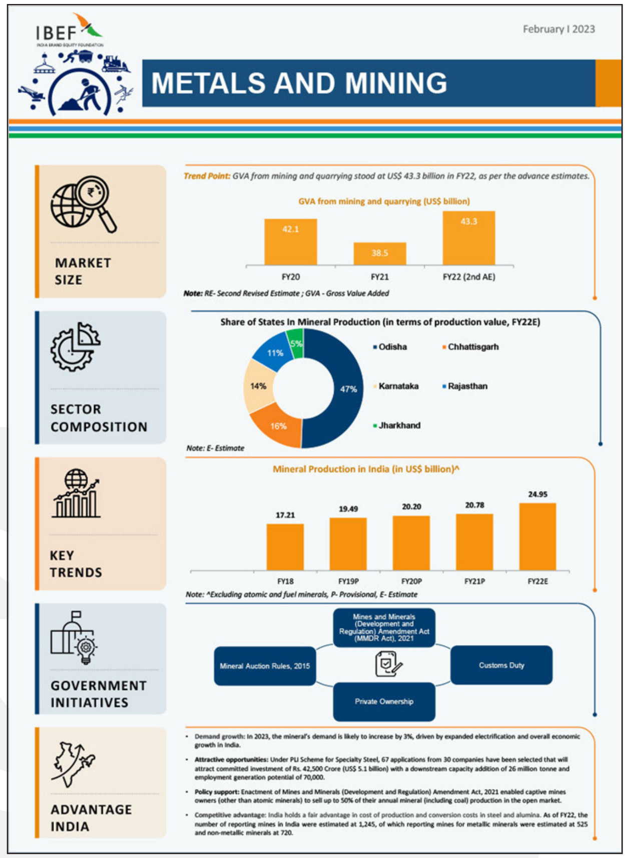

भारत की खनन क्षमता का अन्वेषण क्यों महत्त्वपूर्ण है?

- **सतत् परिवहन के लिये:**
  - भारत की नवयुगीन अर्थव्यवस्था के अत्यधिक खनिज गहन (mineral intensive) होने की संभावना है। चूँकि इस दशक के शेष वर्षों में भारत की EV बिक्री तेज़ी से बढ़ने वाली है इसलिये लिथियम, कोबाल्ट, निकेल और ग्रेफाइट की मांग उच्च होगी।
  - इसके साथ ही इस्पात के रूप में लौह अयस्क, एल्युमीनियम के स्रोत के रूप में बॉक्साइट और कॉपर की मांग अधिक होगी, क्योंकि इनका उपयोग सभी प्रकार के वाहनों में किया जाता है।
- **सहज ऊर्जा संक्रमण के लिये:**
  - विशेष रूप से ऊर्जा-संक्रमण खनिजों की मांग में भारी वृद्धि होने का अनुमान है, जो आंशिक रूप से उन्नत रसायन सेल (ACC) बैटरी, सोलर पीवी मॉड्यूल, बड़े घरेलू उपकरण (white goods) और इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण के लिये प्रोडक्शन-लिंक्ड प्रोत्साहन (PLI) योजनाओं में भागीदारी से प्रेरित होंगे।

- **नवीकरणीय ऊर्जा के लिये:**
  - भारत का वर्ष 2030 तक 500GW गैर-जीवाश्म ऊर्जा क्षमता प्राप्ति का लक्ष्य काफी हद तक सौर एवं पवन क्षमता से पूरा किया जाएगा।
  - हालाँकि, अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (International Energy Agency- IEA) का अध्ययन है कि तटवर्ती पवन संयंत्र को गैस-संचालित बिजली संयंत्र की तुलना में 9 गुना अधिक खनिजों की आवश्यकता होती है।
  - एल्युमीनियम और कॉपर सौर ऊर्जा के लिये महत्त्वपूर्ण हैं लेकिन पवन ऊर्जा को दुर्लभ मृदा तत्वों (Rare Earth Elements- REE), ज़िंक, कॉपर एवं एल्युमीनियम की आवश्यकता होती है।
- **पारंपरिक क्षेत्रों के लिये:**
  - आवास, अवसंरचना और परिवहन क्षेत्र लौह अयस्क, बॉक्साइट, कॉपर, लाइमस्टोन, क्रोमियम, ज़िंक आदि की मांग को बढ़ावा देंगे।
  - तीव्र औद्योगिक विकास से वर्ष 2030 तक लौह अयस्क, बॉक्साइट, ज़िंक, कॉपर, निकेल आदि की घरेलू मांग दोगुनी हो जाने का अनुमान है।
  - प्राथमिक क्षेत्र में, खाद्य सुरक्षा और कृषि इनपुट के रूप में रॉक फॉस्फेट और ज़िंक पर काफी निर्भरता है।

भारत की खनन क्षमता से संबंधित प्रमुख चुनौतियाँ:

- **विनियामक बाधाएँ:**
  - भारतीय कानून किसी खननकर्ता को किसी राज्य में खनिज के लिये 10 वर्ग किमी से अधिक क्षेत्र में खनन पट्टा रखने की अनुमति नहीं देता है।
  - हालाँकि इस सीमा को कुछ राज्यों द्वारा विस्तारित किया गया है, केंद्रीय स्तर पर यह सीमा प्रमुख कंपनियों को नीलामी में भाग लेने से बाधित करती है।
- **अपर्याप्त खनिज अन्वेषण:**
  - पर्याप्त खनिज अन्वेषण की कमी,एक अन्य महत्त्वपूर्ण बाधा है । विशेषकर तांबा, जस्ता, सीसा, सोना, चाँदी जैसे गहराई में स्थित खनिजों (deep-seated minerals) के अन्वेषण पर भारत का व्यय काफी कम रहा है।
- **आयात पर उच्च निर्भरता:**
  - अन्वेषण के अभाव और खनन पर फोकस की कमी के कारण वर्ष 2021-22 में खनिजों एवं धातुओं के आयात पर भारत का खर्च 157 बिलियन डॉलर तक पहुँच गया (जो कुल आयात का लगभग 1/4 हिस्सा है)।
- **दोहरा कराधान:**
  - लौह अयस्क और बॉक्साइट जैसे खनिजों को 'रॉयल्टी ऑन रॉयल्टी' के रूप में दोहरे कराधान की समस्या का सामना करना पड़ता है।
  - चूँकि रॉयल्टी औसत बिक्री मूल्य (ASP) पर देय है और कानून द्वारा इसमें रॉयल्टी की कटौती की अनुमति नहीं दी गई है जिससे खनिज उपयोगकर्ता 'रॉयल्टी ऑन रॉयल्टी' का भुगतान करते हैं, जो उनकी लागत प्रतिस्पर्द्धात्मकता को प्रभावित करता है।

भारत में खनन को और अधिक अनुकूल बनाने के लिये उठाए जाने वाले संभावित कदम:

- **घरेलू अन्वेषण को प्रोत्साहन देना:**
  - हाल ही में, खान मंत्रालय ने भारत में विभिन्न क्षेत्रों के विकास के लिये आवश्यक 30 अत्यंत आवश्यक खनिजों (critical minerals) की एक सूची जारी की है।
    - विंड टरबाइन, सोलर पैनल, बैटरी और इलेक्ट्रिक वाहन जैसी हरित प्रौद्योगिकियों के विनिर्माण के लिये ये आवश्यक हैं।
  - इन अत्यंत आवश्यक खनिजों के घरेलू अन्वेषण को प्रोत्साहित करना (Incentivising) वर्ष 2070 तक शुद्ध-शून्य उत्सर्जन तक पहुँचने के भारत के दीर्घकालिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिये महत्त्वपूर्ण है।
- **अन्वेषण मॉडल में बदलाव लाना:**
  - अन्वेषण को प्रोत्साहित करने के लिये, वर्तमान के 'राजस्व को अधिकतम करने' (revenue maximizing) मॉडल से 'अन्वेषण निवेश प्रोत्साहन' (exploration investment incentivizing) मॉडल की ओर आगे बढ़ना आवश्यक है।
  - यह भारत में छोटे अन्वेषणकर्ताओं को भी आकर्षित कर सकता है जिन्होंने कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका और अमेरिका में खनिज क्षेत्र के विकास में अच्छा योगदान दिया है।
- **निजी कंपनियों को प्रोत्साहित करना:**
  - महत्त्वपूर्ण गैर-परमाणु उपयोग रखने वाले अत्यंत आवश्यक खनिजों (जैसे दुर्लभ मृदा तत्त्व, लिथियम, टाइटेनियम,

नाइओबियम आदि) के खनन में निजी भागीदारी की अनुमति दी जानी चाहिये ।

- ऐसे गैर-विखंडनीय खनिजों को खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1957 की पहली अनुसूची के भाग B से हटा दिया जाना चाहिये, जो परमाणु खनिजों को सूचीबद्ध करता है।

- अत्यंत आवश्यक खनिजों के अन्वेषण में निजी क्षेत्र के लिये अधिक अवसर का अर्थ होगा अधिक खनन दक्षता और भारत के लिये अधिक आत्मनिर्भरता, जिससे भारत के खनिज आयात बिल में कमी आएगी।

- **एक स्वतंत्र नियामक संस्था का गठन करना:**
  - राज्य और केंद्र स्तर पर विभिन्न सत्तारूढ़ दलों के बीच स्पष्टता के अभाव की स्थिति को खनन क्षेत्र के विकास हेतु बाधक नहीं बनने दिया जाना चाहिये।
    - इसलिये एक स्वतंत्र नियामक प्राधिकरण की आवश्यकता है जिसे सार्वजनिक और आर्थिक विकास के व्यापक हित में कार्य करने की शक्ति सौंपी जानी चाहिये।
  - इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना होगा कि किसी पक्ष विशेष को अधिक लाभ नहीं दिया जाए और देश के समग्र लाभ के लिये संसाधनों के उपयोग को अधिकतम किया जाए।

भारतीय रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण

वैश्विक व्यापार में अमेरिकी डॉलर ने लंबे समय से प्रभुत्व बना रखा है और विदेशी मुद्रा लेनदेन, व्यापार एवं आरक्षित होल्डिंग्स के लिये प्रमुख मुद्रा के रूप में कार्य करता रहा है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में रुपए के उपयोग को बढ़ावा देने के भारत के जारी रहे प्रयास डी-डॉलराइज़ेशन (de-dollarisation) और मुद्रा विविधीकरण (currency diversification) की दिशा में कदम का प्रतिनिधित्व करते हैं। हालाँकि इसमें चुनौतियाँ बनी हुई हैं लेकिन निर्यात वृद्धि, पूंजी खाता परिवर्तनीयता (capital account convertibility) और निरंतर आर्थिक विकास का संयोजन रुपए के लिये वैश्विक स्तर पर अपनी स्थिति हासिल करने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

डॉलर के प्रभुत्व को कम करने की यात्रा में कुछ ठोस प्रयासों की आवश्यकता होगी और इसकी सफलता तेज़ी से उभरते वैश्विक आर्थिक परिदृश्य में भारत के लचीलेपन और अनुकूलन क्षमता पर निर्भर करेगी।

उन देशों की संख्या बढ़ती जा रही है जो डॉलर पर अत्यधिक निर्भरता से संबद्ध अंतर्निहित जोखिमों की पहचान कर रहे रहे हैं। इन जोखिमों में अमेरिकी राजनीति के प्रभाव में आना, प्रतिबंध और विनिमय दर अस्थिरता जैसे जोखिम शामिल हैं। इन चिंताओं पर एक प्रतिक्रिया के रूप में कई उभरती हुई अर्थव्यवस्थाएँ सक्रिय रूप से अपने व्यापार के डी-डॉलराइज़ेशन और अपनी मुद्रा के उपयोग में विविधता लाने के प्रयास कर रही हैं।

मुद्रा के उपयोग के वर्तमान रुझान:

- **अंतर्राष्ट्रीय भुगतान में स्थानीय मुद्राओं का उपयोग:**
  - SWIFT डेटा संकेत देता है कि वर्ष 2013 से 2019 के बीच अंतर्राष्ट्रीय लेनदेन में स्थानीय मुद्राओं के उपयोग में वृद्धि हुई।
- **नॉन-डॉलर-डीनॉमिनेटेड व्यापार में वृद्धि:**
  - वर्ष 2022 का त्रिवार्षिक बैंक सर्वेक्षण दैनिक कारोबार में डॉलर की हिस्सेदारी में मामूली वृद्धि को दर्शाता है लेकिन उभरती अर्थव्यवस्थाएँ तेज़ी से डॉलर के अतिरिक्त किसी अन्य मुद्रा मूल्य में व्यापार या नॉन-डॉलर-डीनॉमिनेटेड व्यापार (Non-Dollar-Denominated Trade) में संलग्न हो रही हैं।
- **चीन के रॅन्मिन्बी का उदय:**
  - वर्ष 2022 में चीन की मुद्रा रॅन्मिन्बी (Renminbi) विश्व स्तर पर पाँचवीं सबसे अधिक कारोबार वाली मुद्रा बन गई, जहाँ 70% से अधिक चीन-रूस व्यापार युआन और रूबल में संपन्न हुआ।
- **स्थानीय मुद्रा बॉण्ड बाज़ारों का विकास:**
  - उभरते स्थानीय मुद्रा बॉण्ड बाज़ारों का वर्ष 2015 से 2021 के बीच व्यापक विस्तार हुआ, जो डॉलर-मूल्य वाले परिसंपत्तियों (dollar-denominated assets) के लिये एक विकल्प पेश करते हैं।

रुपए को मज़बूत करने के लिये भारत के प्रमुख प्रयास:

- **अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय सेवा केंद्र (International Financial Services Centre- IFSC) की स्थापना:**
  - गिफ्ट सिटी (GIFT City), गुजरात में भारत का पहला IFSC स्थापित किया गया है, जिसका उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय लेनदेन में रुपए के उपयोग को बढ़ावा देना है।
- **पूंजी बाज़ार का उदारीकरण:**
  - भारत ने रुपए की अपील को बढ़ाने के लिये रुपए-मूल्य वाले वित्तीय साधनों, जैसे बॉण्ड और डेरिवेटिव्स, की उपलब्धता में वृद्धि की है।

- **डिजिटल भुगतान प्रणाली को बढ़ावा:**
  - यूनिफाइड पेमेंट इंटरफेस (UPI) जैसी पहल ने रुपए में डिजिटल लेनदेन की सुविधा प्रदान की है।
  - हाल ही में फ्राँस और सिंगापुर ने UPI का सीमित उपयोग शुरू किया है।
- **स्पेशल वोस्ट्रो रुपी अकाउंट (SVRAs) की शुरुआत:**
  - भारत ने 18 देशों के अधिकृत बैंकों को बाज़ार-निर्धारित विनिमय दरों पर रुपए में भुगतान के निपटान के लिये SVRAs खोलने की अनुमति दी है।
  - इस तंत्र का उद्देश्य कम लेन-देन लागत, अधिक मूल्य पारदर्शिता, तेज़ निपटान समय और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को समग्र रूप से बढ़ावा देना है।

रुपए के अंतर्राष्ट्रीयकरण हेतु उपलब्ध अवसर:

- **उत्प्रेरक के रूप में निर्यात वृद्धि:**
  - वर्ष 2030 तक भारत का 2 ट्रिलियन डॉलर का महत्त्वाकांक्षी निर्यात लक्ष्य रुपए की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति में सुधार लाने में योगदान कर सकता है।
- **पूर्ण पूंजी खाता परिवर्तनीयता:**
  - रुपए की पूर्ण परिवर्तनीयता हासिल करने से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और निवेश के लिये इसका आकर्षण बढ़ेगा।
- **सतत् आर्थिक विकास:**
  - उच्च और निरंतर आर्थिक विकास से वैश्विक व्यापार बाज़ार में भारत की स्थिति मज़बूत होगी।
- **अमेरिकी मौद्रिक नीति प्रभाव को कम करना:**
  - अमेरिकी डॉलर के उपयोग को कम करके विश्व के विभिन्न देश अपनी अर्थव्यवस्थाओं पर अमेरिकी मौद्रिक नीति के प्रभाव को कम कर सकते हैं।
- **बेहतर मौद्रिक नीति प्रभावशीलता:**
  - रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण भारत की मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता को बढ़ा सकता है।
  - रुपए की व्यापक अंतर्राष्ट्रीय पहुँच के साथ भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) मुद्रास्फीति को प्रबंधित करने और आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिये विनिमय दर को एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल कर सकता है।
  - यह मौद्रिक स्थितियों के प्रबंधन और आर्थिक चुनौतियों सामना करने में अधिक लचीलापन प्रदान करेगा।

रुपए में व्यापार से संबद्ध चुनौतियाँ और सीमाएँ:

- **डॉलर पर उच्च निर्भरता:**
  - वृहत प्रयासों के बावजूद भारतीय आयात का एक बड़ा हिस्सा (80%) अभी भी डॉलर में होता है, जिससे डी-डॉलराइज़ेशन का प्रभाव सीमित हो जाता है।
- **गैर-परिवर्तनीय मुद्रा संबंधी चिंताएँ:**
  - रुपए की परिवर्तनीयता की कमी के कारण भागीदार देश स्थानीय मुद्रा व्यापार में संलग्न होने में संकोच कर सकते हैं, जिससे संभावित व्यापार चुनौतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।
- **बढ़ता रुपया भंडार:**
  - उपयोग के लिये पर्याप्त अवसर के बिना भागीदार देशों के भंडार में रुपए का संचय समस्याएँ उत्पन्न कर सकता है।
- **विनिमय दर अस्थिरता:**
  - रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण इसे विनिमय दर में वृहत अस्थिरता के जोखिम में लाएगा।
  - रुपए के मूल्य में उतार-चढ़ाव व्यापार प्रतिस्पर्द्धात्मकता, विदेशी निवेश प्रवाह और वित्तीय बाज़ार स्थिरता को प्रभावित कर सकता है।
  - संभावित प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के लिये विनिमय दर जोखिमों का प्रबंधन महत्त्वपूर्ण हो जाता है।
- **पूंजी पलायन और वित्तीय स्थिरता:**
  - रूपए को अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में ले जाने से पूंजी पलायन की स्थिति भी बन सकती है, यदि निवेशक रुपये में भरोसा खो दें या प्रतिकूल आर्थिक स्थितियों को लेकर आशंकित हों।
  - इससे देश के विदेशी मुद्रा भंडार पर दबाव पड़ सकता है, वित्तीय स्थिरता प्रभावित हो सकती है और मौद्रिक नीति प्रबंधन के लिये चुनौतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।
- **पूंजी नियंत्रण:**
  - भारत में अभी भी पूंजी नियंत्रण लागू है जो विदेशियों की भारतीय बाज़ारों में निवेश और व्यापार करने की क्षमता को सीमित करता है।
  - इन प्रतिबंधों के कारण रुपए का अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा के रूप में व्यापक रूप से उपयोग करना कठिन हो जाता है।
- **प्रतिस्पर्द्धी मुद्राएँ:**
  - रुपए को अमेरिकी डॉलर, यूरो और येन जैसी स्थापित अंतर्राष्ट्रीय मुद्राओं से प्रतिस्पर्द्धा का सामना करना पड़ता है, जिन्हें पहले से व्यापक स्वीकृति और तरलता प्राप्त है।

- बाज़ार हिस्सेदारी हासिल करना और इन प्रमुख मुद्राओं को विस्थापित करना एक महत्त्वपूर्ण चुनौती सिद्ध हो सकती है।

आगे की राह:

- **मुद्रा परिवर्तनीयता को सुदृढ़ करना:**
  - भारत को रुपए के लिये पूर्ण पूंजी खाता परिवर्तनीयता प्राप्त करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिये।
  - इससे अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और निवेश के लिये एक व्यवहार्य मुद्रा के रूप में इसका आकर्षण बढ़ेगा।
  - इस संबंध में पूंजी प्रवाह को उदार बनाने और विदेशी मुद्रा नियंत्रण को सरल करने के प्रयास महत्त्वपूर्ण सिद्ध होंगे।
- **द्विपक्षीय मुद्रा व्यवस्था को प्रोत्साहित करना:**
  - व्यापार निपटान में रुपए के उपयोग को बढ़ावा देने के लिये भागीदार देशों के साथ द्विपक्षीय मुद्रा विनिमय समझौतों (currency swap agreements) को किया जा सकता है।
  - इस तरह की व्यवस्था से डॉलर पर निर्भरता कम हो सकती है और अन्य देशों के साथ मज़बूत आर्थिक संबंधों को बढ़ावा मिल सकता है।
- **क्षेत्रीय पहलों का लाभ उठाना:**
  - भारत स्थानीय मुद्राओं में क्षेत्रीय व्यापार निपटान को बढ़ावा देने के लिये क्षेत्र के अन्य देशों के साथ सहयोग कर सकता है।
  - चिआंग माई पहल बहुपक्षीयकरण (Chiang Mai Initiative Multilateralization- CMIM) जैसी पहलों में भाग लेने से व्यापार में एशियाई मुद्राओं के उपयोग को सशक्त किया जा सकता है और डॉलर पर निर्भरता कम हो सकती है।
- **व्यापार साझेदारी में विविधता लाना:**
  - भारत को विशिष्ट देशों के साथ आयात और निर्यात की सघनता को उचित करने के लिये अपनी व्यापार साझेदारियों में विविधता लानी चाहिये।
  - व्यापक व्यापारिक साझेदारों के साथ जुड़ने से वैश्विक व्यापार में रुपए के उपयोग में वृद्धि के अवसर पैदा होंगे।
- **मुद्रा स्थिरता में विश्वास का निर्माण:**
  - विवेकपूर्ण राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों का प्रदर्शन करने और मुद्रा स्थिरता बनाए रखने से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये एक विश्वसनीय एवं स्थिर मुद्रा के रूप में रुपए में विश्वास पैदा करने में मदद मिलेगी।

भारत में महिला आयोग

भारत में महिला आयोगों (Women's commissions) की स्थापना वृहत वादे और उच्च आकांक्षाओं के साथ की गई थी, जहाँ इन्हें राष्ट्रीय और राज्य दोनों स्तरों पर महिलाओं के अधिकारों एवं हितों की रक्षा के लिये समर्पित संस्थानों के रूप में परिकल्पित किया गया था, लेकिन समय गुज़रने के साथ महिलाओं से संबंधित महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर उनकी कार्यप्रणाली एवं प्रतिक्रियाओं की आलोचनात्मक समीक्षा करने की आवश्यकता स्पष्ट हो गई है। मणिपुर में महिलाओं से छेड़छाड़ और बलात्कार की हालिया घटनाओं—जिससे मानवीय गरिमा एवं अधिकारों की क्रूर उपेक्षा की चिंताजनक स्थिति सामने आई है, ने इन आयोगों के कार्यकरण की ओर देश का गहन ध्यान आकर्षित किया है।

महिला आयोग:

- **राष्ट्रीय महिला आयोग (National Commission for Women- NCW):**
  - NCW भारत सरकार का एक सांविधिक निकाय है, जो आमतौर पर महिलाओं को प्रभावित करने वाले सभी नीतिगत मामलों पर सरकार को सलाह देता है।
  - इसका गठन जनवरी 1992 में भारतीय संविधान के प्रावधानों के तहत किया गया था, जैसा कि राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990 में परिभाषित किया गया था।
  - NCW का उद्देश्य भारत में महिलाओं के अधिकारों का प्रतिनिधित्व करना और उनसे जुड़े मुद्दों एवं चिंताओं के लिये अभिव्यक्ति प्रदान करना है।
  - दहेज, राजनीतिक मामले, धार्मिक मामले, नौकरियों में महिलाओं के समान प्रतिनिधित्व और श्रम क्षेत्र में महिलाओं के शोषण जैसे विभिन्न विषय उसके अवलोकन के दायरे में शामिल रहे हैं।
  - NCW हिंसा, भेदभाव, उत्पीड़न की शिकार या अपने अधिकारों से वंचित महिलाओं की शिकायतें भी स्वीकार करता है और मामलों की जाँच करता है।
- **राज्य महिला आयोग (State Commissions for Women):**
  - NCW के अलावा, भारत के विभिन्न राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में राज्य महिला आयोगों का भी गठन किया गया है।
  - ये आयोग संबंधित राज्य अधिनियमों या आदेशों के तहत गठित किये गए हैं और NCW के समान ही कार्य और शक्तियाँ रखते हैं।

- वे राज्य और केंद्रशासित प्रदेश जिनके पास महिलाओं के लिये अपने स्वयं के आयोग हैं: आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, छत्तीसगढ़, दिल्ली, गोवा, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, झारखंड, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नगालैंड, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान, सिक्किम, तमिलनाडु, तेलंगाना, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल।

महिला आयोग के उद्देश्य एवं कार्य:

- **उद्देश्य:**
  - महिलाओं के अधिकारों का प्रतिनिधित्व:
    - राष्ट्रीय महिला आयोग का प्राथमिक उद्देश्य भारत में महिलाओं के अधिकारों का प्रतिनिधित्व और पक्षसमर्थन करना है।
    - वे महिलाओं के मुद्दों एवं चिंताओं को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं और समाज में महिलाओं के समक्ष विद्यमान विभिन्न चुनौतियों को हल करते हैं।
  - नीतिगत सलाह:
    - महिला आयोगों को महिलाओं को प्रभावित करने वाले नीतिगत मामलों पर सरकार को सलाह देने का कार्य सौंपा गया है।
    - वे लैंगिक समानता को बढ़ावा देने और महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने से संबंधित नीतियों एवं विधान को आकार देने के लिये मूल्यवान अनुशंसाएँ और सुझाव प्रदान करते हैं।
  - संवैधानिक प्रावधानों की सुरक्षा:
    - महिला आयोग भारतीय संविधान और अन्य कानूनों के तहत महिलाओं को प्रदत्त सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जाँच एवं परीक्षण के लिये ज़िम्मेदार हैं।
    - वे सुनिश्चित करते हैं कि महिलाओं के लिये संवैधानिक अधिकारों और सुरक्षा को बरकरार रखा जाए और प्रभावी ढंग से प्रवर्तित किया जाए।
  - शिकायतों का प्रबंधन:
    - इन आयोगों को महिलाओं के अधिकारों के उल्लंघन से संबंधित शिकायतों का समाधान करने का दायित्व सौंपा गया है।
    - वे महिलाओं के साथ भेदभाव, उत्पीड़न, हिंसा और अन्य अन्याय के मामलों की जाँच करने और समाधान प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
  - स्वत: संज्ञान से कार्रवाई:
    - महिला आयोग शिकायतों पर प्रतिक्रिया देने के अलावा महिला अधिकारों से वंचना और महिलाओं की सुरक्षा के उद्देश्य से बनाए गए कानूनों के गैर-अनुपालन से संबंधित मामलों का स्वत: संज्ञान (Suo Motu) भी ले सकता है।
    - इससे उन्हें महिलाओं को प्रभावित करने वाले उभरते मुद्दों को सक्रिय रूप से संबोधित करने का अवसर मिलता है।
  - महिला सशक्तीकरण:
    - महिला आयोग महिलाओं के आर्थिक विकास, शिक्षा और स्वास्थ्य को बढ़ावा देकर उन्हें सशक्त करने की दिशा में कार्य करता है।
    - उनका लक्ष्य महिलाओं की रोज़गार क्षमता को बढ़ाना और विभिन्न क्षेत्रों में उनकी उन्नति के अवसर सृजित करना है।
- **कार्य:**
  - अनुसंधान एवं अध्ययन:
    - महिला आयोग महिलाओं के अधिकारों एवं लैंगिक समानता से संबंधित मुद्दों पर अनुसंधान और अध्ययन कार्य करते हैं।
    - वे साक्ष्य-आधारित नीति अनुशंसाओं का समर्थन करने के लिये डेटा और सूचना एकत्र करते हैं।
  - पक्षसमर्थन और जागरूकता:
    - ये आयोग महिलाओं के अधिकारों, लैंगिक समानता और संबंधित मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिये पक्षसमर्थक प्रयासों में संलग्न हैं।
    - वे सामाजिक जागरूकता को बढ़ावा देने और महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव लाने के लिये विभिन्न अभियानों एवं कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं।
  - विधिक सहायता और समर्थन:
    - महिला आयोग भेदभाव, हिंसा या अन्य अधिकार उल्लंघनों का शिकार हुई महिलाओं को प्राय: विधिक सहायता और समर्थन भी प्रदान करते हैं।
    - वे महिलाओं को न्याय तक पहुँच बना सकने और कानूनी प्रक्रियाओं का उपयोग कर सकने में सहायता प्रदान करते हैं।
  - प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण:
    - यह आयोग विधि प्रवर्तन एजेंसियों सहित विभिन्न हितधारकों के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम और क्षमता

निर्माण पहल की पेशकश करता है ताकि उन्हें महिलाओं के मुद्दों के प्रति संवेदनशील बनाया जा सके तथा लैंगिक चुनौतियों के प्रति उनकी प्रतिक्रिया में सुधार लाया जा सके।

- नीतिगत अनुशंसाएँ:
  - महिला आयोग अपने शोध और निष्कर्षों के आधार पर प्रणालीगत लैंगिक असमानताओं को दूर करने तथा अधिक लिंग-समावेशी समाज का निर्माण करने के लिये सरकार को नीतिगत अनुशंसाएँ प्रदान करते हैं।
- सहयोग और साझेदारी:
  - ये आयोग महिलाओं के अधिकारों एवं लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिये सामूहिक प्रयास का सृजन करने के लिये गैर- सरकारी संगठनों, नागरिक समाज संगठनों और अन्य सरकारी निकायों सहित विभिन्न हितधारकों के साथ सहयोग का निर्माण करते हैं।

महिला आयोगों के समक्ष विद्यमान चुनौतियाँ:

- **पर्याप्त संसाधनों और स्वायत्तता का अभाव:**
  - महिला आयोगों को प्रायः वित्तीय बाधाओं का सामना करना पड़ता है। वे सरकारी वित्तपोषण पर बहुत अधिक निर्भर होते हैं, जो उनकी स्वतंत्रता को प्रभावित कर सकता है तथा प्रभावी ढंग से कार्य कर सकने की उनकी क्षमता को बाधित कर सकता है।
- **राजनीतिक हस्तक्षेप:**
  - सत्तारूढ़ सरकार द्वारा मनोनीत होने के कारण महिला आयोगों को उन मामलों से बचने के लिये दबाव का सामना करना पड़ सकता है जो संभावित रूप से सरकार या उसके सहयोगियों पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं।
  - यह राजनीतिक हस्तक्षेप महिलाओं के अधिकारों के प्रति आयोग की निष्पक्षता एवं प्रतिबद्धता को कमज़ोर कर सकता है।
- **सीमित जागरूकता और पहुँच:**
  - महिलाओं की एक बड़ी संख्या (विशेषकर ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों में) महिला आयोगों के अस्तित्व और भूमिका से प्रायः अवगत नहीं है।
  - जागरूकता की कमी, चुनौतियों का सामना करने पर इन आयोगों से सहायता और समर्थन ले सकने की उनकी क्षमता को बाधित करती है।

महिला आयोगों से जुड़े विभिन्न विवाद:

- **मणिपुर घटना पर प्रतिक्रिया:**
  - मणिपुर मामले में NCW की प्रतिक्रिया की आलोचना की गई है, जहाँ वह त्वरित और सक्रिय रूप से कार्रवाई करने में विफल रहा।
- **मैंगलोर पब हमले पर प्रतिक्रिया:**
  - वर्ष 2009 में मैंगलोर के एक पब में महिलाओं के एक समूह पर हमले के मामले में NCW की प्रतिक्रिया को असंवेदनशील एवं 'विक्टिम-ब्लेमिंग' के रूप में देखा गया और इसकी व्यापक निंदा की गई।
  - इस मामले में आयोग की एक सदस्य ने पीड़िताओं पर स्वयं की सुरक्षा का ध्यान न रखने का आरोप लगाया था और शिकायत करने की उनकी अनिच्छा पर सवाल उठाया था।
- **यौन उत्पीड़न के आरोपों को हल करने में विफलता:**
  - वर्ष 2019 में भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश के विरुद्ध यौन उत्पीड़न के आरोपों पर NCW की प्रतिक्रिया ने महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के संबंध में इसकी सक्रियता और इच्छा पर चिंताएँ उत्पन्न की।

NCW की प्रमुख उपलब्धियाँ:

- **महिला अधिकारों से संबंधित कानून का सुदृढ़ीकरण:**
  - NCW ने घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 जैसे महिलाओं के अधिकारों से संबंधित कानूनों के कार्यान्वयन को सुदृढ़ करने में मदद की है।
- **कानूनी और मनोवैज्ञानिक परामर्श:**
  - इसने हिंसा और यौन उत्पीड़न की शिकार महिलाओं को कानूनी और मनोवैज्ञानिक परामर्श प्रदान किया है।
- **कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न:**
  - इसने कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, 2013 का कार्यान्वयन और इसकी निगरानी सुनिश्चित की है।
- **'जेंडर प्रोफ़ाइल':**
  - इसने सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में (लक्षद्वीप को छोड़कर) महिलाओं की स्थिति एवं उनके सशक्तीकरण का आकलन करने के लिये जेंडर प्रोफ़ाइल तैयार किया है।
- **बाल विवाह और अन्य कानूनी मुद्दे:**
  - इसने बाल विवाह के मुद्दे पर सक्रिय से कार्य किया है, विधिक जागरूकता कार्यक्रमों एवं पारिवारिक महिला लोक अदालत

को प्रायोजित किया है और दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961, PNDT अधिनियम 1994, भारतीय दंड संहिता 1860 तथा राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990 जैसे कानूनों की समीक्षा की है ताकि इन्हें अधिक कठोर एवं प्रभावी बनाया जा सके।

- **कार्यशालाएँ और परामर्श:**
  - इसने कार्यशालाओं/परामर्शों का आयोजन किया है, महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण पर विशेषज्ञ समितियों का गठन किया है, लिंग जागरूकता के लिये कार्यशालाएँ/सेमिनार आयोजित किये हैं और कन्या भ्रूण हत्या, महिलाओं के विरुद्ध हिंसा आदि के खिलाफ प्रचार अभियान चलाया है ताकि इन सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध समाज में जागरूकता उत्पन्न हो सके।
- **प्रकाशन:**
  - यह नियमित रूप से 'राष्ट्र महिला' नामक एक मासिक समाचार पत्र का हिंदी और अंग्रेज़ी में प्रकाशन करता रहा है।

महिला आयोगों में सुधार के लिये रणनीतियाँ:

- **पारदर्शी नियुक्ति प्रक्रिया:**
  - महिला आयोगों के अध्यक्षों एवं सदस्यों की नियुक्ति के लिये योग्यता आधारित एवं पारदर्शी प्रक्रिया अपनाई जाए। राजनीतिक विपक्ष, न्यायपालिका और नागरिक समाज संगठनों सहित विभिन्न हितधारकों के प्रतिनिधियों को शामिल करने से निष्पक्षता सुनिश्चित करने में मदद मिल सकती है।
- **'सोशल ऑडिट':**
  - महिला आयोगों के प्रदर्शन, धन के उपयोग और प्रभाव का आकलन करने के लिये बाह्य एजेंसियों की सहायता से नियमित रूप से इनका सामाजिक लेखा परीक्षण (Social Audit) किया जाना चाहिये।
  - यह उन्हें जवाबदेह बनाएगा और सुधार के लिये अंतर्दृष्टि प्रदान करेगा।
- **क्षेत्रीय दौरों को प्रोत्साहन:**
  - आयोग के सदस्यों और कर्मियों को अधिक क्षेत्रीय दौरे करने, विभिन्न भूभागों में महिलाओं के साथ संवाद करने और उनकी अनूठी चुनौतियों एवं आवश्यकताओं को समझने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
- **जागरूकता और पहुँच:**
  - हेल्पलाइन, ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म और मोबाइल आउटरीच जैसे विभिन्न चैनलों के माध्यम से, विशेष रूप से दूरदराज के क्षेत्रों में, महिलाओं के बीच महिला आयोग के बारे में अधिक जागरूकता को बढ़ावा दिया जाना चाहिये।
- **समानुभूति और संवेदनशीलता प्रशिक्षण:**
  - संकटग्रस्त महिलाओं के प्रति समानुभूति और संवेदनशीलता विकसित करने के लिये आयोग के सदस्यों और कर्मियों को प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिये। इससे मामलों से निपटने में एक समर्थनकारी और पीड़िता-केंद्रित दृष्टिकोण के निर्माण में मदद मिलेगी।

भारत की चक्रीय क्रांति

संसाधन दक्षता (Resource efficiency) और चक्रीय अर्थव्यवस्था (Circular Economy) वे प्रभावशाली रणनीतियाँ हैं जो प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भरता को प्रभावी ढंग से न्यूनतम कर सकती हैं, अपशिष्ट को कम कर सकती हैं और सतत/संवहनीय डिज़ाइन अभ्यासों को प्रोत्साहित कर सकती हैं।

सतत् विकास सुनिश्चित करने और सतत् विकास लक्ष्यों (SDGs) को साकार करने के सामूहिक वैश्विक प्रयास में संसाधन उपयोग को आर्थिक विकास से पृथक करना महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा। 'टेक-मेक-डिस्पोज़' (take-make-dispose) से 'रिड्यूज़-रीयूज़-रीसाइक्लिंग' (reduce-reuse-recycle) मॉडल की ओर आगे बढ़ने की आवश्यकता को चिह्नित करते हुए भारत ने G-20 फोरम में विचार-विमर्श के लिये तीन मुख्य विषयों में से एक के रूप में 'संसाधन दक्षता और चक्रीय अर्थव्यवस्था' को प्राथमिकता दी है

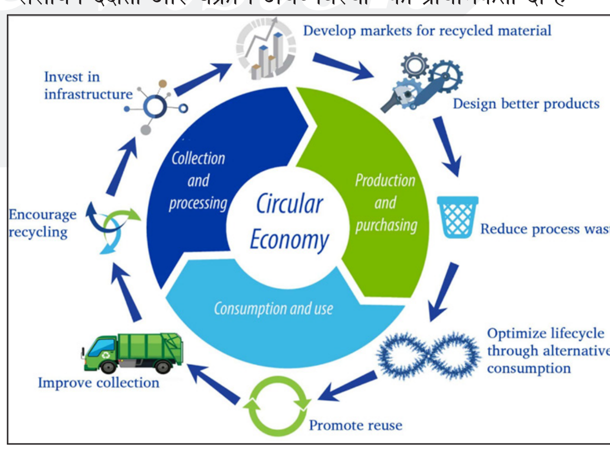

भारत ने अपनी G-20 अध्यक्षता के दौरान चक्रीय अर्थव्यवस्था के लिये चार प्राथमिकता क्षेत्रों को अपनाया है: इस्पात क्षेत्र में चक्रीयता (circularity in the steel sector); विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (Extended Producer Responsibility- EPR); चक्रीय जैव-अर्थव्यवस्था (circular bioecon-

omy) और एक औद्योगिक नेतृत्व वाली संसाधन दक्षता एवं चक्रीय अर्थव्यवस्था उद्योग गठबंधन (industry-led resource efficiency and circular economy industry coalition) की स्थापना करना। G-20 समुदाय के भीतर संसाधन दक्षता और चक्रीय अर्थव्यवस्था रणनीतियों को अब अधिकाधिक महत्त्व से देखा जा रहा है।

इस्पात क्षेत्र में चक्रीय अर्थव्यवस्था का महत्त्व:

- **अवसंरचना और औद्योगिक विकास के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण सामग्री:**
  - इस्पात निर्माण, विनिर्माण और परिवहन सहित विभिन्न क्षेत्रों के लिये एक मूलभूत निर्माण सामग्री है।
  - जैसे-जैसे अर्थव्यवस्थाओं का विकास होता है, इस्पात की माँग बढ़ती जाती है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है।
- **ऊर्जा क्षेत्र से होने वाला उत्सर्जन:**
  - वैश्विक स्तर पर, ऊर्जा क्षेत्र के कुल उत्सर्जन के लगभग 7% भाग के लिये लौह एवं इस्पात उत्पादन को ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है।
  - पारंपरिक रैखिक उत्पादन मॉडल (linear production model) उच्च संसाधन खपत और उत्सर्जन की ओर ले जाता है, जो जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय क्षरण में योगदान करता है।
- **अपशिष्ट उत्पादन को कम करना:**
  - चक्रीय प्रणाली का उद्देश्य संपूर्ण इस्पात उद्योग में अपशिष्ट उत्पादन को कम करना और उत्तरदायी अपशिष्ट प्रबंधन को बढ़ावा देना है।
  - इस्पात क्षेत्र में चक्रीय अर्थव्यवस्था का दृष्टिकोण अपनाकर अपशिष्ट निपटान और 'लैंडफिलिंग' से जुड़े पर्यावरणीय प्रभाव को काफी कम कर सकता है।
- **सतत् विकास लक्ष्यों को बढ़ावा देना:**
  - चक्रीय इस्पात अर्थव्यवस्था से उत्तरदायी उपभोग एवं उत्पादन को बढ़ावा मिलना, जलवायु कार्रवाई और सतत् विकास के लिये साझेदारियों सहित संयुक्त राष्ट्र के कई सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करना आसान होगा।

EPR:

- विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (Extended Producer Responsibility- EPR) एक ऐसी अवधारणा है जो उत्पादकों को उनके उत्पादों के पर्यावरणीय परिणामों के लिये आरंभ से लेकर अंत तक ज़िम्मेदार ठहराती है।
- इसका उद्देश्य अपशिष्ट प्रबंधन में सुधार करना और स्थानीय प्राधिकारों पर दबाव कम करना है।
- यह उत्पाद की कीमतों में पर्यावरणीय लागत को दर्शाता है और पर्यावरण-अनुकूल उत्पादों के निर्माण को प्रेरित करता है।
- EPR विभिन्न अपशिष्ट पर लागू होता है, जैसे प्लास्टिक अपशिष्ट, ई-अपशिष्ट और बैटरी अपशिष्ट।
- ई-अपशिष्ट (प्रबंधन और हैंडलिंग) नियम, 2011 में भारत में पहली बार EPR की अवधारणा पेश की गई थी।

EPR से चक्रीयता को कैसे बढ़ावा मिल सकता है?

- **इको-डिज़ाइन और संवहनीय सामग्रियों को प्रोत्साहन मिलना:**
  - अपनी विस्तारित ज़िम्मेदारियों को पूरा करने के लिये, उत्पादकों को ऐसे उत्पाद डिज़ाइन करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है जो अधिक टिकाऊ, मरम्मत योग्य और पुन:प्रयोज्य हों।
  - इको-डिज़ाइन सिद्धांतों को यह सुनिश्चित करने के लिये एकीकृत किया गया है कि उत्पादों का जीवनकाल लंबा हो और कम अपशिष्ट उत्पन्न हो।
- **संसाधन संरक्षण और अपशिष्ट न्यूनीकरण:**
  - EPR उत्पादकों को संसाधन खपत को कम करने के लिये प्रेरित करता है, क्योंकि वे अपशिष्ट प्रबंधन और अपने उत्पादों के 'एंड-ऑफ़-लाइफ ट्रीटमेंट' से जुड़ी लागत का वहन करते हैं।
  - परिणामस्वरूप, उन्हें पुनर्चक्रित सामग्रियों का उपयोग करने और अधिक संवहनीय उत्पादन प्रक्रियाओं का पता लगाने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है, जिससे नए संसाधनों या 'वर्जिन रिसोर्स' की मांग कम हो जाती है।
- **पुनर्चक्रण अवसंरचना को बढ़ावा देना:**
  - निर्माता, अपनी ज़िम्मेदारी के एक भाग के रूप में, यह सुनिश्चित करने के लिये प्राय: पुनर्चक्रण अवसंरचना की स्थापना एवं समर्थन करते हैं कि उनके उत्पादों को उनके उपयोगी जीवनकाल के अंत में प्रभावी ढंग से संग्रहीत, वर्गीकृत और पुनर्चक्रित किया जाता है।
  - यह एक क्लोज़्ड-लूप प्रणाली में योगदान देता है और सामग्रियों को संचलन या चक्रण में बनाये रखकर चक्रीयता को बढ़ावा देता है।

- **'टेक-बैक' और 'रिकवरी' कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देना:**
  - EPR योजनाओं के लिये प्राय: आवश्यक होता है कि उत्पादक 'टेक-बैक' और 'रिकवरी' कार्यक्रमों की स्थापना करें, जहाँ उपभोक्ता उपयोग किये जा चुके उत्पादों को वापस कर सकते हैं।
  - यह अभ्यास सुनिश्चित करता है कि उत्पादों को उनके उपयोग के बाद पुनर्चक्रण, नवीनीकरण या सुरक्षित निपटान के माध्यम से ठीक से प्रबंधित किया जाता है।
- **पुनर्चक्रित सामग्रियों के लिये बाज़ार का सृजन करना:**
  - चूँकि निर्माता अपने उत्पादों के एंड-ऑफ़-लाइफ के प्रबंधन के लिये ज़िम्मेदार हैं, इसलिये उन्हें पुनर्नवीनीकृत सामग्री को अपनी उत्पादन प्रक्रियाओं में वापस शामिल करने के लिये प्रोत्साहित किया जाता है।
  - यह, बदले में, पुनर्नवीनीकृत सामग्री की मांग को उत्तेजित करता है; इस प्रकार, एक चक्रीय आपूर्ति श्रृंखला का समर्थन करता है।
- **सरकार और उद्योग के बीच सहयोग निर्माण:**
  - EPR सरकारों, उद्योगों और अन्य हितधारकों के बीच गहन सहयोग पर निर्भर करता है।
  - साथ मिलकर वे अधिक प्रभावी और व्यापक EPR नीतियाँ विकसित कर सकते हैं, जिससे एक चक्रीय अर्थव्यवस्था की ओर सहज संक्रमण संभव हो सकेगा।

चक्रीय जैव-अर्थव्यवस्था के लाभ:

- **जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता में कमी आना:**
  - चक्रीय जैव-अर्थव्यवस्था (Circular Bioeconomy) जैव-आधारित उत्पादों एवं जैव-ऊर्जा का उत्पादन करने के लिये पादपों, शैवाल और कृषि अपशिष्ट जैसे नवीकरणीय जैविक संसाधनों पर निर्भर करती है।
  - जीवाश्म ईंधन के बजाय इन संसाधनों का उपयोग करने से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और जलवायु परिवर्तन के शमन में मदद मिलती है।
- **संसाधन दक्षता और संरक्षण:**
  - चक्रीय जैव-अर्थव्यवस्था एक क्लोज़्ड-लूप प्रणाली के सिद्धांतों का पालन करती है, जहाँ एक प्रक्रिया के अपशिष्ट और सह-उत्पाद दूसरी प्रक्रिया के लिये मूल्यवान संसाधन बन जाते हैं।
  - संसाधनों का यह कुशल उपयोग अपशिष्ट उत्पादन को कम करता है और प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव कम करता है, जिससे अधिक सतत् संसाधन प्रबंधन की स्थिति प्राप्त होती है।
- **सतत् कृषि और वानिकी:**
  - चक्रीय जैव-अर्थव्यवस्था संबंधी अभ्यास सतत् कृषि और वानिकी अभ्यासों को प्रोत्साहित करते हैं।
  - उदाहरण के लिये, जैव-ऊर्जा या जैव उत्पादों के लिये फसल अवशेषों का उपयोग करने से मृदा में कार्बनिक पदार्थ को बनाए रखने में मदद मिलती है, जिससे मृदा स्वास्थ्य और उर्वरता में सुधार होता है।
- **हरित रोज़गार सृजन:**
  - चक्रीय जैव-अर्थव्यवस्था की ओर संक्रमण से कृषि, वानिकी, जैव-आधारित उद्योग, अनुसंधान और अपशिष्ट प्रबंधन सहित विभिन्न क्षेत्रों में रोज़गार के नए अवसर सृजित होते हैं।
    - यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देता है और सामाजिक विकास में योगदान करता है।
- **नवाचार और तकनीकी प्रगति:**
  - चक्रीय जैव-अर्थव्यवस्था नवाचार को बढ़ावा देती है और सतत् प्रौद्योगिकियों एवं जैव प्रसंस्करण विधियों में अनुसंधान व विकास को प्रोत्साहित करती है।
    - यह तकनीकी प्रगति को बढ़ावा देती है जिससे विभिन्न उद्योगों को लाभ प्राप्त हो सकता है।
- **जलवायु परिवर्तन शमन:**
  - बायोमास से प्राप्त सतत् जैव-ऊर्जा विभिन्न अनुप्रयोगों में जीवाश्म ईंधन को प्रतिस्थापित करने में मदद कर सकती है; इस प्रकार, कार्बन उत्सर्जन को कम करने और जलवायु परिवर्तन का मुक़ाबला करने में मदद कर सकती है।
  - भारत सरकार प्रधानमंत्री जी-वन योजना, गोबर धन योजना, SATAT योजना आदि विभिन्न योजनाओं के माध्यम से जैव ईंधन, बायोगैस और बायो-कंपोस्ट को अपनाने की दिशा में कार्य कर रही है।
- **बेहतर खाद्य सुरक्षा:**
  - चक्रीय जैव-अर्थव्यवस्था कृषि अवशेषों और अपशिष्टों को खाद्य उत्पादन से हटाने के बजाय जैव-आधारित उत्पादों के लिये फीडस्टॉक के रूप में उपयोग करने के माध्यम से बेहतर खाद्य सुरक्षा में योगदान कर सकती है।

नोट :

चक्रीय अर्थव्यवस्था की प्रमुख चुनौतियाँ:

- **अवसंरचना और प्रौद्योगिकी:**
  - पुनर्चक्रण एवं अपशिष्ट प्रबंधन अवसंरचना का विकास एवं उन्नयन, साथ ही संसाधन पुनर्प्राप्ति के लिये उन्नत प्रौद्योगिकियों को अपनाना एक बड़ी चुनौती सिद्ध हो सकती है।
- **व्यवहार परिवर्तन:**
  - उत्तरदायी उपभोग, उत्पाद के पुन: उपयोग और पुनर्चक्रण के प्रति उपभोक्ता व्यवहार में बदलाव को प्रोत्साहित करने के लिये प्रभावी संचार एवं व्यवहार परिवर्तन अभियानों की आवश्यकता है।
- **नियामक ढाँचा:**
  - विभिन्न क्षेत्रों में चक्रीय अर्थव्यवस्था अभ्यासों का समर्थन करने के लिये प्रभावी एवं सामंजस्यपूर्ण नीतियों, विनियमों और प्रोत्साहनों को सुनिश्चित करना चुनौतीपूर्ण है।
- **वित्तीय निवेश:**
  - चक्रीय अर्थव्यवस्था परियोजनाओं को प्राय: उल्लेखनीय अग्रिम निवेश की आवश्यकता होती है। इन पहलों के वित्तपोषण के लिये निजी और सार्वजनिक निवेश आकर्षित करना चुनौतीपूर्ण सिद्ध हो सकता है।

आगे की राह:

- **डेटा और केस स्टडीज़ को शामिल करना:**
  - ठोस साक्ष्य और उदाहरण प्रदान करने के लिये, भारत में विशिष्ट चक्रीय अर्थव्यवस्था परियोजनाओं और उनके परिणामों को प्रदर्शित करने वाले डेटा एवं केस स्टडीज़ को शामिल करने पर विचार करना चाहिये।
- **चुनौतियाँ और समाधान:**
  - भारत में चक्रीय अर्थव्यवस्था अभ्यासों के कार्यान्वयन के दौरान सामने आने वाली चुनौतियों को हल करना।
  - उन संभावित समाधानों और रणनीतियों को शामिल करना जिन्हें देश इन चुनौतियों से निपटने के लिये अपना रहा है।
- **हितधारकों के दृष्टिकोण को शामिल करना:**
  - भारत में चक्रीयता को बढ़ावा देने से संलग्न सरकारी अधिकारियों, उद्योग जगत के नेताओं, पर्यावरण विशेषज्ञों और अन्य हितधारकों के वक्तव्यों या दृष्टिकोणों को शामिल करने पर विचार किया जाना चाहिये।
  - इससे इस विषय में गहराई और प्रामाणिकता प्राप्त होगी।
- **संक्षिप्त और स्पष्ट नीतिगत ढाँचा:**
  - संसाधन दक्षता और चक्रीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के लिये भारत द्वारा लागू किये गए नीतिगत ढाँचे और नियामक उपायों का एक संक्षिप्त एवं स्पष्ट अवलोकन प्रदान किया जाना चाहिये।

संतुलन की ओर कदम: अंतर्राज्यीय जल विवाद

जीविका और विकास के लिये जल संसाधनों से जूझ रहे विश्व में पर्याप्त जल उपलब्धता तक न्यायसंगत पहुँच एक गंभीर चिंता का विषय बनी हुई है।

भारत जैसे विविधतापूर्ण और बड़ी आबादी वाले देश में अंतर्राज्यीय नदी जल विवाद बार-बार उत्पन्न होने वाली चुनौती रही है, जिससे विभिन्न क्षेत्रों के बीच तनाव बढ़ रहा है और प्रगति में बाधा आ रही है। ये विवाद केवल राजनीति तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि प्राय: सामाजिक जीवन और विमर्श में भी फैल जाते हैं। इस परिदृश्य में इस मुद्दे का स्थायी समाधान ढूँढ़ना आवश्यक हो गया है जो जल संसाधनों के उपयोग में देरी, लागत में वृद्धि और कभी-कभी विधि-व्यवस्था की समस्याओं का कारण बनता है।

नदी जल का न्यायसंगत बँटवारा न केवल समुदायों और कृषि की तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आवश्यक है बल्कि सामंजस्यपूर्ण अंतर्राज्यीय संबंधों और सतत् विकास को बढ़ावा देने के लिये भी महत्त्वपूर्ण है।

भारत में अंतर्राज्यीय जल विवादों का वर्तमान परिदृश्य:

- **विवाद में शामिल राज्य और नदियाँ:**
  - हाल ही में कर्नाटक और तमिलनाडु के बीच पेन्नैयार नदी विवाद चर्चा में रहा। इसके बाद महादयी नदी विवाद पुन: चर्चा में आया जो लंबे समय से कर्नाटक और गोवा के बीच विवाद का विषय रहा है।
  - सतलुज-यमुना लिंक नहर, कृष्णा जल विवाद (आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, महाराष्ट्र और कर्नाटक), महानदी जल विवाद (ओडिशा और छत्तीसगढ़) और कावेरी जल विवाद (तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक और पुडुचेरी) जैसे अन्य कई जल विवाद प्राय: ख़बरों में आते रहते हैं।
- **जल से संबंधित संवैधानिक प्रावधान:**
  - जल (यानी जल आपूर्ति, सिंचाई, नहर, जल निकासी, तटबंध, जल भंडारण और जल विद्युत) राज्य सूची (State List) में शामिल विषय है।

- संघ सूची (Union List), केंद्र सरकार को संसद द्वारा घोषित सीमा तक अंतर्राज्यीय नदियों/घाटियों को विनियमित/विकसित करने का अधिकार प्रदान करती है।
- अनुच्छेद 262 के अनुसार, अंतर्राज्यीय नदी जल विवाद (inter-state river water disputes-ISRWD) के मामले में संसद विधि द्वारा निम्नलिखित के लिये उपबंध कर सकती है:
  - किसी भी विवाद के अधिनिर्णयन के लिये
  - किसी अंतर्राज्यीय नदी/घाटी के जल के वितरण/नियंत्रण के लिये
  - कि कोई भी न्यायालय ऐसे किसी भी विवाद या शिकायत के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग नहीं करेगा।
- अंतर्राज्यीय नदी जल विवाद (ISRWD) अधिनियम, 1956: इस अधिनियम के तहत यदि विवाद में संलग्न राज्य बातचीत से मुद्दे को हल करने में सक्षम नहीं हैं तो केंद्र ISRWD को हल करने के लिये एक न्यायाधिकरण (tribunal) का गठन करता है।
  - सरकारिया आयोग की प्रमुख अनुशंसाओं को शामिल करने के लिये इसे वर्ष 2002 में संशोधित किया गया।

Tribunal	Year of Formation	States Involved	Current Status	Awards
Krishna Water Disputes Tribunal II	2004	Andhra Pradesh, Maharashtra, Telangana & Karnataka	Tribunal Term extended	Award given 2013. Some matters subjudice
Mahanadi Water Disputes Tribunal	2018	Chhattisgarh & Odisha	Tribunal Exists	Matter under adjudication
Mahadayi Water Disputes Tribunal	2010	Karnataka, Goa & Maharashtra	Tribunal Exists	Award given 2018. Some matters pending
Ravi & Beas Water Tribunal	1986	Rajasthan, Haryana & Punjab	Tribunal term extended	Matter subjudice
Vansadhara Water Disputes Tribunal	2010	Odisha & Andhra Pradesh	Tribunal dissolved 2022	Yet to be published

ISRWD न्यायाधिकरणों के प्रभावी कार्यकरण की राह की चुनौतियाँ:

- गठन संबंधी चुनौतियाँ: ISRWD के निर्णय के लिये एक न्यायाधिकरण का गठन तभी किया जाता है जब इसके लिये केंद्र सहमत हो।
  - वर्तमान में सभी पक्षों के लिये स्वीकार्य जल डेटा की अनुपस्थिति के कारण अधिनिर्णय के लिये आधार रेखा निर्धारित करना कठिन हो गया है।
- वर्तमान तंत्र से संलग्न समस्याएँ: इन न्यायाधिकरणों के वर्तमान तंत्र में ISRWD न्यायाधिकरण के निर्णय को लागू करने में लंबी देरी और गैर-अनुपालन जैसी समस्याएँ मौजूद हैं।
  - भारत में गोदावरी और कावेरी जल विवादों जैसे विवादों को समाधान पाने में लंबी देरी का सामना करना पड़ा है।
  - इसके अलावा, प्राय: संलग्न पक्षकार न्यायाधिकरण के निर्णय से संतुष्ट नहीं होते हंण और सर्वोच्च न्यायालय के पास पहुँच जाते हैं, जिससे वाद/मुक़दमेबाज़ी के एक और दौर का आरंभ हो जाता है।
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव: व्यापक रूप से माना जाता है कि अधिनिर्णय ISRWD को निपटाने का उपयुक्त तरीका नहीं है। ऐसे कई विवादों में विधि के प्रश्न शामिल नहीं होते, बल्कि जल विज्ञान, पर्यावरण, इंजीनियरिंग, कृषि, जलवायु, समाजशास्त्र आदि के दायरे में आने वाले विषय शामिल होते हैं।

- इस प्रकार, एक और पहलू जिसकी इन न्यायाधिकरणों में कमी है, वह है विवादों को वैज्ञानिक तरीके से निपटाना।

- **ISRWD के समाधान की राह की अन्य चुनौतियाँ:**
  - डेटा साझेदारी और विवाद में संलग्न राज्यों के बीच डेटा की विसंगतियाँ जैसी चुनौतियाँ भी प्राय: मौजूद होती हैं।
  - राजनीतिक दल प्राय: इन विवादों का राजनीतिकरण कर देते हैं जिससे मुद्दे पर निष्पक्षता से विचार करना और सर्वसम्मति-आधारित समाधान ढूँढ़ना कठिन हो जाता है।
  - जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण और औद्योगीकरण के कारण जल की बढ़ती मांग जल संसाधनों के लिये राज्यों के बीच प्रतिस्पर्द्धा को तेज़ करती है।
  - जल एक अत्यधिक भावनात्मक मुद्दा है; लोगों के विरोध और सार्वजनिक प्रदर्शन अधिकारियों पर कठोर रुख अपनाने का दबाव बढ़ा सकते हैं, जिससे समाधान प्रक्रिया में बाधा आ सकती है।

जल विवादों को सुलझाने के लिये वैश्विक स्तर पर उपलब्ध नियम:

- **हेलसिंकी नियम (Helsinki Rules) 1966:**
  - व्यापक रूप से अनुपालित हेलसिंकी नियम के अनुच्छेद IV में अंतर्राष्ट्रीय अपवाह बेसिन के जल के न्यायसंगत उपयोग के बारे में उपबंध किया गया है।
  - नियमों के अनुसार, "प्रत्येक बेसिन राज्य, अपने क्षेत्र के भीतर, एक अंतर्राष्ट्रीय अपवाह बेसिन के जल के लाभकारी उपयोग के संबंध में उचित और न्यायसंगत हिस्सेदारी का हकदार है।"
  - हालाँकि, हेलसिंकी नियम का दायरा अंतर्राष्ट्रीय अपवाह बेसिन और इससे संबंधित भूजल स्रोतों तक ही सीमित था।
- **जल संसाधन पर बर्लिन नियम (Berlin Rules on Water Resources), 2004:**
  - ये नियम हेलसिंकी नियमों पर अधिभावी हुए और इन्होने राष्ट्रों के भीतर सभी ताज़े जल स्रोतों के उचित प्रबंधन; जलवायु संबंधी मुद्दे; पर्यावरणीय क्षति को न्यूनतम करने; अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति को प्राथमिकता देने और पर्याप्त मात्रा में सुरक्षित पेयजल तक पहुँच के व्यक्ति के अधिकार आदि पर बल दिया।
- **नोट:**
  - सर्वोच्च न्यायालय ने लंबे समय से जारी कावेरी जल विवाद पर कावेरी जल न्यायाधिकरण निर्णय, 2007 से उत्पन्न स्थिति पर वर्ष 2018 में निर्णय देते हुए चैंपियन रूल्स (Campione Rules)—जो सतही जल और भूजल के बीच संपर्क को चिह्नित करता है, के साथ ही हेलसिंकी नियमों और बर्लिन नियमों के सिद्धांतों का सहारा लिया था।

संसाधनों के समान वितरण से किस प्रकार ISRWD का समाधान किया जा सकता है?

- **संसाधनों के न्यायसंगत उपयोग को समझना:**
  - स्थायी और स्वीकार्य समाधान पाने में प्राकृतिक संसाधनों का निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित उपयोग एक महत्त्वपूर्ण कारक होगा।
    - हालाँकि निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित उपयोग की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं है, इस अवधारणा का कार्यान्वयन कठिन सिद्ध हो सकता है।
    - इस तरह के उपयोग को आमतौर पर कई कारकों के मूल्यांकन द्वारा निर्धारित किया जा सकता है, जो संबद्ध क्षेत्रों में इतिहास, वर्तमान परिस्थितियों और सामाजिक स्थितियों पर निर्भर होते हैं।
  - न्यायसंगत हिस्सेदारी इस प्रकार तय की जानी चाहिये कि प्रत्येक पक्ष जल के उपयोग में अधिकतम लाभ प्राप्त करे और दूसरे पक्ष को न्यूनतम हानि पहुँचाए।
- **हेलसिंकी नियमों से सहायता: हेलसिंकी नियमों में विचार किये जाने वाले प्रासंगिक कारकों का विस्तार से वर्णन किया गया है:**
  - कारकों के पहले समूह में प्रत्येक बेसिन राज्य के भीतर जल निकासी क्षेत्र, बेसिन में जल विज्ञान और जलवायु शामिल हैं। वे प्रत्येक राज्य के भीतर बेसिन जल संसाधनों का निर्धारण करेंगे।
  - कारकों का दूसरा समूह प्रत्येक पक्ष द्वारा जल के उपयोग को निर्धारित करता है और पिछले एवं वर्तमान उपयोग तथा प्रत्येक बेसिन राज्य में बेसिन के जल पर निर्भर आबादी को दायरे में लेता है।
  - वैकल्पिक तरीकों से आवश्यकताओं की पूर्ति करने की सापेक्ष लागत के साथ-साथ इन कारकों पर भी विचार किया जाना चाहिये।
- **पर्याप्त जल डेटा:**
  - डेटा की अपर्याप्त उपलब्धता के कारण न्यायसंगत वितरण का वैज्ञानिक निर्धारण कठिन सिद्ध हो सकता है।

- जैसा कि बर्लिन नियम 2004 में अंतर्निहित है, जल संसाधनों से संबंधित जानकारी का उपलब्ध होना न्यायसंगतता के लिये महत्त्वपूर्ण है।
- इस प्रकार, सरकार को सभी प्रासंगिक जल संसाधन डेटा एकत्र करने और उसे सार्वजनिक रूप से उपलब्ध कराने के लिये कदम उठाने चाहिये।

- **अधिकतम लाभ के लिये सर्वोत्तम अभ्यास:**
  - जल का न्यायसंगत उपयोग करते हुए अधितम लाभ प्राप्त करने और दूसरे पक्ष को न्यूनतम हानि पहुँचाने के लिये राज्यों को सर्वोत्तम जल उपयोग अभ्यासों को अपनाने के लिये प्रोत्साहित एवं प्रेरित करने की आवश्यकता है।
    - भूजल के अत्यधिक उपयोग को हतोत्साहित किया जाना चाहिये क्योंकि इससे नदियों के आधार प्रवाह में गिरावट आती है।
  - राज्यों को कृषि, औद्योगिक और घरेलू क्षेत्रों में जल उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
- **स्थानीय लोगों की भागीदारी:**
  - वर्तमान में आम लोगों की (जो अंतिम हितधारक हैं) की विवाद समाधान में कोई भागीदारी नहीं है क्योंकि न्यायाधिकरण केवल वाद में शामिल राज्यों के आधिकारिक प्रतिनिधियों की ही बात सुनते हैं।
    - नागरिक समाज से प्राप्त इनपुट पर पारदर्शी तरीके से विचार करने के लिये एक तंत्र तैयार किया जाना चाहिये।
  - सतत् जल प्रबंधन में सुशासन की स्थिति, लैंगिक अंतराल को समझकर और विशिष्ट बाधाओं को दूर करके सर्वोत्तम रूप से प्राप्त की जा सकती है।

भारत में जाति आधारित हिंसा की निरंतरता तथा निहित चिंताएँ

भारत में जाति-आधारित हिंसा भेदभाव और उत्पीड़न का एक रूप है जो अनुसूचित जाति (SCs) और अनुसूचित जनजाति (STs) से संबंधित लोगों को लक्षित करती है, जो ऐतिहासिक रूप से भारतीय समाज में हाशिए पर स्थित और वंचित समूह हैं।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 जैसे संवैधानिक सुरक्षा उपायों और विशेष कानून के बावजूद, जाति-आधारित अपराध विभिन्न रूपों और क्षेत्रों में घटित होते रहते हैं, जो लाखों लोगों के मौलिक अधिकारों और मानवाधिकारों का उल्लंघन करते हैं।

भारत में जाति-आधारित अपराध की स्थिति

- **भारत में जाति-आधारित अपराध:**
  - जाति-आधारित अपराधों में शारीरिक हमला, हत्या, बलात्कार, यौन उत्पीड़न, यातना, आगजनी, सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक शोषण, भूमि पर कब्जा, जबरन विस्थापन और अपमान एवं हिंसा के अन्य रूप शामिल हो सकते हैं।
  - राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) द्वारा प्रकाशित भारत में अपराध की वार्षिक रिपोर्ट (Annual Crime in India Report) 2019 के अनुसार, वर्ष 2019 में SCs और STs के विरुद्ध अपराधों में क्रमश: 7% और 26% से अधिक की वृद्धि दर्ज की गई।
    - इसी रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि भारत में हर दिन बलात्कार के 88 मामले दर्ज किये जाते हैं। इनमें से कुछ मामले जाति-आधारित अपराधों से संबंधित होते हैं।
- **अपराध दर और आरोप पत्रों में क्षेत्रीय अंतर:**
  - जाति-आधारित अपराध क्षेत्रीय विशिष्टताओं और उनसे लड़ने के लिये विभिन्न राज्यों द्वारा अपनाई गई रणनीतियों में अंतर से भी प्रभावित होते हैं।
  - उदाहरण के लिये, मध्य प्रदेश में वर्ष 2021 में अनुसूचित जाति के विरुद्ध अपराध दर (Crime Rate) सबसे अधिक थी।
    - मध्य प्रदेश में वर्ष 2020 में भी अनुसूचित जाति के विरुद्ध अपराध दर सबसे अधिक थी, जबकि वर्ष 2019 में यह राजस्थान के बाद दूसरे स्थान पर था।
  - लेकिन आँकड़ों से यह भी पता चला कि मध्य प्रदेश में आरोप पत्र (Charge Sheet) दाखिल करने की दर अधिकांश भारतीय राज्यों की तुलना में सबसे अधिक थी।
    - इसका पड़ोसी राज्य राजस्थान इस मामले में काफी पीछे था, जिससे प्रकट होता है कि राज्य पुलिस को बहुत कुछ करने की ज़रूरत है।

भारत में जाति-आधारित अपराधों के कारण

- **जाति व्यवस्था और पदानुक्रमित संरचना:**
  - जाति व्यवस्था—जो वंश और व्यवसाय पर आधारित एक प्राचीन सामाजिक स्तरीकरण है, एक कठोर पदानुक्रमित संरचना का निर्माण करता है जहाँ व्यक्तियों को विशिष्ट जातियों में वर्गीकृत किया जाता है।
  - यह व्यवस्था कथित उच्च जातियों में श्रेष्ठता की भावना और निचली जातियों में हीनता की भावना को बढ़ावा देती है, जिससे निचली जातियों के विरुद्ध भेदभाव और हिंसा को बढ़ावा मिलता है।

- **सामाजिक मानदंड और सांस्कृतिक मान्यताएँ:**
  - सामाजिक मानदंड और सांस्कृतिक मान्यताएँ, जो प्राय: पीढ़ियों से चली आ रही हैं, जाति-आधारित श्रेष्ठता और हीनता की धारणा को पुष्ट करती हैं।
  - ये मानदंड भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण और प्रथाओं का सामान्यीकरण करते हैं, जिससे जाति-आधारित हिंसा से मुक्ति पाना चुनौतीपूर्ण हो जाता है।
- **आर्थिक शोषण:**
  - जाति-आधारित हिंसा कभी-कभी आर्थिक उद्देश्यों से भी प्रेरित होती है। निचली जाति के व्यक्तियों को प्रभुत्वशाली जाति समूहों के हाथों शोषण, बलात् श्रम और आर्थिक उत्पीड़न का शिकार होना पड़ सकता है, जिससे संघर्ष और हिंसा की स्थिति बन सकती है।
- **राजनीतिक सत्ता संघर्ष:**
  - जाति-आधारित हिंसा राजनीतिक सत्ता संघर्ष से भी जुड़ी हुई है। प्रभुत्वशाली जाति समूह अपना प्रभुत्व और प्रभाव बनाए रखने के लिये निचली जाति के व्यक्तियों की राजनीतिक आकांक्षाओं और प्रतिनिधित्व का दमन करने के लिये हिंसा का इस्तेमाल कर सकते हैं।
- **अंतर्जातीय विवाह:**
  - पारंपरिक जाति सीमाओं को चुनौती देने वाले अंतर्जातीय विवाहों को कभी-कभी अपनी जाति की शुद्धता की रक्षा के नाम पर समाज के रूढ़िवादी वर्गों की ओर से शत्रुता और हिंसा का सामना करना पड़ता है।
- **कानूनों के कार्यान्वयन का अभाव:**
  - कानूनी सुरक्षाओं के बावजूद, जाति-आधारित हिंसा के विरुद्ध कानूनों का प्रभावी कार्यान्वयन कुछ भूभागों में चुनौतीपूर्ण बना हुआ है, जिससे अपराधियों के लिये दंडमुक्ति की एक संस्कृति (culture of impunity) का निर्माण होता है।

जाति-आधारित अपराधों के प्रभाव

- **मानवाधिकारों का उल्लंघन:**
  - जाति-आधारित हिंसा जीवन, गरिमा, समानता और स्वतंत्रता के अधिकारों सहित मानवाधिकारों के गंभीर उल्लंघन का कारण बनती है।
  - ऐसी हिंसा के शिकार लोग शारीरिक और मनोवैज्ञानिक क्षति उठाते हैं, जिससे उनके लिये सदमा और दीर्घकालिक भावनात्मक संकट की स्थिति बनती है।
- **सामाजिक विखंडन:**
  - जाति-आधारित हिंसा सामाजिक विभाजन को गहरा करती है और विभिन्न जाति समूहों के बीच शत्रुता पैदा करती है।
  - यह सामाजिक एकता को बाधित करती है और एक सामंजस्यपूर्ण एवं समावेशी समाज के निर्माण के प्रयासों को कमज़ोर करती है।
- **भय और असुरक्षा:**
  - जाति-आधारित हिंसा हाशिए पर स्थित समुदायों के बीच भय और असुरक्षा का माहौल पैदा करती है।
  - हिंसा और भेदभाव का भय 'सेल्फ-सेंसरशिप' को जन्म दे सकता है और प्रभावित व्यक्तियों की अभिव्यक्ति एवं अबाध संचरण की स्वतंत्रता को प्रतिबंधित कर सकता है।
- **विकास और सशक्तीकरण में बाधाएँ:**
  - जाति-आधारित हिंसा हाशिए पर स्थित समुदायों के विकास और सशक्तीकरण को बाधित करती है।
  - यह शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और आर्थिक अवसरों तक उनकी पहुँच को सीमित करती है, उन्हें अपनी पूरी क्षमता को साकार कर सकने से अवरुद्ध करती है।
- **संस्थानों के प्रति विश्वास की हानि:**
  - जाति-आधारित हिंसा राज्य के संस्थानों, कानून प्रवर्तन एजेंसियों और न्याय प्रणाली के प्रति भरोसे का क्षरण करती है। पीड़ित और संबंधित समुदाय आगे और उत्पीड़न के भय से या तंत्र पर भरोसे की कमी के कारण न्याय की मांग करने या घटनाओं की रिपोर्टिंग मे झिझक रख सकते हैं।
- **अंतर्राष्ट्रीय छवि:**
  - जाति-आधारित हिंसा की मौजूदगी एक लोकतांत्रिक और प्रगतिशील राष्ट्र के रूप में भारत की अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।
  - यह वैश्विक समुदाय के बीच जातिगत पहचान के आधार पर भेदभाव और हिंसा की व्यापकता के बारे में चिंता पैदा करता है।

जाति आधारित भेदभाव के विरुद्ध कौन-से सुरक्षा उपाय उपलब्ध हैं?

- **संवैधानिक प्रावधान:**
  - अनुच्छेद 15: राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

- अनुच्छेद 16: राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्म स्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जाएगा।
- अनुच्छेद 335: संघ या किसी राज्य के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों के लिये नियुक्तियाँ करने में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों का प्रशासन की दक्षता बनाए रखने की संगति के अनुसार ध्यान रखा जाएगा।
- अनुच्छेद 330 और अनुच्छेद 332: लोक सभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लिये सीटों का आरक्षण।

- **संवैधानिक निकाय:**
  - राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (National Commission for Scheduled Castes)
  - राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (National Commission for Scheduled Tribes)
- **सांविधिक प्रावधान:**
  - अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) संशोधन अधिनियम, 2018

भारत में जाति-आधारित अपराधों को रोकने और इसके निवारण के संभावित समाधान

- **कानूनों के कार्यान्वयन को सुदृढ़ करना:**
  - अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम 1989; नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955; हाथ से मैला उठाने वाले कर्मियों के नियोजन का प्रतिषेध और उनका पुनर्वास अधिनियम 2013।
- **राज्य संस्थानों को सशक्त करना:**
  - अपराधियों को रोकने, उनकी जाँच करने, मुक़दमा चलाने, दंडित करने और पुनर्वास के लिये पुलिस, न्यायपालिका, शिक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण क्षेत्र को सशक्त करना होगा।
- **जागरूकता और संवेदनशीलता को बढ़ावा देना:**
  - उच्च जातियाँ, निचली जातियाँ, नागरिक समाज संगठन, मीडिया, शिक्षा जगत, धार्मिक नेता और राजनीतिक दल जैसे सभी हितधारकों के बीच जागरूकता और संवेदनशीलता को बढ़ावा देना होगा।
- **अनुसूचित जाति/जनजाति को सशक्त बनाना:**
  - शिक्षा, रोज़गार, भूमि अधिकार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, सामाजिक लामबंदी, कानूनी सहायता और परामर्श सेवाओं के माध्यम से अनुसूचित जाति/जनजाति को सशक्त बनाना होगा।
- **संवाद और मेल-मिलाप को बढ़ावा देना:**
  - विश्वास एवं एकजुटता का निर्माण, रूढ़ियों एवं पूर्वाग्रहों को चुनौती देना और विविधता एवं मानवीय गरिमा के प्रति सम्मान को बढ़ावा देना एक सार्थक पहल होगी।

वन संरक्षण

लोकसभा द्वारा वन संरक्षण (संशोधन) विधेयक (Forest Conservation (Amendment) Bill) पारित किया गया है। यह विधेयक भारतीय वन अधिनियम, 1927 (Indian Forest Act, 1927) या किसी अन्य कानून के तहत संरक्षित क्षेत्रों के दायरे को वन के रूप में घोषित या अधिसूचित भूमि तक सीमित करते हुए कठोर प्रावधान लागू करता है। वनों की पिछली, अधिक उदार परिभाषा से यह विचलन विशाल वन भू-भाग को खतरे में डाल सकता है और अवर्गीकृत वनों को इसके दायरे से बाहर कर सकता है जो भारत के कुल वन आवरण का लगभग 15% हैं। हालाँकि सरकार ने आश्वासन दिया है कि वह वन अधिकार अधिनियम का उल्लंघन नहीं करेगी, लेकिन इस संदर्भ में वन-आश्रित समुदायों के अधिकारों को लेकर चिंताएँ उत्पन्न हुई हैं।

प्रस्तावित संशोधन से संबद्ध समस्याएँ:

- **वन की परिभाषा को सीमित करना:**
  - संशोधन में वन की परिभाषा को 25 अक्टूबर, 1980 के बाद से सरकारी रिकॉर्ड में 'वन' (forest) के रूप में दर्ज क्षेत्रों तक सीमित करने का प्रस्ताव है। यह संशोधन वन माने जाने वाले क्षेत्र के दायरे को पुनः परिभाषित करने का प्रयास करता है, जहाँ निर्दिष्ट तिथि के बाद इस रूप में दर्ज नहीं किये गए क्षेत्रों को अपवर्जित कर देता है।
- **सर्वोच्च न्यायालय के वर्ष 1996 के निर्णय को अमान्य करना:**
  - इस संशोधन का टीएन गोदावर्मन बनाम भारत संघ मामले में सर्वोच्च न्यायालय के वर्ष 1996 के ऐतिहासिक निर्णय को अमान्य करने या इसका उल्लंघन करने के रूप में असर पड़ेगा, जहाँ सरकारी रिकॉर्ड की सीमा से परे सभी प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्रों को शामिल करने के लिये 'वन' के अर्थ का विस्तार किया गया था।

- **विशाल वन क्षेत्रों के लिये कानूनी सुरक्षा की हानि:**
  - इस संशोधन के परिणामस्वरूप हज़ारों वर्ग किलोमीटर वन, जो भारत के कुल वन क्षेत्र का लगभग 27.62% है, अपनी कानूनी सुरक्षा खो देंगे।
  - ये क्षेत्र अभिलेखित वन क्षेत्रों (Recorded Forest Areas) की सीमाओं के बाहर स्थित हैं।

भारत में वन हानि की वर्तमान स्थिति:

- **वन हानि की सीमा:**
  - सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट (CSE) की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में वर्ष 2001 और 2018 के बीच 31,000 वर्ग किलोमीटर से अधिक वन क्षेत्र की भारी हानि हुई है।
  - खनन, बाँध, सड़क और शहरीकरण जैसी विभिन्न विकासात्मक गतिविधियों ने इस व्यापक वन क्षरण में योगदान किया है।
- **भारत की वैश्विक रैंकिंग:**
  - CSE की रिपोर्ट इस बात पर प्रकाश डालती है कि वन हानि के मामले में भारत विश्व के शीर्ष 10 देशों में शामिल है।
  - यह चिंताजनक रैंकिंग इस मुद्दे की गंभीरता और पारिस्थितिक स्थिरता एवं जैव विविधता पर इसके संभावित प्रभावों को उजागर करती है।
- **वन हानि की बढ़ती प्रवृत्तियाँ:**
  - पिछले दो दशकों में वन हानि की स्थिति में चिंताजनक वृद्धि देखी गई है।
  - वनों की कटाई या निर्वनीकरण (deforestation) में यह वृद्धि पारिस्थितिक संतुलन, वन्यजीव पर्यावास और जलवायु परिवर्तन शमन प्रयासों के लिये गंभीर खतरा उत्पन्न करती है।

प्रस्तावित संशोधन के प्रभाव:

- **संरक्षित क्षेत्रों में कमी:** संशोधन के तहत वनों की कठोर परिभाषा से कई ऐसे क्षेत्रों का वनों के रूप में वर्गीकरण समाप्त हो सकता है जिन्हें पहले वन माना जाता था।
- इसके परिणामस्वरूप संरक्षित क्षेत्रों (Protected Areas) की संख्या में कमी आ सकती है, जिससे वनों का विशाल क्षेत्र अतिक्रमण और विकास गतिविधियों के प्रति संवेदनशील हो जाएगा।
- **जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं की हानि:** कम कानूनी संरक्षण के साथ पर्यावास विनाश का उच्च जोखिम उत्पन्न होगा, जिससे जैव विविधता और प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र द्वारा प्रदत्त सेवाओं (जैसे जल सुरक्षा, कार्बन पृथक्करण और जलवायु प्रत्यास्थता) की हानि होगी।
- **पर्यावरणीय क्षरण:** कमज़ोर वन संरक्षण उपाय प्राकृतिक संसाधनों के असंवहनीय दोहन (जैसे लॉगिंग, खनन और अन्य गतिविधियाँ) के द्वार खोल सकते हैं, जिससे पर्यावरणीय क्षरण और पारिस्थितिकी तंत्र की अपरिवर्तनीय क्षति की स्थिति बन सकती है।
- **जलवायु परिवर्तन के प्रभाव:** वन कार्बन पृथक्करण (carbon sequestration) के माध्यम से जलवायु परिवर्तन के शमन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- वन संरक्षण में कमी के परिणामस्वरूप निर्वनीकरण बढ़ सकता है और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन की वृद्धि हो सकती है, जिससे जलवायु परिवर्तन से मुकाबले के भारत के प्रयास प्रभावित होंगे।
- **पारिस्थितिकी संपर्क की हानि:** वनों को परिभाषित करने के कठोर मानदंड पारिस्थितिक संपर्क (ecological connectivity) और वन्यजीव गलियारों (wildlife corridors) को बाधित कर सकते हैं, प्रजातियों की आवाजाही में अवरोध उत्पन्न कर सकते हैं तथा पर्यावासों को और अधिक खंडित कर सकते हैं।
- **संरक्षण प्रयासों में निहित चुनौतियाँ:** पर्यावरणविदों और संरक्षणवादियों को पारिस्थितिकी तंत्र एवं वन्य जीवों की सुरक्षा में चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है, क्योंकि संशोधन की सीमाएँ भेद्य या संवेदनशील क्षेत्रों के संरक्षण के उनके प्रयासों में बाधक बन सकती हैं।
  - नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG) की रिपोर्ट से उजागर हुआ है कि भारत में कई चिड़ियाघर, केंद्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण (Central Zoo Authority) द्वारा निर्धारित मानदंडों एवं मानकों का पालन नहीं कर रहे हैं।
  - अपर्याप्त पशु बाड़ों, बदतर अपशिष्ट प्रबंधन और अपर्याप्त पशु चिकित्सा सुविधाओं जैसी समस्याएँ पशु कल्याण और चिड़ियाघरों के पर्यावरणीय प्रभाव के बारे में चिंता उत्पन्न करती हैं।
- **इकोटूरिज़्म से संबद्ध चुनौतियाँ:** अशोका ट्रस्ट फॉर रिसर्च इन इकोलॉजी एंड द एनवायरनमेंट (ATREE) के एक अध्ययन से पता चला है कि संरक्षित क्षेत्रों में इकोटूरिज़्म गतिविधियों से प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव बढ़ सकता है, स्थानीय समुदायों के साथ संघर्ष की स्थिति बन सकती है, पारंपरिक आजीविका की

नोट :

हानि हो सकती है, सांस्कृतिक क्षरण की स्थिति बन सकती है और वन्यजीवों की दर्शनीयता में कमी आ सकती है।

- ये चुनौतियाँ इकोटूरिज़्म अभ्यासों में उचित विनियमन एवं निरीक्षण की आवश्यकता को रेखांकित करती हैं।

वन-निवासी समुदायों पर प्रभाव:

- **अधिकारों का उल्लंघन:**
  - परियोजनाओं की एक बड़ी संख्या को मंज़ूरी प्रक्रिया से छूट देने का अर्थ होगा कि वन-निवासी समुदायों से अब परामर्श नहीं किया जाएगा।
  - यह अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 (Scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act, 2006) का उल्लंघन होगा, जहाँ स्थानीय समुदायों से उनकी ग्राम सभाओं के माध्यम से स्वतंत्र, पूर्व और सूचित सहमति प्राप्त करना अनिवार्य बनाया गया है।
  - इस कानूनी आवश्यकता की अवहेलना करने से वन-निवासी समुदायों के अधिकार कमज़ोर पड़ेंगे।
- **सामाजिक अशांति और संघर्ष:**
  - उनके अधिकारों से वंचना या उल्लंघन से इन समुदायों के भीतर सामाजिक अशांति और संघर्ष उत्पन्न हो सकता है, क्योंकि वे अपनी भूमि, आजीविका और सांस्कृतिक विरासत की रक्षा करने के लिये प्रयासरत होंगे।
- **वन अधिकारों की अपर्याप्त मान्यता:**
  - जनजातीय कार्य मंत्रालय (MoTA) की एक रिपोर्ट बताती है कि वन अधिकार अधिनियम के तहत वन-निवासी समुदायों द्वारा दायर दावों के एक छोटे प्रतिशत को ही स्वीकृत किया गया।
  - इससे वन संसाधनों पर अपने अधिकारों का प्रयोग करने की उनकी क्षमता में बाधा आती है और उनके लिये असुरक्षा एवं भेद्यता की स्थिति बनती है।
- **निष्कासन और उत्पीड़न:**
  - वन अधिकारों से वंचना या उल्लंघन के कारण वन-निवासी समुदायों के विरुद्ध निष्कासन/बेदखली, विस्थापन, उत्पीड़न और हिंसा के मामले सामने आए हैं।
  - यह पहले से ही कमज़ोर आबादी को हाशिये पर धकेल देता है और उनकी पारंपरिक जीवन शैली को बाधित करता है।

भारत की पारिस्थितिकी सुरक्षा और प्रतिबद्धताओं के लिये संकट:

- **वन संरक्षण अधिनियम की प्रस्तावना के साथ विरोधाभास:**
  - वन संरक्षण अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन वनों और उससे जुड़े मामलों के संरक्षण के इसके घोषित उद्देश्य के विरुद्ध हैं।
  - संरक्षण को बढ़ावा देने के बजाय, इन संशोधनों से वन पारिस्थितिकी तंत्र का क्षरण हो सकता है।
- **राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं का उल्लंघन:**
  - ये संशोधन भारत के पर्यावरण और जैव विविधता की रक्षा करने के राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं के विपरीत हैं।
    - राष्ट्रीय वन नीति (1988), राष्ट्रीय जैव विविधता कार्ययोजना (2008), जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्ययोजना (2008), जैव विविधता अभिसमय (1992), जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (1992) और पेरिस समझौता (2015) जैसी प्रतिबद्धताएँ प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण तथा सतत प्रबंधन को प्राथमिकता देती हैं।
- **पारिस्थितिकी सुरक्षा और राष्ट्रीय सुरक्षा पर प्रभाव:**
  - प्रस्तावित संशोधन भारत की प्राकृतिक पूंजी को नष्ट करके उसकी पारिस्थितिकी सुरक्षा के लिये जोखिम उत्पन्न कर सकते हैं।
  - इससे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति प्रत्यास्थता (resilience) कम हो सकती है और सामाजिक सद्भाव खतरे में पड़ सकता है।
  - पारिस्थितिक संरक्षण की उपेक्षा से राष्ट्रीय सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं पर व्यापक प्रभाव पड़ सकता है।
- **जैव विविधता के लिये खतरा:**
  - भारत को वैश्विक स्तर पर 17 विशाल विविधता वाले देशों (megadiverse countries) में से एक माना जाता है, जो विश्व की लगभग 8% जैव विविधता रखता है।
    - देश की समृद्ध जैव विविधता इसकी पारिस्थितिकी प्रत्यास्थता में योगदान देती है और यह एक मूल्यवान वैश्विक विरासत है।
  - जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के लिये अंतर-सरकारी विज्ञान-नीति मंच (Intergovernmental Science-Policy Platform on

नोट :

Biodiversity and Ecosystem Services- IPBES) की रिपोर्ट उजागर करती है कि भारत जैव विविधता संकट का सामना कर रहा है, जहाँ इसकी लगभग 25% प्रजातियाँ पर्यावास की हानि, अत्यधिक दोहन, प्रदूषण, आक्रामक प्रजातियों, जलवायु परिवर्तन और मानव-वन्यजीव संघर्ष जैसे विभिन्न घटकों के कारण विलुप्त होने के खतरे का सामना कर रही हैं।

प्रस्तावित संशोधन के लिये आगे की राह:

- **संरक्षण और सतत प्रबंधन:**
    - सरकार को वन संरक्षण को कमज़ोर करने के बजाय मौजूदा कानूनों और नीतियों के प्रभावी कार्यान्वयन एवं प्रवर्तन पर ध्यान देना चाहिये।
        - राष्ट्रीय हरित अधिकरण (National Green Tribunal), राष्ट्रीय जैव विविधता प्राधिकरण (National Biodiversity Authority) और वन सलाहकार समिति (Forest Advisory Committee) जैसे संस्थागत एवं नियामक तंत्र को सुदृढ़ करना महत्त्वपूर्ण है।
- **वैज्ञानिक दृष्टिकोण:**
    - रिमोट सेंसिंग, भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS), उपग्रह इमेजरी, ड्रोन और नागरिक विज्ञान (citizen science) जैसे आधुनिक साधनों का उपयोग कर पर्यावरण मूल्यांकन एवं निगरानी के लिये वैज्ञानिक और तकनीकी क्षमता को बढ़ाना, सूचना-संपन्न निर्णयन तथा संरक्षण प्रयासों में सहायता कर सकता है।
- **सामाजिक सहभागिता:**
    - वन और वन्यजीव प्रबंधन के लिये सहभागितापूर्ण और समुदाय-आधारित दृष्टिकोण को बढ़ावा देना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।
    - निर्णयन, योजना निर्माण और लाभ-साझाकरण में स्थानीय समुदायों को शामिल करने से उनके अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित होगी और उनमें संरक्षण के प्रति स्वामित्व एवं उत्तरदायित्व की भावना का प्रसार होगा।
- **एकीकृत दृष्टिकोण:**
    - संरक्षण और विकास के लिये एकीकृत एवं लैंडस्केप-लेवल दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है।
    - विभिन्न भूमि उपयोगों के बीच पारिस्थितिकी संपर्क और सुसंगतता सुनिश्चित करते हुए महत्त्वपूर्ण वन्यजीव पर्यावासों, गलियारों और बफ़र ज़ोन की पहचान करना एवं उन्हें प्राथमिकता देना पारिस्थितिकी संरक्षण के साथ विकासात्मक आवश्यकताओं को संतुलित कर सकता है।

दृष्टि एडिटोरियल अभ्यास प्रश्न

1. राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार (संशोधन) अध्यादेश, 2023 विवाद और वाद का विषय रहा है। दिल्ली के शासन के लिये इस अध्यादेश के संवैधानिक और प्रशासनिक निहितार्थों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।
2. इलेक्ट्रॉनिक्स सिस्टम डिज़ाइन एंड मैन्युफैक्चरिंग (ESDM) क्षेत्र में वैश्विक विनिर्माण केंद्र के रूप में उभरने की भारत की संभावनाओं और विद्यमान प्रमुख चुनौतियों की चर्चा कीजिये।
3. भारतीय अर्थव्यवस्था को अब तक जिन तमाम बाधाओं का सामना करना पड़ा है, उसके बावजूद भारत चीन की अर्थव्यवस्था की बराबरी कैसे कर सकता है?
4. भारतीय राज्यों ने कोविड-19 महामारी के बाद उल्लेखनीय राजकोषीय समेकन प्रदर्शित किया है लेकिन उन्हें अभी भी अपने राजस्व घाटे को नियंत्रित करने में राजकोषीय चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। भारतीय राज्यों के राजस्व घाटे के कारणों और इसके परिणामों की चर्चा कीजिये।
5. भारत में ग्रामीण क्षेत्रों के समक्ष विद्यमान जल संबंधी चुनौतियों को हल करने में 'हर घर जल' योजना किस सीमा तक प्रभावी रही है? संवहनीय जल कनेक्टिविटी सुनिश्चित करने के लिये इस योजना के तहत कौन-सी प्रमुख रणनीतियाँ अपनाई गई हैं?
6. युवा आबादी के माध्यम से भारत की क्षमता को उजागर करने में विद्यमान चुनौतियों और समाधानों की चर्चा कीजिये।
7. रुपए का अंतर्राष्ट्रीयकरण इस क्षेत्र और उससे परे भारत के आर्थिक एवं रणनीतिक हितों को कैसे प्रभावित करता है?
8. "राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन भारत के विकास के प्राथमिकता क्षेत्रों को संबोधित करने के लिये बहु-संस्थागत, अंत:विषयक अनुसंधान और वित्तपोषण को बढ़ावा देगा।" टिप्पणी कीजिये।
9. उत्तर भारत में हाल में हुई भारी वर्षा और बाढ़ आने के कारणों एवं प्रभावों का विश्लेषण कीजिये।
10. भारत-फ्राँस रणनीतिक साझेदारी की 25वीं वर्षगांठ के संदर्भ में यूरोपीय सुरक्षा के साथ भारत की संलग्नता के महत्त्व की चर्चा कीजिये। इस संबंध में भारत के समक्ष कौन-सी चुनौतियाँ और अवसर मौजूद हैं?
11. अपने कार्य-दायित्व को पूरा करने में (विशेष रूप से एक गतिशील और जटिल राजनीतिक अर्थव्यवस्था वातावरण के संदर्भ में) वित्त आयोगों के समक्ष विद्यमान चुनौतियों एवं सीमाओं की चर्चा कीजिये।
12. वैश्विक बाज़ार की अनिश्चितताओं को देखते हुए, स्वच्छ ऊर्जा की ओर त्वरित संक्रमण कर सकने की भारत की क्षमता पर महत्त्वपूर्ण खनिजों तक सीमित पहुँच के संभावित प्रभावों की चर्चा कीजिये।
13. संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा से संबद्ध प्रमुख चुनौतियाँ कौन-सी हैं और एक लोकतांत्रिक समाज में इसके प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिये इन्हें कैसे संबोधित किया जा सकता है?
14. भारत में बाढ़ प्रबंधन में संरचनात्मक एवं गैर-संरचनात्मक उपायों की भूमिका का मूल्यांकन कीजिये। जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में जल संरक्षण से जुड़ी चुनौतियों और अवसरों की चर्चा कीजिये।
15. भारत की राजनीतिक विविधता और लोकतंत्र के संदर्भ में अप्रूवल वोटिंग के गुण-दोषों का मूल्यांकन कीजिये।
16. प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (PACS) और किसान उत्पादक संगठनों (FPOs) के एकीकरण से एक ऐसे मॉडल का निर्माण हो सकता है जिससे दोनों निकायों की क्षमता का पूरा लाभ मिलने के साथ किसानों की समस्याओं को हल करने हेतु तार्किक समाधान प्राप्त होंगे। आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिये।
17. भारत को देश से गरीबी मिटाने के लिये उच्चतर विकास दर की आवश्यकता है। इस तथ्य के आलोक में गरीबी के कारणों की चर्चा कीजिये और इसे दूर करने के उपाय सुझाइए।
18. "फ्राँस, जिसने स्वतंत्र विदेश नीति को महत्त्व दिया है, एक अनिश्चित युग के लिये नए गठबंधन के निर्माण में भारत का स्वाभाविक भागीदार है।" टिप्पणी कीजिये।

नोट :

19. चूँकि भारत अपनी अर्थव्यवस्था में विनिर्माण की हिस्सेदारी को बढ़ाने के लिये प्रयासरत है, उसे ऐसे नीतिगत सुधारों के माध्यम से खनिज उत्पादन का विस्तार करना चाहिये जो भारत की खनन क्षमता के अन्वेषण में बेहतर सहायता प्रदान करता हो। चर्चा कीजिये।
20. भारत, वैश्विक व्यापार में रुपए की भूमिका को बढ़ाने के साथ अमेरिकी डॉलर पर अपनी निर्भरता को किस प्रकार कम कर सकता है?
21. भारत में महिला आयोगों की कार्यप्रणाली और प्रभावशीलता का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिये।
22. विद्यमान विभिन्न चुनौतियों से निपटने के सामूहिक प्रयासों में चक्रीय अर्थव्यवस्था एक प्रमुख समाधान के रूप में उभरी है। टिप्पणी कीजिये।
23. अंतर्राज्यीय जल विवादों को सुलझाने में विद्यमान प्रमुख चुनौतियों की चर्चा करते हुए इस मुद्दे के समाधान हेतु जल संसाधनों के न्यायसंगत उपयोग के महत्त्व का आकलन कीजिये।
24. जाति-आधारित हिंसा एक गंभीर सामाजिक समस्या है जो पीड़ितों के संवैधानिक अधिकारों और मानवीय गरिमा का उल्लंघन करती है। भारत में जाति-आधारित हिंसा के कारणों और परिणामों की चर्चा कीजिये।
25. वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 में प्रस्तावित संशोधनों के संभावित प्रभावों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।

दृष्टि The Vision

नोट :